

बड़ा आदमी

यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र'

राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली

भयंकर आग की लपटों से पूर्व की दिशा जल उठी। रेलगाड़ी विशाल अजगर की तरह पृथ्वी पर चल रही थी। उसकी गति इतनी धीमी थी मानो वह बड़ा अजगर अपने पेट में अनेकों इन्सानों को समाविष्ट किए हुए रेंगता हुआ चल रहा हो। कारण स्पष्ट था क्योंकि गाड़ी गोल घुमाव घूम रही थी। अब मेरा मुख उस आग के सम्मुख आ गया था। मेरी कल्पना एक आदरसूचक और पवित्र वाक्य की रचना कर उठी—'यह आग हमारे सूर्य भगवान हैं हम सबको जीवन देनेवाले। कई यात्री मेरी ओर देखने लगे।

गाड़ी कुछ दूर और चली। अब सूर्य का गोला क्षितिज पर तेजी से घूमता हुआ दिखलाई पड़ने लगा था। उसके समीप विस्तृत अरुण आभा में उड़ते बादलों के टुकड़े किनारों से एक हल्का ताम्र-पीत प्रभाव देने लग गए थे। वह नैसर्गिक दृश्य अन्तराल की गहराइयों में छिपी मेरी उदासी और घुटन को दूर करके मुझमें अलौकिक ताज़गी व आनन्द भर रहा था। मैंने खिड़की के बाहर अपनी गर्दन निकालकर दो-तीन लम्बे सांस लिए और पुनः अपनी सीट : बैठ गया।

गाड़ी चल रही थी।

फर्स्ट क्लास का कम्पार्टमेंट। संयोग समझिए, अभी उसमें मेरे सिवाय ाई नहीं था। थोड़ी देर पहले उसमें मेरे साथ कोई मजिस्ट्रेट महोदय थे। बड़े दुखी और परेशान। मितभाषी और साधारण बोलचाल में भी उनका न कुम्हलाना था। उनका नौकर सर्वेन्ट्स कम्पार्टमेंट में था। हर स्टेशन पर ाकर अपने स्वामी को देखता और चला जाता था। वह एक अत्यन्त बूढ़ा सा आदमी था। उसकी धंसी-धंसी आँखों में आयु की दीप्ति और गहराई ों थी। वह भी अपने स्वामी की तरह बहुत कम बोलता था।

मजिस्ट्रेट साहब मेरे सामने ही डिब्बे में आए थे। बहुत देर तक वे अपने

कागजों में तन्मय रहे। मैंने भी कोई विशेष दिलचस्पी नहीं दिखाई। अन्त में उन्होंने मुझसे एक समाचारपत्र माँगा। यह पत्र फिल्मी मासिक था। रेल के सफर में मैं समझता हूँ कि साधारणतया लोग जासूसी तथा फिल्मी पत्र ही पढ़ना अधिक पसंद करते हैं। मैंने उन्हें एक पत्र दे दिया। वे पत्र को पढ़ने लगे। हठात् उनकी दृष्टि फिल्मी पत्र में छपी एक घटना पर पड़ी। उनके चेहरे पर विस्मय की रेखाएं तैर गयीं। वे कुछ देर तक उसे पढ़ते रहे। अन्त में मुझसे बोले "क्यों भाई साहब आप इस न्यूज को कहाँ तक निष्पक्ष समझते हैं?"

मैंने उस न्यूज को पढ़ रखा था। अपने-आपको गंभीर बनाकर, क्योंकि मैं उन महाशय के प्रभावशाली व्यक्तित्व से आतंकित नहीं होना चाहता था बोला 'यह न्यूज सही है।"

"इसकी सम्पादकी कहाँ तक निष्पक्ष है।"

"मतलब?"

"मतलब यह है सम्पादक ने लिखा है कि नारी-जाति की यह दुर्दशा असह्य है।"

"सही है। किसी नारी का चाहे वह आपकी पत्नी ही क्यों न हो आप बीसवीं सदी में एक व्यापारिक वस्तु की तरह उपयोग नहीं कर सकते। पत्नी को जुए में हार जाना देश और समाज के लिए कलंक है।"

"मुझे इस तरह की सम्पादकी से चिढ़ है। वस्तुतः सारे पत्रकार, सारे साहित्यकार, सारे राजनीतिक नेता नारी-जाति के नाम पर सबको बरगलाया करते हैं। वस्तुतः नारी जैसी भयंकर कोई भी वस्तु नहीं होती। लगातार नारी के शोषण के नारों ने हमें निष्पक्ष व तटस्थ रूप से यह सोचने नहीं दिया है कि वह पुरुषों के द्वारा कहाँ तक स्वतन्त्र और सम्माननीय रही है। हमने उन्हें कितना आदर दिया है। पर आज नारी जाति के उत्थान को लेकर लिखना या भाषण देना एक आम फैशन हो गया है हालांकि इसमें किसी स्थायी प्रभाव की कोई गुंजाइश नहीं दिखती है।"—कहकर वे मौन हो गए। उनकी पलकों की छाया में हल्का-हल्का दर्द तैर उठा। वे अपनी पलकों को बन्द करके कुछ दे

तक जड़वत् बैठ रहे।

गाड़ी भाग रही थी द्रुतगति से।

"मैं यह नहीं मानता। यहां सचमुच नारी का अत्यन्त आदर हुआ है। यहां नारी का अपना स्वतंत्र व्यक्तित्व व अस्तित्व कुछ भी नहीं रहा है। वह केवल एक वस्तु है। एक गुलाम है। एक बच्चा पैदा करनेवाली मशीन है।"

मेरा इतना कहना था कि वे मेरी ओर उन्मुख हुए। उनके चेहरे पर क्रोधजनित व्यथा के धुंधले-धुंधले आवरण छा गए। आन्तरिक व्यथा अधिक होने के कारण वे कुछ देर तक बोल नहीं सके। अन्त में वे कहने लगे "औरत सांपिन है, जहरीला तीर है, वह एक ऐसा पुष्प है जिसकी सुगन्ध में मृत्यु छिपी रहती है। वह ऐसा चन्दन का वृक्ष है, जिसके स्पर्श-मात्र से उसमें लिपटे असंख्य नाग डसने लगते हैं।"

मैं नारी के प्रति उनके इतने निम्न, हेय व एकपक्षीय विचार सुनकर क्रोध से भर उठा। कुछ कहना चाहता था कि वे फिर बोले "आप अनुभवहीन हैं। आपमें जीवन का तजुर्बा नहीं है। आप सदा अखबारों व कहानियों में नारी के शोषण की घटनाएं पढ़ते हैं और समझने लगते हैं कि नारी का यहां शोषण होता है। नारी का यहां कोई सम्मान नहीं है। पर नारी वास्तव में बहुत ही कपटी और खतरनाक है। मैं आपको एक किस्सा सुनाता हूं।"

और वे मेरे उत्तर की प्रतीक्षा किए बिना ही कहने लगे "मेरी जानपहचान में एक वकील थे। नामी वकील। अत्यन्त प्रभुत्वसम्पन्न। उनकी पहुंच बड़ी-बड़ी जगह थी। काफी अच्छी प्रैक्टिस थी। दो-तीन हजार रुपए महीना तो कमा लेते थे। वे वकील भी फौजदारी के थे। अतः लोग वैसे ही उनसे घबराते थे। और तो और, वे झूठे-झूठे किस्से बनाकर अपने विरोधी को परेशान करते रहते थे। इसके साथ-साथ वे अत्यन्त कठोर परिश्रमी, नियमबद्ध एवं समयदर्शी थे। रात-रात-भर किताबी कीड़ों की तरह कानून की धाराओं में मग्न रहते थे। विवाहित परिवार और बालिग पुत्र थे पर उनका [illegible] मुवक्किलों में मशगूल रहता था। एक [illegible] मशीन [illegible] हुआ उनमें [illegible]

और वे अवश्य ही चंद दिनों में भारत के श्रेष्ठ वकीलों की पंक्ति में आ जाते पर---।" वे कहते-कहते चुप हो गए। उनकी चुप्पी मेरी जिज्ञासा को बढ़ा गई। बात ऐसी जगह पर उन्होंने छोड़ी थी कि मेरी उत्कंठा जाग उठी। मैंने उनकी ओर प्रश्न-भरी दृष्टि से देखा। वे मेरी दृष्टि के मर्म को समझ गए और सिगरेट जलाकर बोले "पर उनकी तमाम जिन्दगी अपनी पत्नी के कारण बरबाद हो गई। वे सिगरेट का धुआं ऊपर की ओर छोड़ रहे थे। मुझे उनपर गुस्सा आ रहा था। गुस्सा इसलिए आ रहा था कि उन्होंने मुझे सिगरेट ऑफर नहीं की। 'यह कैसा मजिस्ट्रेट है?' मैंने मन ही मन कहा और मैं उनकी ओर अनिमेष दृष्टि से देखता रहा।

वे बोले "आप कहते हैं ये स्त्रियां अच्छी होती हैं इनका आदर नहीं हुआ इनका यहां सम्मान नहीं हुआ है। पर मैं आपको पूछता हूं कि एक स्त्री जिसका पति रात-दिन अपनी पत्नी की प्रसन्नता के लिए काम करता है जो एक बच्चे की मां है, जिसका महीने-भर का बाजार खर्च लगभग हजार रुपये है वह पत्नी अपने पति को धोखा देकर पर-पुरुष से रंगरेलियां मनाती है—मैं कहता हूं कि मैं यह नहीं सह सकता सह क्या कह भी नहीं सकता उसकी कथा। लेकिन मैं आपको अवश्य कहूंगा। इसलिए कहूंगा क्योंकि आप भावना में बह गए हैं। आपने एकपक्षीय निर्णय ले लिया है। उस वकील साहब की पत्नी इतनी सम्पन्नता के बावजूद एक युवक से प्यार कर बैठी। उस युवक से जो रेलवे का एक अदना अधिकारी था और स्त्रियों को फुसलाने के हुनर में पारंगत प्रवीण था। वकील की पत्नी ने उसे अपना धर्म-भाई बनाया। क्योंकि भाई बनाए बिना वह उसके साथ स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं आ-जा सकती थी और वह घृणित कर्म भी नहीं कर सकती थी। इसमें एक यह भी कारण था कि वकील साहब की उदार प्रकृति से सभी लोग परिचित थे और उनसे अच्छी अच्छी हस्तियां भी भय खाती थीं। तो वह अपने तथाकथित भाई के साथ गुलछर्रे उड़ाने लगी। एक दिन वकील साहब को भी इस बात का रहस्य मालूम हो गया और उन्होंने अपनी पत्नी को डांटा। पत्नी जिसे मैं कुलटा से अच्छी संज्ञा नहीं दे सकता जिसकी स्मृति-मात्र से मेरी रग रग में पीड़ादायक

घृणा का संचार होता है, वह पत्नी स्पष्ट शब्दों में बोली मैं इससे प्यार करती हूँ। अगर आपने अधिक विरोध-अवरोध किया तो मैं आपको सदा-सदा के लिए छोड़ दूँगी।

"वह भी एक नारी है। आप नारी-मात्र की प्रशंसा करते हैं, जिसके शोषण की बड़ी-बड़ी कहानियाँ लिखी जाती हैं। क्या वह वकील-पत्नी जो नारी भी है एक पिशाचिनी से कम है? आप जानते हैं कि इसके बाद उस वकील साहब का क्या हुआ? मस्तिष्क का संतुलन बिगड़ गया और वे पागलों की तरह कभी करुण विलाप करते रहे और कभी तीखा प्रलाप।   जब आप उसे देख लेते तो कराह उठते। वह चाहता तो उसे छोड़ भी देता पर वह अपनी पत्नी को खूब चाहता था अपने-आपसे भी अधिक।

मैंने उनसे साफ कह दिया "मैं आपकी बातचीत में तनिक भी दिलचस्पी नहीं ले सकता हूँ। मैं नारी को पवित्र ज्योतिमयी अरुणा मानकर चलता हूँ। और आपको बता सकता हूँ कि इसमें भी उसी वकील का कोई दोष है। शायद वे क्लीव हों।"

"नहीं!" मजिस्ट्रेट साहब चौंक-से पड़े।

"उन्होंने कभी भी उसके भाव-मन को संतुष्ट करने की चेष्टा अचेष्टा नहीं की होगी। प्रायः देखा गया है कि वे वकील लोग अपने धंधे में इतने खो जाते हैं कि उन्हें जीवन के दूसरे कार्य-कलापों की तरफ रुचि भी नहीं होती।" मैंने पूछा।

'ऐसा आप कैसे कह सकते हैं?"

'अनुमान है।"

"मैं आपको प्रमाणित रूप से कह रहा हूँ। सप्ताह में कई रातें ऐसी उल्लास पूर्ण शामों में गुजरती थीं कि वे दोनों पत्नी-पति अपने को फरिश्तों से कम सुखी नहीं समझते थे।

"पर आप यह कैसे कह सकते हैं? मैंने भी शब्दों पर जोर देकर कहा।

मजिस्ट्रेट साहब एकदम झल्ला उठे। उनके ऊपर के दांतों ने निचले होंठ को काट लिया। उनका अंग-अंग कांप उठा। बोले "मैं आपको सही कहता

हूं कि असीम पौरुषमय हैं। वे बेचारे अभी मरे हैं। उनका जीवन एक पत्नी के कारण नष्ट हो गया। वह एक जन्मजात कुलटा थी। उसे यह अवगुण अपनी मां से मिला था।"

"मैं नहीं मानता।"

मजिस्ट्रेट साहब बीच में ही तीव्र स्वर में बोले "आप मेरी बात के नायक को देखना चाहते हैं तो लीजिए" ।" वे एकदम चुप हो गए। मैं उन्हें विस्मित-सा देखने लगा। मेरी आंखें उनकी आंखों में निहित उस अधूरे वाक्य की पूर्णता ढूंढने लगी। उनके अन्तस् के भाव उनकी व्यथापूरित आंखों में इस स्पष्टता से दीख पड़े कि मुझे लगा कि अपनी बात के नायक वे खुद हैं क्योंकि प्राय: मनुष्य अपने जीवन के बदनामीसूचक घटिया किस्से को दूसरों पर आरोपित करके ही कहता है। कहने से उसके हृदय का बोझ कम होता है और उसे एक विचित्र आनन्द की अनुभूति होती है जिसका अहसास उसे नहीं होता। अक्सर हम किसीके प्रति समवेदना प्रदर्शित करते हैं तब हमारी आंखें सजल हो उठती हैं कंठ रुद्ध हो जाता है और हम बार-बार दुःख कष्ट और क्षति जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं पर उन सबके अन्तस् की ध्वनि में एक अनिर्वचनीय आनंद झनझनाता रहता है। तब लगता है अभिनय से दूर स्वाभाविक रूप से किए किसी भी कार्य में चाहे वह सुख का हो या दुःख का एक अनूठा आनंद ही मिलता है और इस आनंद का स्रोत ही हमारे जीवन की वास्तविकता है। यही वास्तविकता उद्विग्न और आकुल मजिस्ट्रेट साहब की आंखों में थी।

मुझे अपने पर एकाग्र हुए देख वे घबरा उठे और जैसे वे अपनी भूल का सुधार करते हुए बोले "मैं आपको अपनी बात के बदनसीब नायक को भी दिखा देता। पर क्या करूं मैं और आप अभी इसके लिए तत्पर नहीं हो सकते। अभी मैं भी ।"

न मालूम वे क्या कहना चाहते थे मुझे पता नहीं। पर मैं अपने-आपमें खो गया। कोई स्टेशन आनेवाला था। गाड़ी की रफ्तार धीमी हो गई और इंजन बार-बार सीटी दे रहा था। पता नहीं मेरे मन में बार-बार यह प्रश्न क्यों उठ रहा था कि हाकिम ही उस कथा के नायक नहीं हैं। उनकी परेशान आंखें

की मुस्कराहट और उनका आक्रोश उनकी नारी के प्रति तीव्र गहरी घृणा
उन्हें देखता रहा। वे मेरी दृष्टि को अधिक देर तक नहीं सह सके। कांप-कांप
स गए। कदाचित् वे समझ गए होंगे कि मैं उनकी कहानी की मूल प्रेरणा को
समझ गया हूं। वे एक बार भड़ककर बोले "आप मुझे इस तरह क्यों घूर
रहे हैं?"

मैं निरुत्तर रहा। उनकी गम्भीर आवाज के कारण मैं क्षण भर विमूढ़ रहा। तभी वे तनिक हताश कोमलता से अपने हाथ से मुझे आगाह करते हुए बोले "आपको अब विश्वास हो गया होगा कि स्त्रियां सचमुच सर्पिणी होती हैं।"

और मैंने सम्मोहित प्राणी की तरह सिर हिलाकर कहा "जी।"

वे प्रसन्न हो गए और स्टेशन के आते ही उतर गए। मैं कुछ देर तक उनके बारे में सोचता रहा। हमें दूसरों के दुख और परेशानी की कहानियों को सुनकर मन में आनंद की अनुभूति होती है। मैं बार-बार उस मजिस्ट्रेट की इस कथा को लेकर मन ही मन आधारहीन प्रश्न बनाता रहा और उसके उत्तर भी मैं अपने आपको विश्लेषणात्मक ढंग से देता रहा। पर जैसे ही गाड़ी रवाना हुई, वैसे ही डिब्बे में गहरी घोर एकांत छा गया और उस एकांत में मैं पुनः अपनी यात्रा के कारण पर विचार करने लगा।

मैं आपको पहले अपने बारे में बता देना चाहता हूं। कि मुझे शुरू से ही जासूसी करने का बड़ा शौक था। कोई भी घटना क्यों न हो मैं उसपर लेख के जासूसी उपन्यासों के आधारों पर खोज आरम्भ कर देता था। नतीजा कुछ न निकले पर फिर भी मेरे प्रयत्न जारी रहते थे।

जब मैंने स्कूली शिक्षा समाप्त कर दी तब मैंने अपने पिताजी से अपन
यह हार्दिक जासूस बनने की इच्छा जाहिर की। वे आग-बबूला हो गए औ
उन्होंने मुझे कई जासूसों की दुखांत घटनाएं सुना दीं। मैं भी डर गया।
मैं चाहता था कुछ इसी तरह का काम। ...तब मैंने एक साप्ताहिक
संवाददाता होने का निश्चय किया। क्योंकि एक संवाददाता का कार्य अग
अपने कर्तव्य के प्रति ईमानदार है तो एक जासूस से कम नहीं है। ये

हूँ कि वकील पौरुषमय हैं। वे बेचारे छले गए हैं। उनका जीवन एक पत्नी के कारण नष्ट हो गया। वह एक जन्मजात कुलटा थी। उसे वह अवगुण अपनी माँ से मिला था।"

"मैं नहीं मानता।"

मजिस्ट्रेट साहब बीच में ही तीव्र स्वर में बोले, "आप मेरी बात के नायक को देखना चाहते हैं तो लीजिए ...।" वे एकदम चुप हो गए। मैं उन्हें विस्मित-सा देखने लगा। मेरी आँखें उनकी आँखों में निहित उस अधूरे वाक्य की पूर्णता ढूँढने लगीं। उनके अन्तस् के भाव उनकी व्यथापूरित आँखों में इस स्पष्टता से दीख पड़े कि मुझे लगा कि अपनी बात के नायक वे खुद हैं, क्योंकि प्रायः मनुष्य अपने जीवन के बदनामीसूचक घटिया किस्सों को दूसरों पर आरोपित करके ही कहता है। कहने से उसके हृदय का बोझ कम होता है और उसे एक विचित्र आनंद की अनुभूति होती है जिसका अहसास उसे नहीं होता। अक्सर हम किसीके प्रति समवेदना प्रदर्शित करते हैं, तब हमारी आँखें सजल हो उठती हैं, कंठ रुद्ध हो जाता है और हम बार-बार दुःख, कष्ट और क्षति जैसे शब्दों का प्रयोग करते हैं पर उन सबके अन्तस् की ध्वनि में एक अनिर्वचनीय आनंद उमड़ता रहता है। तब लगता है अभिनय से दूर स्वाभाविक रूप से किए किसी भी कार्य में, चाहे वह सुख का हो या दुःख का, एक अनूठा आनंद ही मिलता है और इस आनंद का स्रोत ही हमारे जीवन की वास्तविकता है। यही वास्तविकता उद्विग्न और आकुल मजिस्ट्रेट साहब की आँखों में थी।

मुझे अपने पर एकाग्र हुए देख वे घबरा उठे और जैसे वे अपनी भूल का सुधार करते हुए बोले, "मैं आपको अपनी बात के बदनसीब नायक को भी दिखा देता। पर क्या करूँ, मैं और आप अभी इसके लिए तत्पर नहीं हो सकते। अभी मैं भी ...।"

न मालूम वे क्या कहना चाहे, मुझे पता नहीं। पर मैं अपने-आपमें खो गया। कोई स्टेशन आनेवाला था। गाड़ी की रफ्तार धीमी हो गई और इंजन बार-बार सीटी दे रहा था। पता नहीं मेरे मन में बार-बार यह प्रश्न क्यों उठ रहा था कि हो न हो, उस कथा के नायक यही हैं। उनकी परेशान आँखें

उनकी झुंझलाहट और उनका आक्रोश उनकी नारी के प्रति तीव्र गहरी घृणा
मैं उन्हें देखता रहा। वे मेरी दृष्टि को अधिक देर तक नहीं सह सके। कांप-कांप
से गए। कदाचित् वे समझ गए होंगे कि मैं उनकी कहानी की मूल प्रेरणा को
समझ गया हूं। वे एक बार कड़ककर बोले "आप मुझे इस तरह क्यों घूर
रहे हैं?

मैं निरुत्तर रहा। उनकी गम्भीर आवाज के कारण मैं क्षण-भर विमूढ़
रहा। तभी वे तनिक हताश कोमलता से अपने हाथ से मुझे आगाह करते
हुए बोले "आपको अब विश्वास हो गया होगा कि स्त्रियां सचमुच सांपिनें
होती हैं।

और मैंने सम्मोहित प्राणी की तरह सिर हिलाकर कहा "जी।
वे प्रसन्न हो गए और स्टेशन के आते ही उतर गए। मैं कुछ देर तक उनके
बारे में सोचता रहा। हमें दूसरों के दुःख और परेशानी की कहानियों को सुनकर
न आनंद की अनुभूति होती है। मैं बार-बार उस मजिस्ट्रेट की इस कथा को
लेकर मन ही मन आधारहीन प्रश्न बनाता रहा और उसके उत्तर भी मैं अपने
आपको विश्लेषणात्मक ढंग से देता रहा। पर जैसे ही गाड़ी रवाना हुई, वैसे
ही डिब्बे में वही घोर एकांत छा गया और उस एकांत में मैं पुन: अपनी यात्रा
के कारण पर विचार करने लगा।

मैं आपको पहले अपने बारे में बता देना चाहता हूं। कि मुझे शुरू से ही
जासूसी करने का बड़ा शौक था। कोई भी घटना क्यों न हो मैं उसपर शैक्ष के
जासूसी उपन्यासों के आधारों पर खोज आरम्भ कर देता था। नतीजा कुछ
न निकलने पर फिर भी मेरे प्रयत्न जारी रहते थे।

जब मैंने स्कूली शिक्षा समाप्त कर दी तब मैंने अपने पिताजी से अपनी
यह हार्दिक जासूस बनने की इच्छा जाहिर की। वे आग-बबूला हो गए और
उन्होंने मुझे कई जासूसों की दुःखांत घटनाएं सुना दीं। मैं भी डर गया। पर
मैं चाहता था कुछ इसी तरह का जॉब। —तब मैंने एक साप्ताहिक का
संवाददाता होने का निश्चय किया। क्योंकि एक संवाददाता का कार्य अगर वह
अपने कर्तव्य के प्रति ईमानदार है तो एक जासूस से कम नहीं है। छोटी से

छोटी बात के सत्य को पा जाना कोई खेल नहीं हो सकता। तो मैं संवाददाता हो गया और आज तक हूं। ऐसा संवाददाता जिसका मुख्य पेशा सनसनीखेज घटनाओं की तह में जाना होता है। अखबार खूब बिके और मेरा व्यापारी मालिक मुझसे खुश रहे। साथ ही मुझे अपने हुनर में श्रेष्ठ नाम मिले यही मेरा लक्ष्य है।

और आज भी मैं एक विचित्र चरित्र के जीवन की सही-सही जानकारी पाने के लिए जा रहा हूं। मेरा एक अन्यतम मित्र अपने घर से एकाएक पलायन कर गया। उसने एक पत्र म अपने-आपको खत्म करने की घोषणा भी की है। पर कारण अभी तक अज्ञात है। दोस्त की मृत्यु की कल्पना के कारण मेरा मन असीम व्यथा से भर आया है और मैं अपने-आपको व्यवस्थित करके सोच रहा हूं—ऐसा कौनसा कारण हो सकता है कि उसे इतनी मर्मान्तिक पीड़ा और ग्लानि हुई जिसके कारण वह आत्महत्या के लिए विवश हो गया।
और फिर मैं अपने मित्र की कायर मनोवृत्ति से परिचित था। क्या एक कायर आदमी सहजता से आत्महत्या कर सकता है? तब मैं आत्महत्या के 'प्रकार' के बारे में सोचने लगा। मेरा मन गहरी उदासी मे डूब गया। सचमुच एक सच्चे *दोस्त के लिए इससे बड़े दुर्भाग्य की बात क्या हो सकती है कि उसका एक* दोस्त आत्महत्या कर ले। मैं समझता हूं कि उसने इंजन के भयानक चक्कों के नीचे अपनी गर्दन रख दी होगी? पर यह सम्भव नहीं मेरे मन का संवाददाता बोला कि वह इंजन की भयावह मृत्युसूचक आवाज सुनकर ही कांप गया होगा।" "फिर तालाब में डूब कर? नहीं जिस आदमी का मन दुर्बल होता है वह तालाब के किनारे तक जाकर वापस लौट आता है और मेरा मित्र अत्यन्त कायर है।" "फिर वह छत पर गया होगा सड़क पर चलते बौने लोगों को देखकर उसका अन्तस् आर्तनाद कर उठा होगा। मृत्यु की दुष्कल्पना के मारे वह उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह,चीखकर नीचे भागा होगा। नहीं नहीं यह भी संभव नहीं है। "तब? तब मेरे मन में सहसा यह शब्द बिजली की तरह कौंध गया—'जहर'। सबसे सहज जहर खाना ही मुझे लगा पर संतोष में मेरे मित्र का नाम नहीं है, ऐसा साहस कहां है? हालांकि जहर दूध के साथ अमृत की तरह पिया जा सकता है मिठाई के बीचोंबीच डालकर

उसके कड़वेपन को दूर किया जा सकता है पर मृत्यु जैसी भयानक कल्पना को क्या वह तत्काल भूल पायगा ? क्या वह धीरता से इन सबके बारे में विचार कर पायगा ? उसकी यत्किंचित स्मृति क्या मृत्यु के उपरान्त के निविड़ अन्धकार जैसे अस्पष्ट पीड़ामय भावरूपों को भूल जाएगी ? नहीं ? ...तब मुझे उसका करोड़पति होना याद हो उठा और वह अब करोड़पति है तब उसकी उंगली में अवश्य हीरे की अंगूठी होगी। तब मेरे सम्मुख कई लोककथाएं नाच उठीं। उनके कई नायकों ने अपना अंत हीरे खाकर किया था। ...मेरा रोम रोम सिहर उठा। क्या संतोष ने सचमुच आत्महत्या कर ली ? और मैं एकाएक हंस पड़ा। मुझे लगा कि ये केवल एक उपन्यासकार की ही कल्पनाएं हो सकती हैं ? एक संवाददाता का कर्तव्य इससे पृथक होता है। वह सही स्थिति को देखे बिना किसी तरह की निराधार बातें नहीं विचारता। क्या पता कि उसे यह खबर ही झूठी दे दी गई हो ? मैं पुनः उस मकिस्ट्रट पर अपने-आपको केन्द्रित करने लगा।

सूरज की किरणें डिब्बे में अठखेलियां करने लग गई थीं। गाड़ी की गति के साथ कई किरणें आ-जा रही थीं। मेरा ध्यान एक पल के लिए उनपर रुकता और फिर अपने उलझे प्रश्न पर आ जाता था। मेरी आत्मा ने एक बार सम्पूर्ण विश्वास के साथ कहा 'संतोष आत्महत्या नहीं कर सकता। पिताजी से झगड़ा होगा और वह घर से भाग गया होगा—केवल आतंक फैलाने के लिए।

इंजन ने जोर की सीटी दी।

स्टेशन दिखाई पड़ने लगा था। मैंने अपना बिस्तर और सामान ठीक किया। अब इंजन निरन्तर सीटी दे रहा था। देखते-देखते उसकी गति धीमी हो गई। मैंने लपककर बाहर की ओर देखा—मुझे खिड़कियों पर यात्रियों की एक लम्बी कतार दिखलाई पड़ी। सब लोग हाथ हिला रहे थे। कुछएक के हाथों में रूमाल थे। अप्रत्याशित एक रूमाल उड़ता हुआ गया मैंने देखा—रूमाल उड़ानेवाले के तीसरे डिब्बे में खंजन नयनवाली एक युवती मुक्तहास कर रही है। पर वह रूमाल वह युवती नहीं पकड़ सकी। मैंने तुरन्त अपने पत्र के लिए

छोटी बात के सत्य को पा सका कोई वेस नहीं हो सकता। तो मैं संवाददाता हो गया और आज तक हूं। ऐसा संवाददाता जिसका मुख्य पेशा सनसनीखेज घटनाओं की तह में जाना होता है। अखबार खूब बिके और मेरा व्यापारी मालिक मुझसे खुश रहे। साथ ही मुझे अपने हुनर में श्रेष्ठ माने यही मेरा लक्ष्य है।

और आज भी मैं एक विचित्र चरित्र के जीवन की सही-सही जानकारी पाने के लिए जा रहा हूं। मेरा एक अन्यतम मित्र अपने घर से एकाएक पलायन कर गया। उसने एक पत्र में अपने-आपको खत्म करने की घोषणा भी की है। पर कारण अभी तक अज्ञात है। दोस्त की मृत्यु की कल्पना के कारण मेरा मन असीम व्यथा से भर आया है और मैं अपने-आपको व्यवस्थित करके सोच रहा हूं—ऐसा कौनसा कारण हो सकता है कि उसे इतनी मर्मान्तक पीड़ा और ग्लानि हुई जिसके कारण वह आत्महत्या के लिए विवश हो गया।
और फिर मैं अपने मित्र की कायर मनोवृत्ति से परिचित था। क्या एक कायर आदमी सहजता से आत्महत्या कर सकता है ? तब मैं आत्महत्या के 'प्रकार' के बारे में सोचने लगा। मेरा मन गहरी उदासी में डूब गया। सचमुच एक सच्चे दोस्त के लिए इससे बड़े दुर्भाग्य की बात क्या हो सकती है कि उसका एक दोस्त आत्महत्या कर ले। मैं समझता हूं कि उसने इंजन के भयानक चक्कों के नीचे अपनी गर्दन रख दी होगी ? पर यह सम्भव नहीं मेरे मन का संवाददाता बोला कि वह इंजन की भयावह मृत्युसूचक आवाज सुनकर ही कांप गया होगा। फिर तालाब में डूब कर ? नहीं जिस आदमी का मन दुर्बल होता है वह तालाब के किनारे तक जाकर वापस लौट आता है और मेरा मित्र अत्यन्त कायर है।... फिर वह छत पर गया होगा सड़क पर चलते बौने लोगों को देखकर उसका अन्तस् आर्तनाद कर उठा होगा। मृत्यु की दुष्कल्पना के मारे वह उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह चीखकर नीचे भागा होगा। नहीं नहीं यह भी संभव नहीं है। तब ? तब मेरे मन में सहसा यह शब्द बिजली की तरह कौंध गया—'जहर'। सबसे सहज जहर खाना ही मुझे लगा पर संतोष में मेरे मित्र का नाम यही है, ऐसा साहस कहां है ? हालांकि जहर दूध के साथ अमृत की तरह पिया जा सकता है, मिठाई के बीचोंबीच डालकर

उसके कड़वेपन को दूर किया जा सकता है पर मृत्यु जैसी भयानक कल्पना को क्या वह तत्काल भूल पाएगा ? क्या वह धीरता से इन सबके बारे में विचार कर पाएगा ? उसकी उत्तेजित स्मृति क्या मृत्यु के उपरान्त के निविड़ अन्धकार जैसे अस्पष्ट पीड़ामय भावों को भूल जाएगी ? नहीं ? ...तब मुझे उसका करोड़पति होना याद हो उठा और वह जब करोड़पति है तब उसकी उंगली में अवश्य हीरे की अंगूठी होगी। तब मेरे सम्मुख कई लोककथाएं नाच उठीं उनके कई नायकों ने अपना अंत हीरे चाटकर किया था। ...मेरा रोम रोम सिहर उठा। क्या संतोष ने सचमुच आत्महत्या कर ली ? और मैं एकाएक हंस पड़ा। मुझे लगा कि ये केवल एक उपन्यासकार की ही कल्पनाएं हो सकती हैं एक संवाददाता का कर्तव्य इससे पृथक होता है। वह सही स्थिति को देखे बिना किसी तरह की निराधार बातें नहीं विचारता। क्या पता कि उसे मार कर ही भूमि में गाड़ दिया हो ? मैं पुनः उस मजिस्ट्रेट पर अपना ध्यान केन्द्रित करने लगा।

सूरज की किरणें डिब्बे में अठखेलियां करने लग गई थीं। गाड़ी की गति के साथ नई किरणें आ जा रही थीं। मेरा ध्यान एक पल के लिए भटकता और फिर अपने असली प्रश्न पर आ जाता था। मेरी आत्मा ने एक बार सम्पूर्ण विश्वास के साथ कहा 'संतोष आत्महत्या नहीं कर सकता। मित्रों से झगड़ा होगा और वह घर से भाग गया होगा—केवल आतंक फैलाने के लिए।

इंजन ने जोर की सीटी दी।

स्टेशन दिखलाई पड़ने लगा था। मैंने अपना बिस्तर और सामान ठीक किया। अब इंजन निरन्तर सीटी दे रहा था। देखते-देखते उसकी गति धीमी हो गई। मैंने झांककर बाहर की ओर देखा—मुझे खिड़कियों पर मनुष्यों की एक लम्बी कतार दिखलाई पड़ी। प्रायः लोग हाथ हिला रहे थे। कुछएक के हाथों में रूमाल थे। अप्रत्याशित एक रूमाल उड़ता हुआ गया मैंने देखा—रूमाल चलानेवाले के तीसरे डिब्बे में बैठा नवयात्री एक युवती मुस्कराया कर रही है। पर वह रूमाल वह युवती नहीं पकड़ सकी। मैंने तुरन्त अपने पत्र के लिए

एक 'बॉक्स व्यूह' बनाने की सोची।

गाड़ी प्लेटफार्म में प्रवेश करने लगी।

मैंने चारों ओर देखा। मुझे विश्वास था कि मेरी अगवानी करने के लिए संतोष के पिता सेठ जी फतहचंद अवश्य आए होंगे। मैं अपनी नजर उस भीड़ पर दौड़ा रहा था जो अपने-अपने सम्बन्धियों की अगवानी करने आई थी। मेरी नजर खोजती हुई सेठजी पर पड़ी—स्थूल शरीर, गेहुआ रंग, बड़ी-बड़ी तेज आंखें, राठौड़ी मूंछें और ऊंची ऊंची भौंहें जो प्रायः चलचित्रों में मेक-अप द्वारा ही बनाई जाती हैं। मैंने हाथ हिलाकर उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया। गाड़ी रुक गई थी। मैंने एक बार उन्हें और नमस्कार किया। उत्तर में उनकी दंभपूर्ण मुस्कान उनके अप्रिय मोटे अधरों पर बिखर गई। उनकी उजली दंत-पंक्ति को देखकर मुझे लगा कि सेठजी ने कृत्रिम बत्तीसी बंधवा ली है क्योंकि इसके पहले मैं उनसे एक औद्योगिक संस्था के उद्घाटन-भाषण में मिला था और तब उनके मुंह में बहुत-से दांत नहीं थे और जब वे अपने भाषण के प्राणवान हिस्सों पर बोलते थे तब मुझमें उनके प्रति एक अप्रिय और बेरुखी की भावना जाग जाती थी।

अब वे मेरे सन्निकट आ गए थे। उनके पीछे एक-सी पोशाक पहने तीन नौकर और कई हाजिरिये थे। उन्होंने मुझसे टिकट मांगा और उन नौकरों को सामान लाने का आदेश देकर मुझसे कहा "आओ चलें।

बाहर एक बड़ी कार खड़ी थी। हम दोनों उसमें बैठे और कार हवा से बातें करने लगी।

एक कोठी। भव्य और आकर्षक। लाल-लाल पत्थर पर सामंती कला का अंकन। कहीं-कहीं मिली सभ्यता का मिश्रण।

कार वहां पहुंची।

एक दरबान ने आकर कार का दरवाजा खोला। फिर सलाम करके खड़ा हो गया जैसे कोई फौजी अफसर परेड के समय खड़ा होता है। हम दोनों उतरे। उन्होंने एक नौकर को आदेश दिया कि बाबूजी को अपने कमरे में ठहरा दो।

मैं जैसे ही अपने कमरे में पहुंचा वैसे ही मुझे लगा कि यह आदमी रहस्यमय है। क्योंकि उसने मुझसे संतोष के बारे में किसी तरह की चर्चा नहीं की। आखिर उनका इकलौता बेटा गुम हुआ है और वह भी ऐसी भयानक धमकी देकर, और उनके चेहरे पर ऐसी शांति? और हां मैंने जब-जब बार में उनपर दृष्टिपात किया तब-तब उनके चेहरे पर कठोरता परिलक्षित हुई। कभी-कभी वे मन ही मन हंस पड़ते थे जिससे उनके चेहरे पर कठोरता की जगह क्षणिक कोमलता वह भी उपहास-भरी दिखलाई पड़ती थी और उनकी मूंछें थोड़ी ऊपर उठ जाती थी।

विचारों की तीव्रता में मैं कुछ देर स्नान करना भी भूल गया। ज्योंही मैं स्नान करके बाहर निकला त्योंही वे गंभीरता से बोले "मैं दो-तीन घंटे बाद आऊंगा। भूख लग जाए तो खाना खा लेना।" वे चलने लगे। मुझे उनपर गुस्सा आ रहा था कि वे मुझसे उस विषय पर बातचीत क्यों नहीं करते जिसके लिए उन्होंने मुझे बुलाया है? सहसा वे रुककर बोले "संतोष के लिए अधिक चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह कायर आदमी है। मरना और मेरे अस्तित्व से पृथक होकर खुद के श्रम से आजीविका के लिए कुछ उपार्जन करना उसके लिए संभव नहीं है। वह बड़ा दुर्बल है। मैं तुम्हें कहता हूं कि वह दस-पन्द्रह दिन इधर-उधर घूमकर वापस आ जाएगा। तुम नहीं जानते— जिन्हें परोसी हुई रोटी मिल जाती है वे क्यों पकाने के लिए कष्ट करेंगे? मैं तुम्हें यह स्पष्ट रूप में कह देना चाहता हूं कि अगर मेरी पत्नी एक लड़का और उत्पन्न कर देती तो मैं ऐसे अनत चरम उठानेवाले सर्वथा मूर्ख लड़के को वापस घर में पांव भी रखने न देता।" बात की समाप्ति पर उनके चेहरे पर क्रूर-विकृत मुस्कान की झलक-सी दीखी जैसे कुटिल प्राणी के चेहरे पर एक साधारण आदमी से बातचीत करते समय दीखती है। फिर पास वे खींचकर बोले "तुम्हें इस बात के लिए आश्चर्य होगा कि फिर मैंने तुम्हें यहां क्यों बुलाया है? इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। यह एक बहाना है सर्वथा एक साधारण बहाना, अगर तुममें अनुभूति की प्रखरता व समझ है तो तुम्हें यह तय कर लेना चाहिए कि तुम इस लेकर अखबारों में चर्चा नहीं करोगे

एक 'बॉक्स म्यूज़' बजाने लगी सीटी।

गाड़ी प्लेटफ़ार्म में प्रवेश करने लगी।

मैंने चारों ओर देखा। मुझे विश्वास था कि मेरी अगवानी करने के लिए संतोष के पिता सेठ श्री छज्जूचंद अवश्य आए होंगे। मैं अपनी नजर उस भीड़ पर दौड़ा रहा था जो अपने अपने सम्बन्धियों की अगवानी करने आई थी। मेरी नजर खोजती हुई सेठजी पर पड़ी—स्थूल शरीर, गेहुआ रंग, बड़ी-बड़ी तेज आँखें, पटीदार मूँछें और ऊँची-ऊँची भौंहें जो प्रायः चलचित्रों में मेकअप द्वारा ही बनाई जाती हैं। मैंने हाथ हिलाकर उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया। गाड़ी रुक गई थी। मैंने एक बार उन्हें और नमस्कार किया उत्तर में उनकी व्यंगपूर्ण मुस्कान उनके अप्रिय मोटे अधरों पर बिखर गई। उनकी उजली दंत-पंक्ति को देखकर मुझे लगा कि सेठजी ने कृत्रिम बत्तीसी बंधवा ली है क्योंकि इसके पहले मैं उनसे एक औद्योगिक संस्था के उद्घाटन-भाषण में मिला था और तब उनके मुंह में बहुत-से दांत नहीं थे और जब वे अपने भाषण के प्राणघाती हिस्सों पर बोलते थे तब मुझमें उनके प्रति एक अप्रिय और बेरुखी की भावना जाग जाती थी।

अब वे मेरे सन्निकट आ गए थे। उनके पीछे एक-सी पोशाक पहने तीन नौकर और कई हाजिरिये थे। उन्होंने मुझसे टिकट मांगा और उन नौकरों को सामान लाने का आदेश देकर मुझसे कहा "आओ चलें।"

बाहर एक बड़ी कार खड़ी थी। हम दोनों उसमें बैठे और कार हवा से बातें करने लगी।

एक कोठी। भव्य और आकर्षक। लाल-लाल पत्थर पर सार्पती कला का अंकन। कहीं-कहीं मिस्री सभ्यता का मिश्रण।

कार वहां पहुंची।

एक दरबान ने आकर कार का दरवाजा खोला। फिर सलाम करके खड़ा हो गया जैसे कोई फौजी अफसर परेड के समय खड़ा होता है। हम दोनों उतरे। उन्होंने एक नौकर को आदेश दिया कि बाबूजी को अपने कमरे में ठहरा दो।

मैं जैसे ही अपने कमरे में पहुंचा वैसे ही मुझे लगा कि यह आदमी रहस्य-मय है। क्योंकि उसने मुझसे संतोष के बारे में किसी तरह की चर्चा नहीं की। आखिर उनका इकलौता बेटा गुम हुआ है और वह भी ऐसी भयानक धमकी देकर, और उनके चेहरे पर ऐसी शांति? और हां मैंने जब-जब कार में उनपर दृष्टिपात किया तब-तब उनके चेहरे पर कठोरता परिलक्षित हुई। कभी-कभी वे मन ही मन हंस पड़ते थे जिससे उनके चेहरे पर कठोरता की जगह क्षणिक कोमलता वह भी उपहास भरी दिखलाई पड़ती थी और उनकी मूंछें थोड़ी ऊपर उठ जाती थीं।

विचारों की तीव्रता में मैं कुछ देर स्नान करना भी भूल गया। ज्योंही मैं स्नान करके बाहर निकला त्योंही वे गंभीरता से बोले "मैं दो-तीन घंटे बाद आऊंगा। भूख लग जाए तो खाना खा लेना।" वे चलते बने। मुझे उनपर गुस्सा आ रहा था कि वे मुझसे उस विषय पर बातचीत क्यों नहीं करते जिसके लिए उन्होंने मुझे बुलाया है? सहसा वे रुककर बोले "संतोष के लिए अधिक चिंता करने की कोई आवश्यकता नहीं है। वह कायर आदमी है। मरना और मेरे अस्तित्व से पृथक होकर खुद के श्रम से आजीविका के लिए कुछ उपार्जन करना उसके लिए संभव नहीं है। वह बड़ा दुर्बल है। मैं तुम्हें कहता हूं कि वह दस-पन्द्रह दिन इधर-उधर घूमकर वापस आ जाएगा। 'तुम नहीं जानते—जिन्हें परोसी हुई रोटी मिल जाती है वे क्यों पकाने के लिए कष्ट करेंगे? मैं तुम्हें यह स्पष्ट रूप में कह देना चाहता हूं कि अगर मेरी पत्नी एक लड़का और उत्पन्न कर देती तो मैं ऐसे गलत कदम उठानेवाले सर्वथा मूर्ख लड़के को वापस घर में पांव भी रखने न देता।" बात की समाप्ति पर उनके चेहरे पर क्रूर-विकृत मुस्कान की झलक-सी दौड़ी जैसे कुटिल प्राणी के चेहरे पर एक साधारण आदमी से बातचीत करते समय दीखती है। फिर वह वे चौंककर बोले 'तुम्हें इस बात के लिए आश्चर्य होगा कि फिर मैंने तुम्हें यहां क्यों बुलाया है? इसमें आश्चर्य की कोई बात नहीं है। यह एक बहाना है, सर्वथा एक साधारण बहाना अगर तुममें अनुभूति की प्रखरता व समझ है तो तुम्हें यह तय कर लेना चाहिए कि तुम इसे लेकर अखबारों में चर्चा नहीं करोगे।

एक 'कॉमिक स्कूप' बनाने की सोची।

गाड़ी प्लेटफ़ार्म में प्रवेश करने लगी।

मैंने चारों ओर देखा। मुझे विश्वास था कि मेरी अगवानी करने के लिए संतोष के पिता सेठ श्री फतहचंद अवश्य आए होंगे। मैं अपनी नज़र उस भीड़ पर दौड़ा रहा था जो अपने-अपने सम्बन्धियों की अगवानी करने आई थी। मेरी नज़र खोजती हुई सेठजी पर पड़ी—स्थूल शरीर, मेहुंआ रंग, बड़ी-बड़ी लाल आंखें, राठौड़ी मूछें और ऊंची-ऊंची भौंहें जो प्रायः नकलचियों में मेक-अप द्वारा ही बनाई जाती हैं। मैंने हाथ हिलाकर उन्हें अपनी ओर आकर्षित किया। गाड़ी रुक गई थी। मैंने एक बार उन्हें और नमस्कार किया। उत्तर में उनकी दंभपूर्ण मुस्कान उनके अप्रिय मोटे अधरों पर बिखर गई। उनकी उजली दंत-पंक्ति को देखकर मुझे लगा कि सेठजी ने कृत्रिम बत्तीसी बंधवा ली है क्योंकि इसके पहले मैं उनसे एक औद्योगिक संस्था के उद्घाटन भाषण में मिला था और तब उनके मुंह में बहुत-से दांत नहीं थे और जब वे अपने भाषण के प्राणवान हिस्सों पर बालते थे तब मुझमें उनके प्रति एक अप्रिय और बेरुखी की भावना जाग जाती थी।

अब वे मेरे सन्निकट आ गए थे। उनके पीछे एक-सी पोशाक पहने तीन नौकर और कई हाजिरिये थे। उन्होंने मुझसे टिकट मांगा और उन नौकरों को सामान लाने का आदेश देकर मुझसे कहा "आओ चलें।"

बाहर एक बड़ी कार खड़ी थी। हम दोनों उसमें बैठे और कार हवा से बातें करने लगी।

एक कोठी। भव्य और आकर्षक। लाल-लाल पत्थर पर सामंती कला का अंकन। कहीं-कहीं मिस्री सभ्यता का मिश्रण।

कार वहां पहुंची।

एक दरबान ने आकर कार का दरवाज़ा खोला। फिर सलाम करके खड़ा हो गया जैसे कोई फौजी अफ़सर परेड के समय खड़ा होता है। हम दोनों उतरे। उन्होंने एक नौकर को आदेश दिया कि बाबूजी को अपने कमरे में ठहरा दो।

"नहीं बाबू सा, मुझे कुछ भी पता नहीं है।"

इसके बाद मैंने उससे इधर-उधर के कई प्रश्न किए पर उससे मुझे किसी तरह का कोई सुराग नहीं मिला। उसका सभी प्रश्नों का एक-सा उत्तर और उसके पश्चात् गहरा मौन। मुझे लगा कि यह व्यक्ति किसी विशेष व्यक्तित्व से आतंकित है। मैंने भी उससे अधिक नहीं पूछा। तब मैं एक अन्य पुराने नौकर के पास गया। उसने भी मुझे वैसा ही उत्तर दिया। तब मैंने एक नए नौकर से पूछा। उसने भी मुझे ऐसा ही उत्तर दिया पर उसने अपने उत्तर में मुझे एक नया संकेत दिया। वह संकेत यह था कि मैं पागल बूढ़े नौकर 'सम्पत' से मिलूं। सम्पत शब्द ने मेरे मन में तीव्र प्रतिक्रिया की। मतलब यह कि जैमिनी के इसी नामधारी चित्र के नायक की विलक्षणताएं इतनी प्रसिद्ध हुईं कि लोग चार सौ बीसी करनेवालों को मिस्टर सम्पत कहने लगे। मुझे न जाने क्यों यह अनायास ही विश्वास हुआ कि वह नौकर जरूर इन सभी नौकरों से भिन्न होगा? अवश्य ही वह ?

मैं उसके पास गया। सम्पत अफ़ीम की पिनक में था। वह हरदम अफ़ीम के नशे में मस्त रहता था। वह अत्यन्त बेडौल और दुबला-पतला था। मुझे देखते ही वह अप्रिय हंसी हंसा। दार्शनिक की तरह अंगुली ऊंची करके बोला "मेरी समझ में आप संतोष बाबू के दोस्त हैं। शायद आपका नाम कृष्ण बाबू है। छोटे बाबू आपकी बड़ी प्रशंसा करते थे। क्या कहें ।" वह एकदम चुप हो गया। मैं कुछ देर मौन खड़ा रहा। सोचा शायद वह अपनी बात कहता-कहता भूल गया है। पर थोड़ी ही देर में मुझे मालूम हुआ कि वह नशे की पिनक में बात का क्रम छोड़ बैठा है। मैंने मौन हंसी के साथ कहा "आप कह रहे थे कि मैं क्या करूं·· ?"

'हां मैं चाहता था कि आपकी सूरत अच्छी तरह से देखूं। पर इस नशे और कम दिखाई देने के कारण आपको ठीक से नहीं देख पा रहा हूं। मैं आपकी सौगन्ध खाकर कहता हूं कि मैं अधिक बूढ़ा नहीं हूं।"

उसके इस कथन पर मुझे जोर की हंसी आ गई। कंकाल-मात्र! विस्तृत वर्णन इस प्रकार हो सकता है धंसी हुई आंखें उभरी हुई गालों की हड्डियां

क्योंकि यह मेरी प्रतिष्ठा का प्रश्न है और मुझे पूरा विश्वास है कि इस तरह की चर्चाएं संतोष के प्राणों के लिए घातक बन सकती हैं। इस गले-सड़े देश में करोड़पति का इकलौता बेटा होना भी एक गुनाह होता है।" और वे तीर की तरह निकल गए। उनके जाते ही मेरे मन में घृणा का विस्फोट-सा हुआ। मुझे लगा कि यह आदमी नहीं राक्षस है पर मैंने तुरन्त अपने विचारों को संयत किया। इस तरह की अपमानसूचक शब्दावली का प्रयोग सेठजी के प्रति करना मुझे शिष्टता के विरुद्ध लगा। किन्तु मेरे मन में दुःख अवश्य हो रहा था। संतोष का पलायन वस्तुतः एक दुःखद घटना थी जिसका प्रमाणित रूप से वहन करना मेरे लिए असह्य था। हां यह भी सही था कि मेरे मन में जो आदर सूचक भाव संतोष के पिता के प्रति थे वे मिट गए। मुझे लगा कि यह व्यक्ति रोगग्रस्त है। एक साधारण घटना के प्रति उनका असीम धैर्य मुझे एक दम्भ-सा ही प्रतीत हुआ।

अब मैं थोड़ा-सा वास्तविक कथानक पर आ रहा हूं। लगभग पांच दिन पहले संतोष घर छोड़कर चला गया था। सेठजी ने उसके बारे में किसीको किसी तरह की सूचना नहीं दी। अखबारों में गुमशुदा की तलाश कॉलम में भी किसी तरह का समाचार नहीं छपा। सेठजी ने उसके प्रति गहरा मौन धारण कर रखा था। केवल मुझे ही उन्होंने सूचना दी। इस सूचना में उन्होंने एक पत्र का उल्लेख किया था वह पत्र भी उन्होंने मुझे अभी तक नहीं दिया। आखिर एक बाप अपने बेटे के प्रति ऐसी उदासीनता कैसे बरत सकता है ?

मैं आपको पहले ही बता चुका हूं कि संवाददाता बनने का इरादा भी मैंने इसलिए किया था कि मेरी जासूसी चलती रहे। सो मैं भोजन करने के लिए उनके 'रसोड़े' में गया। एक पचास वर्ष का बूढ़ा उनका खाना पकाता था। एकदम राजस्थानी परम्परा का खाना बनता था। चार-पांच सब्जियां दाल, कढ़ी चावल और अन्त में पापड़। भोजन अत्यन्त स्वादिष्ट और हल्का था। मुझे रुचिकर लगा। भोजन करते समय मैंने रसोइये से पूछा "क्यों महाराज (रसोई बनानेवालों को इसी संज्ञा से सम्बोधित करते हैं) आप छोटे बाबू के बारे में कुछ कह सकते हैं ?"

"नहीं बाबू जी मुझे कुछ भी पता नहीं है।

इसके बाद मैंने उससे इधर-उधर के कई प्रश्न किए पर उससे मुझे किसी तरह का कोई सुराग नहीं मिला। उसका सभी प्रश्नों का एक-सा उत्तर और उसके पश्चात् गहरा मौन। मुझे लगा कि यह व्यक्ति किसी विशेष व्यक्तित्व से आतंकित है। मैंने भी उससे अधिक नहीं पूछा। तब मैं एक अन्य पुराने नौकर के पास गया। उसने भी मुझे वैसा ही उत्तर दिया। तब मैंने एक नये नौकर से पूछा। उसने भी मुझे ऐसा ही उत्तर दिया पर उसने अपने उत्तर में मुझे एक नया संकेत दिया। वह संकेत यह था कि मैं पागल बूढ़े नौकर 'सम्पत' से मिलूं। सम्पत शब्द ने मेरे मन में तीव्र प्रतिक्रिया की। मतलब यह कि जैमिनी के इसी नामधारी चित्र के नायक की तिकड़मबाजियाँ इतनी प्रसिद्ध हुई कि लोग चार सौ बीसी करनेवालों को मिस्टर सम्पत कहने लगे। मुझे न जाने क्यों यह लगा साथ ही विश्वास हुआ कि यह नौकर जरूर इन सभी नौकरों से भिन्न होगा? अवश्य ही वह ?

मैं उसके पास गया। सम्पत अफीम की पिनक में था। वह हरदम अफीम के नशे में मस्त रहता था। वह अत्यन्त बेडौल और दुबला-पतला था। मुझे देखते ही वह अप्रिय हंसी हंसा। दार्शनिक की तरह उंगली ऊंची करके बोला "मेरी समझ में आप संतोष बाबू के दोस्त हैं। शायद आपका नाम कृष्ण बाबू है। छोटे बाबू आपकी बड़ी प्रशंसा करते थे। क्या कहूं ।" वह एकदम चुप हो गया। मैं कुछ देर मौन खड़ा रहा। सोचा शायद वह अपनी बात कहता-कहता भूल गया है। पर थोड़ी ही देर में मुझे मालूम हुआ कि वह नशे की पिनक में बात का क्रम छोड़ बैठा है। मैंने मौन हंसी के साथ कहा "आप कह रहे थे कि मैं क्या कहूं ?"

"हां मैं चाहता था कि आपकी सूरत अच्छी तरह से देखूं। पर इस नशे और कम दिखाई देने के कारण आपको ठीक से नहीं देख पा रहा हूं। मैं आपकी सौगन्ध खाकर कहता हूं कि मैं अधिक बूढ़ा नहीं हूं।"

उसके इस कथन पर मुझे जोर की हंसी आ गई। कंकाल-मात्र ! बिल्कुल अर्धमृत इस प्रकार हो सकता है धंसी हुई आंखें उभरी हुई गालों की हड्डियां

क्योंकि यह मेरी प्रतिष्ठा का प्रश्न है और मुझे पूरा विश्वास है कि इस तरह की चर्चाएं संतोष के प्राणों के लिए घातक बन सकती हैं। इस मरे-भूखे देश में करोड़पति का इकलौता बेटा होना भी एक गुनाह होता है।" और वे तीर की तरह निकल गए। उनके जाते ही मेरे मन में घृणा का विस्फोट-सा हुआ। मुझे लगा कि यह आदमी नहीं राक्षस है पर मैंने तुरन्त अपने विचारों को संयत किया। इस तरह की अपमानसूचक शब्दावली का प्रयोग सेठजी के प्रति करना मुझे शिष्टता के विरुद्ध लगा। किन्तु मेरे मन में द्वन्द्व जरूर हो रहा था। संतोष का पलायन वस्तुतः एक दुखद घटना थी जिसका अप्रभावित रूप से सहन करना मेरे लिए असह्य था। हां यह भी सही था कि मेरे मन में जो आदर सूचक भाव संतोष के पिता के प्रति थे वे मिट गए। मुझे लगा कि यह व्यक्ति रोगग्रस्त है। एक साधारण घटना के प्रति उनका असीम धैर्य मुझे एक रोग-सा ही प्रतीत हुआ।

अब मैं थोड़ा-सा वास्तविक कथानक पर आ रहा हूं। लगभग पांच दिन पहले संतोष घर छोड़कर चला गया था। सेठजी ने उसके बारे में किसीको किसी तरह की सूचना नहीं दी। अखबारों में गुमशुदा की तलाश कॉलम में भी किसी तरह का समाचार नहीं छपा। सेठजी ने उसके प्रति गहरा मौन धारण कर रखा था। केवल मुझे ही उन्होंने सूचना दी। इस सूचना में उन्होंने एक पत्र का उल्लेख किया था वह पत्र भी उन्होंने मुझे अभी तक नहीं दिया। आखिर एक बाप अपने बेटे के प्रति ऐसी उदासीनता कैसे बरत सकता है?

मैं आपको पहले ही बता चुका हूं कि संवाददाता बनने का इरादा भी मैंने इसलिए किया था कि मेरी जासूसी चलती रहे। सो मैं भोजन करने के लिए उनके रसोईघर में गया। एक पचास वर्ष का बूढ़ा उनका खाना पकाता था। एकदम राजस्थानी परम्परा का खाना बनता था। चार-पांच सब्जियां दाल, कढ़ी चावल और अन्त में पापड़। भोजन अत्यन्त स्वादिष्ट और हल्का था। मुझे रुचिकर लगा। भोजन करते समय मैंने रसोइये से पूछा "क्यों महाराज (रसोई बनानेवालों को इसी संज्ञा से सम्बोधित करते हैं) आप छोटे बाबू के बारे में कुछ कह सकते हैं?"

"नहीं बाबू सा मुझे कुछ भी पता नहीं है।

इसके बाद मैंने उससे इधर-उधर के कई प्रश्न किए पर उससे मुझे किसी तरह का कोई सुराग नहीं मिला। उसका सभी प्रश्नों का एक-सा उत्तर और उसके पश्चात् गहरा मौन। मुझे लगा कि यह व्यक्ति किसी विशेष व्यक्तित्व से आतंकित है। मैंने भी उससे अधिक नहीं पूछा। तब मैं एक अन्य पुराने नौकर के पास गया। उसने भी मुझे वैसा ही उत्तर दिया। तब मैंने एक नये नौकर से पूछा। उसने भी मुझे ऐसा ही उत्तर दिया पर उसने अपने उत्तर में मुझे एक नया संकेत दिया। वह संकेत यह था कि मैं पागल बूढ़ नौकर 'सम्पत' से मिलूं। सम्पत शब्द ने मेरे मन में तीव्र प्रतिक्रिया की। मतलब यह कि जमिनी के इसी नामधारी फिल्म के नायक की तिकड़मबाजियां इतनी प्रसिद्ध हुईं कि लोग चार सौ बीसी करनेवालों को मिस्टर सम्पत कहने लगे। मुझे न जाने क्यों यह अनायास ही विश्वास हुआ कि यह नौकर जरूर इन सभी नौकरों से भिन्न होगा? अवश्य ही यह" ?

मैं उसके पास गया। सम्पत अफीम की पिनक में था। वह हरदम अफीम के नशे में मस्त रहता था। वह अत्यन्त बेडौल और दुबला-पतला था। मुझे देखते ही वह अजीब हंसी हंसा। दार्शनिक की तरह उंगली ऊंची करके बोला "मेरी समझ में आप संतोष बाबू के दोस्त हैं। शायद आपका नाम कृष्ण बाबू है। छोटे बाबू आपकी बड़ी प्रशंसा करते थे। क्या कहूं ।" वह एकदम चुप हो गया। मैं कुछ देर मौन खड़ा रहा। सोचा शायद वह अपनी बात कहता-कहता भूल गया है। पर थोड़ी ही देर में मुझे मालूम हुआ कि वह नशे की पिनक में बात का क्रम छोड़ बैठा है। मैंने मौन हंसी के साथ कहा "आप कह रहे थे कि मैं क्या करूं ?"

"हां मैं चाहता था कि आपकी सूरत अच्छी तरह से देखूं। पर इस नशे और कम दिखाई देने के कारण आपको ठीक से नहीं देख पा रहा हूं। मैं आपकी सौजन्य पाकर कहता हूं कि मैं अधिक बूढ़ा नहीं हूं।"

उसके इस कथन पर मुझे जोर की हंसी आ गई। कंकाल-मात्र! विस्तृत दर्शन इस प्रकार हो सकता है, धंसी हुई आंखें उभरी हुई गालों की हड्डियां

क्योंकि यह मेरी प्रतिष्ठा का प्रश्न है और मुझे पूरा विश्वास है कि इस तरह की चर्चाएं संतोष के प्राणों के लिए घातक बन सकती हैं। इस नंगे-भूखे देश में करोड़पति का इकलौता बेटा होना भी एक गुनाह होता है।' और वे तीर की तरह निकल गए। उनके जाते ही मेरे मन में घृणा का विस्फोट-सा हुआ। मुझे लगा कि यह आदमी नहीं दानव है पर मैंने तुरन्त अपने विचारों को संयत किया। इस तरह की अपमानसूचक शब्दावली का प्रयोग सेठजी के प्रति करना मुझे शिष्टता के विरुद्ध लगा। किन्तु मेरे मन में कुछ बवंडर हो रहा था। संतोष का पलायन वस्तुतः एक दुःखद घटना थी जिसको अप्रभावित रूप से सहन करना मेरे लिए असह्य था। हां यह भी सही था कि मेरे मन में जो आदर सूचक भाव संतोष के पिता के प्रति थे वे मिट गए। मुझे लगा कि यह व्यक्ति रोगग्रस्त है। एक साधारण घटना के प्रति उनका असीम धैर्य मुझे एक रोग सा ही प्रतीत हुआ।

अब मैं थोड़ा-सा वास्तविक कथानक पर आ रहा हूं। लगभग पांच दिन पहले संतोष घर छोड़कर चला गया था। सेठजी ने उसके बारे में किसीको किसी तरह की सूचना नहीं दी। अखबारों में गुमशुदा की तलाश कॉलम में भी किसी तरह का समाचार नहीं छपा। सेठजी ने उसके प्रति गहरा मौन धारण कर रखा था। केवल मुझे ही उन्होंने सूचना दी। इस सूचना में उन्होंने एक पत्र का उल्लेख किया था वह पत्र भी उन्होंने मुझे अभी तक नहीं दिया। आखिर एक बाप अपने बेटे के प्रति ऐसी उदासीनता कैसे बरत सकता है?

मैं आपको पहले ही बता चुका हूं कि संवाददाता बनने का इरादा भी मैंने इसलिए किया था कि मेरी जासूसी चलती रहे। सो मैं भोजन करने के लिए उनके 'रसोड़े' में गया। एक पचास वर्ष का बूढ़ा उनका खाना पकाता था। एकदम राजस्थानी परम्परा का खाना बनता था। चार-पांच सब्जियां दाल कढ़ी चावल और अन्त में पापड़। भोजन अत्यन्त स्वादिष्ट और हल्का था। मुझे रुचिकर लगा। भोजन करते समय मैंने रसोइया से पूछा "क्यों महाराज, (रसोई बनानेवालों को इसी संज्ञा से सम्बोधित करते हैं) आप छोटे बाबू के बारे में कुछ कह सकते हैं?"

"नहीं बाबू सा मुझे कुछ भी पता नहीं है।"

इसके बाद मैंने उससे इधर-उधर के कई प्रश्न किए पर उससे मुझे किसी तरह का कोई सुराग नहीं मिला। उसका सभी प्रश्नों का एक-सा उत्तर और उसके पश्चात् गहरा मौन। मुझे लगा कि यह व्यक्ति किसी विशेष व्यक्तित्व से आतंकित है। मैंने भी उससे अधिक नहीं पूछा। तब मैं एक अन्य पुराने नौकर के पास गया। उसने भी मुझे वैसा ही उत्तर दिया। तब मैंने एक नए नौकर से पूछा। उसने भी मुझे ऐसा ही उत्तर दिया पर उसने अपने उत्तर में मुझे एक नया संकेत दिया। वह संकेत यह था कि मैं पागल बूढ़े नौकर 'सम्पत' से मिलूं। सम्पत शब्द ने मेरे मन में तीव्र प्रतिक्रिया की। मतलब यह कि जैमिनी के इसी नामधारी चित्र के नायक की तिकड़मबाजियां इतनी प्रसिद्ध हुईं कि लोग चार सौ बीसी करनेवालों को मिस्टर सम्पत कहने लगे। मुझे न जाने क्यों यह अनायास ही विश्वास हुआ कि वह नौकर जरूर इन सभी नौकरों से भिन्न होगा? अवश्य ही वह ?

मैं उसके पास गया। सम्पत अफीम की पिनक में था। वह हरदम अफीम के नशे में मस्त रहता था। वह अत्यन्त बेडौल और दुबला-पतला था। मुझे देखते ही वह अप्रिय हंसी हंसा। दार्शनिक की तरह उंगली ऊंची करके बोला "मेरी समझ में आप संतोष बाबू के दोस्त हैं। शायद आपका नाम गुप्त बाबू है। छोटे बाबू आपकी बड़ी प्रशंसा करते थे। क्या करूं ।" वह एकदम चुप हो गया। मैं कुछ देर मौन खड़ा रहा। सोचा शायद वह अपनी बात कहता-कहता भूल गया है। पर थोड़ी ही देर में मुझे मालूम हुआ कि वह नशे की पिनक बात का क्रम छोड़ बैठा है। मैंने मीठी हंसी के साथ कहा "आप यह कह रहे थे मैं क्या करूं ?"

"हां मैं चाहता था कि आपकी सूरत अच्छी तरह से देखूं। पर इस नशे और कम दिखाई देने के कारण आपको ठीक से नहीं देख पा रहा हूं। मैं आपकी [illegible] शायद कहता हूं कि मैं अधिक बूढ़ा नहीं हूं।"

उसके इस कथन पर मुझे जोर की हंसी आ गई। कंकाल-मात्र। बिल्कुल वर्णन इस प्रकार हो सकता है धंसी हुई आंखें उभरी हुई गालों की हड्डियां

क्योंकि यह मेरी प्रतिष्ठा का प्रश्न है और मुझे पूरा विश्वास है कि इस तरह की चर्चाएं संतोष के प्राणों के लिए घातक बन सकती हैं। इस नये-मुझे देश में करोड़पति का इकलौता बेटा होना भी एक गुनाह होता है।" और वे तीर की तरह निकल गए। उनके जाते ही मेरे मन में घृणा का विस्फोट-सा हुआ। मुझे लगा कि यह आदमी नहीं राक्षस है पर मैंने तुरन्त अपने विचारों को संयत किया। इस तरह की अपमानसूचक शब्दावली का प्रयोग सेठजी के प्रति करना मुझे धृष्टता के विरुद्ध लगा। किन्तु मेरे मन में दुःख जरूर हो रहा था। संतोष का पलायन वस्तुतः एक दुःखद घटना थी जिसका प्रमाणित रूप से सहन करना मेरे लिए असह्य था। हां यह भी सही था कि मेरे मन में जो आदर सूचक भाव संतोष के पिता के प्रति थे वे मिट गए। मुझे लगा कि वह व्यक्ति रोगग्रस्त है। एक साधारण घटना के प्रति उनका असीम धैर्य मुझे एक रोग सा ही प्रतीत हुआ।

अब मैं थोड़ा-सा वास्तविक कथानक पर आ रहा हूं। लगभग पांच दिन पहले संतोष घर छोड़कर चला गया था। सेठजी ने उसके बारे में किसीको किसी तरह की सूचना नहीं दी। अखबारों में गुमशुदा की तलाश कॉलम में भी किसी तरह का समाचार नहीं छपा। सेठजी ने उसके प्रति गहरा मौन धारण कर रखा था। केवल मुझे ही उन्होंने सूचना दी। इस सूचना में उन्होंने एक पत्र का उल्लेख किया था वह पत्र भी उन्होंने मुझे अभी तक नहीं दिया। आखिर एक बाप अपने बेटे के प्रति ऐसी उदासीनता कैसे बरत सकता है ?

मैं आपको पहले ही बता चुका हूं कि संवाददाता बनने का इरादा भी मैंने इसलिए किया था कि मेरी जासूसी चलती रहे। सो मैं भोजन करने के लिए उनके 'रसोई' में गया। एक पचास वर्ष का बूढ़ा उनका खाना पकाता था। एकदम राजस्थानी परम्परा का खाना बनता था। चार-पांच बाटियां दाल कढ़ी चावल और अन्त में पापड़। भोजन अत्यन्त स्वादिष्ट और हल्का था। मुझे रुचिकर लगा। भोजन करते समय मैंने रसोइये से पूछा "क्यों महाराज (रसोई बनानेवालों को इसी संज्ञा से सम्बोधित करते हैं) आप छोटे बाबू के बारे में कुछ कह सकते हैं ?"

"नहीं बाबू सा मुझे कुछ भी पता नहीं है।"

इसके बाद मैंने उससे इधर-उधर के कई प्रश्न किए पर उससे मुझे किसी तरह का कोई सुराग नहीं मिला। उसका सभी प्रश्नों का एक-सा उत्तर और उसके पश्चात् गहरा मौन। मुझे लगा कि यह व्यक्ति किसी विशेष व्यक्तित्व से आतंकित है। मैंने भी उससे अधिक नहीं पूछा। तब मैं एक अन्य पुराने नौकर के पास गया। उसने भी मुझे वैसा ही उत्तर दिया। तब मैंने एक नये नौकर से पूछा। उसने भी मुझे ऐसा ही उत्तर दिया पर उसने अपने उत्तर में मुझे एक नया संकेत दिया। वह संकेत यह था कि मैं पागल बूढ़े नौकर 'सम्पत' से मिलूं। सम्पत शब्द ने मेरे मन में तीव्र प्रतिक्रिया की। मतलब यह कि जैमिनी के इसी नामधारी चित्र के नायक की तिकड़मबाजियां इतनी प्रसिद्ध हुईं कि लोग चार सौ बीसी करनेवालों को मिस्टर सम्पत कहने लगे। मुझे न जाने क्यों यह भ्रम-सा ही विश्वास हुआ कि वह नौकर जरूर इन सभी नौकरों से भिन्न होगा? अवश्य ही वह ?

मैं उसके पास गया। सम्पत अफीम की पिनक में था। वह हरदम अफीम के नशे में मस्त रहता था। वह अत्यन्त बेडौल और दुबला-पतला था। मुझे देख ही वह अप्रिय हंसी हंसा। दार्शनिक की तरह उंगली ऊंची करके बोला "म समझ में आप संतोष बाबू के दोस्त हैं। शायद आपका नाम कृष बाबू छोटे बाबू आपकी बड़ी प्रशंसा करते थे। क्या करूं ।" वह एकदम चुप गया। मैं कुछ देर मौन खड़ा रहा। सोचा शायद वह अपनी बात कहता- भूल गया है। पर थोड़ी ही देर में मुझे मालूम हुआ कि वह नशे की पिनक में बात का क्रम छोड़ बैठा है। मैंने मौन हंसी के साथ कहा "आप यह कह रहे थे कि मैं क्या करूं ?"

"हां मैं चाहता था कि आपकी सूरत अच्छी तरह से देखूं। पर इस नशे और कम दिखाई देने के कारण आपको ठीक से नहीं देख पा रहा हूं। मैं आपकी सौगन्ध खाकर कहता हूं कि मैं अधिक बूढ़ा नहीं हूं।"

उसके इस कथन पर मुझे जोर की हंसी आ गई। कंकाल-मात्र। विस्तृत ब्रह्मांड इस प्रकार हो सकता है धंसी हुई आंखें उभरी हुई गालों की हड्डियां,

क्योंकि यह मेरी प्रतिष्ठा का प्रश्न है और मुझे पूरा विश्वास है कि इस तरह की चर्चाएं संतोष के प्रयत्नों के लिए घातक बन सकती हैं। इस भले-बुरे देश में करोड़पति का इकलौता बेटा होना भी एक गुनाह होता है।" और वे तीर की तरह निकल गए। उनके जाते ही मेरे मन में घृणा का विस्फोट-सा हुआ। मुझे लगा कि यह आदमी नहीं राक्षस है पर मैंने तुरन्त अपने विचारों को संयत किया। इस तरह की अपमानसूचक शब्दावली का प्रयोग सेठजी के प्रति करना मुझे शिष्टता के विरुद्ध लगा। किन्तु मेरे मन में दुःख चक्कर ले रहा था। संतोष का पलायन वस्तुतः एक दुःखद घटना थी जिसका प्रमाणित रूप से वहन करना मेरे लिए असह्य था। हां यह भी सही था कि मेरे मन में जो आदर सूचक भाव संतोष के पिता के प्रति थे वे मिट गए। मुझे लगा कि यह व्यक्ति रोगग्रस्त है। एक साधारण घटना के प्रति उनका असीम धैर्य मुझे एक दोष सा ही प्रतीत हुआ।

अब मैं थोड़ा-सा वास्तविक धरातल पर आ रहा हूं। लगभग पांच दिन पहले संतोष घर छोड़कर चला गया था। सेठजी ने उसके बारे में किसीको किसी तरह की सूचना नहीं दी। अखबारों में गुमशुदा की तलाश कॉलम में भी किसी तरह का समाचार नहीं छपा। सेठजी ने उनके प्रति गहरा मौन धारण कर रखा था। केवल मुझे ही उन्होंने सूचना दी। इस सूचना में उन्होंने एक पत्र का उल्लेख किया था वह पत्र भी उन्होंने मुझे अभी तक नहीं दिया। आखिर एक बाप अपने बेटे के प्रति ऐसी उदासीनता कैसे बरत सकता है?

मैं आपको पहले ही बता चुका हूं कि संवाददाता बनने का इरादा भी मैंने इसलिए किया था कि मेरी जासूसी चलती रहे। सो मैं भोजन करने के लिए उनके 'रसोड़े' में गया। एक पचास वर्ष का बूढ़ा उनका खाना पकाता था। एकदम राजस्थानी परम्परा का खाना बनता था। चार-पांच सब्जियां दाल कढ़ी चावल और अन्त में पापड़। भोजन अत्यन्त स्वादिष्ट और हल्का था। मुझे रुचिकर लगा। भोजन करते समय मैंने रसोइये से पूछा "बर्मो महाराज (रसोई बनानेवालों को इसी संज्ञा से सम्बोधित करते हैं) आप छोटे बाबू के बारे में कुछ कह सकते हैं?

उसकी आँखें भी बन्द थीं। मैं करुणाभिभूत-सा खड़ा रहा। वह चौंककर बोला "मेरी समझ में आप कुछ दिन और ठहरेंगे। मैं आपको अपनी नौकरी की कुछ रोचक घटनाएं सुनाऊंगा—दिलचस्प और मजेदार घटनाएं। इतिहास-सी सत्य और उपन्यास-सी रोचक।" फिर इधर-उधर देखकर वह बोला "बड़े बाबू के क्रूरता और चरित्रहीनता के किस्से भी? उनके कमीनेपन और नीचता की कथाएं।" हे प्रभु! यह आदमी सचमुच राक्षस है। कहता है, और विश्वास के साथ गम्भीर होकर कहता है जैसे वह कोई सूक्ति बोल रहा हो, 'अगर पुरुष को सदा बढ़िया माल मिलता रहे तो वह कभी बूढ़ा नहीं होता। जिन्दगी की बड़ी से बड़ी ताकत या आघात भी उसे नहीं तोड़ सकता। 'आह!" बूढ़े की आँखों में उल्लास दीप्त हो उठा। सहसा उसकी धंसी हुई आँखों में आग की लकीर की तरह दहक उठी। वह जीभ को अपने अधरों पर दौड़ाने लगा—सर्प जिह्वा की तरह। उसके दोनों पांव कुत्सित से हिलने लगे।

मैं उस नौकर को और भी घृणाभरी दृष्टि से देखने लगा।

उसने कपड़े की एक छोटी-सी थैली में से अफीम की एक मोटी चिकनी गोली निकाली। उसे सुपारी की तरह चबाता हुआ बोला "मैं समझता हूं कि अब आपको मेरी बातों में दिलचस्पी होने लगी है। आदमी भी कितना नीच है, ईश्वर की अपेक्षा वह गंदी बातों को सुनने और कहने में एक अपार आनन्द लेता है। मुझे ही देखो न मरने चला हूं फिर भी उस" "

"सम्पत!" बड़े बाबू का भारी भरकम स्वर गूंजा। मेरे मन में कंपकंपी-सी दौड़ गई। भय की लहरों ने मुझे विमूढ़ कर दिया। और बेचारा सम्पत सूखे पत्ते की तरह कांप उठा। वह बड़े बाबू के चरण पकड़कर बोला "मुझे क्षमा कर दीजिए, मैं नशे में आवश्यकता से अधिक बोल दिया करता हूं।" उसकी आँखें एकाएक भर आईं। उसकी आँखों के आँसुओं को देखकर मुझे यह प्रतीत हुआ कि वह अत्यन्त दयनीय है। सम्पत गिड़गिड़ाकर कह रहा था "बड़े बाबू, मुझे क्षमा कर दीजिए, मैं सठिया गया हूं। सचमुच मैं पागल हूं। अपनी समझ में मैं अब भला आदमी कहलाने लायक नहीं हूं। फिजूल की बकवास करता रहता हूं। मेरी हर बात बे-सिर-पैर की होती है। पर क्या

काला रंग गले के चारों ओर उभरी हुई नसें। मुरदा की तरह पिलपिला मुंह। लकड़ियों की तरह हाथ-पांव आप समझ लीजिए, प्रत्यक्ष रूप में प्रेतात्मा। 'हंसकर आप मेरा मजाक उड़ा रहे हैं ?"

मुझे तुरन्त उसपर रहम आया और मुझे लगा कि मुझे अपनी इस भावना पर काबू पाना चाहिए था। इस तरह की विद्रूप हंसी अमानवीय है। किसीकी दुर्दशा पर हंसने का किसीको मानवीय अधिकार नहीं है। एक ऐसी करुणा का मेरे मन में उद्भव हुआ जिसे अनायास उत्पन्न करुणा ही कह सकते हैं। मैंने उसके हाथों को मजबूती से पकड़कर कहा "मैं आपसे क्षमा चाहता हूं। यह सब मैंने किसी दुर्भावना से प्रेरित होकर नहीं किया। यह तरुण अवस्था की स्वाभाविक प्रक्रिया है।

मेरे इस उत्तर की निश्छलता उसपर प्रभाव कर गई। वह दुखी-दुखी आवाज में बोला "मैं जानता हूं कि आपने यह सब मेरे शरीर को देखकर ही कहा होगा। आप क्या कोई भी ऐसा ही सोचेगा। पर मैं आपको सच कहता हूं कि यह बेवक्त बूढ़ा हो गया शरीर है।" आपको उदाहरण देता हूं। बड़े बाबू मुझसे पांच बरस बड़े हैं। सौभाग्य की बात है कि उनका और मेरा जन्मदिन भी एक ही तिथि और माह का है। पर क्या कहूं समय की बात है जब उनकी वर्षगांठ आती है तो इस कोठी को सजाया जाता है, शहर के बड़े-बड़े रईस रईसों की पत्नियां और अधिकारी लोग आते हैं पर मैं मैं उस दिन अपनी बूढ़ी घरवाली को जबरदस्ती पकड़कर नाचा करता हूं। हालांकि अपने यौवनकाल में वह मेरी अत्यन्त चहेती रही है पर अब उसे भी मेरे साथ नाचने में किसी तरह का आनन्द नहीं आता। हां जब मैं उसे निराशा से देखता हूं तब न जाने क्यों वह अपने अधरों पर कृत्रिम मुस्कान लाकर मुझे चूम लेती है और वह बिलकुल एक तरुणी की तरह उछल-कूद करती है। तब मैं उसे प्यार से 'बन्दरिया' कहता हूं और वह मुझे 'बन्दर'। ''आप मुझसे ऊब गए होंगे ? शायद आप यह नहीं जानते कि [illegible] को अधिक बोलने की आदत होती है। दरअसल वह अधिक बोले बिना नहीं रह सकता। वह एक पल के लिए रुका। अल्पकाल के लिए उसके मुख पर समाधिस्थ की-सी जड़ता के भाव आए।

उसकी आँखें भी बन्द थीं। मैं करुणाभिभूत-सा खड़ा रहा। वह चौंककर बोला 'मेरी समझ में आप कुछ दिन और ठहरेंगे। मैं आपको अपनी जवानी की कुछ रोचक घटनाएं सुनाऊंगा—दिलचस्प और मजेदार घटनाएं। इतिहास-सी सत्य और उपन्यास-सी रोचक। फिर इधर-उधर देखकर वह बोला "बड़े बाबू क दुष्टता और चरित्रहीनता के किस्से भी ? उनके कमीनेपन और नीचता की कथाएं। हे प्रभु ! वह आदमी सचमुच राक्षस है। कहता है और विश्वास के साथ गम्भीर होकर कहता है जैसे वह कोई सूक्ति बोल रहा हो 'अगर पुरुष को सदा बढ़िया माल मिलता रहे तो वह कभी बूढ़ा नहीं होता। जिन्दगी की बड़ी से बड़ी ताकत या आघात भी उसे नहीं तोड़ सकता। 'आह !" बूढ़े की आँखों में उल्लास दीप्त हो उठा। वासना उसकी धंसी हुई आँखों में आग की लकीर की तरह दहक उठी। वह जीभ को अपने अधरों पर दौड़ाने लगा—सर्प जिह्वा की तरह। उसके दोनों पांव कुवृत्ति से हिलने लगे।

मैं उस नौकर को और भी अचरजी दृष्टि से देखने लगा।

उसने कपड़े की एक छोटी-सी थैली में से अफीम की एक मोटी चिलगी गोली निकाली। उसे सुपारी की तरह चबाता हुआ बोला "मैं समझता हूं कि अब आपको मेरी बातों में दिलचस्पी होने लगी है। आदमी भी कितना नीच है ईश्वर की अपेक्षा वह गंदी बातों को सुनने और कहने में एक अपार आनन्द लेता है। मुझे ही देखो न मरने चला हु फिर भी उस" "

"सम्पत !" बड़े बाबू का भारी-भरकम स्वर गूंजा। मेरे मन में कंपकंपी सी दौड़ गई। भय की लहरों ने मुझे विमूढ़ कर दिया। "और बेचारा सम्पत सूखे पत्ते की तरह कांप उठा। वह बड़े बाबू के चरण पकड़कर बोला "मुझे क्षमा कर दीजिए, मैं नशे में आवश्यकता से अधिक बोल दिया करता हूं।" उसकी आंखें एकाएक भर आईं। उसकी आंखों के आंसुओं को देखकर मुझे यह संदेह हुआ कि यह अवश्य नाटकीय है। सम्पत गिड़गिड़ाकर कह रहा था "बड़े बाबू मुझे क्षमा कर दीजिए, मैं सठिया गया हूं। सचमुच मैं पागल हूं। अपनी समझ में मैं अब भला आदमी कहलाने लायक नहीं हूं। फिजूल की बकवास करता रहता हूं। मेरी हर बात बे-सिर-पैर की होती है। पर क्या

करूँ ? संतोष बाबू की याद जब खूब तड़पाने लगी तब मैंने वृद्ध बाबू को अपने पास बुला लिया। मैं केवल उनके बारे में पूछ रहा था। क्या उनके बारे में पूछना मेरा धर्म नहीं है ? आखिर मैं आपका स्वामीभक्त और ईमानदार नौकर हूं। मैंने इस घर का नमक खाया है।"

"चलो वृद्ध। इसका दिमाग खराब हो गया है। मेरा पुराना खजांची और मुनीम है।"

हम दोनों वहां से चले। बड़े बाबू के चेहरे पर कोई विशेष प्रतिक्रिया नहीं थी। वही गहरी गंभीरता।

रास्ते ही में उन्होंने मुझसे कहा "चलो मैं तुम्हें संतोष का पत्र दिखा देता हूं।"

पर मेरे मन में जिज्ञासा और उत्सुकता आन्दोलन कर रही थी। ऐसा लग रहा था कि गत वर्षों में यहां अनेक गंभीर परिवर्तन हुए हैं। वैसे बड़े बाबू का धन की तरफ तीव्र आकर्षण बचपन से ही रहा है। वे धन को प्राप्त करने के लिए नीचतम कार्य भी कर सकते हैं पर मैंने उन्हें इतना धन-लभी नहीं समझा था कि वे इस तरह धन के लिए अपने लाडले पुत्र से भी मुंह मोड़ लेंगे। कभी-कभी मेरी इच्छा होती थी कि मैं उन्हें एक उपदेशक की तरह लम्बा भाषण दूं। पुत्र की महत्ता पर प्रकाश डालूं कि पुत्र ही पिता की नरक से रक्षा करता है। बुढ़ापे का सहारा होता है। पिंड देनेवाला होता है। वंश की वृद्धि करता है। हालांकि ये वाक्य अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थों के हैं पर हैं अत्यंत प्रभावशाली। किन्तु मैं इस तरह की योजना ही बनाता रहा। मैं बड़े बाबू को कुछ भी नहीं कह सका। मैं एक आतंकित नौकर की तरह उनके पीछे-पीछे चलता रहा।

कभी-कभी वे मुझपर दृष्टि फेंक देते थे शायद मेरे मनोभावों को पढ़ने के लिए पर मैं उनसे चार नजर नहीं होता था और मैं दीवारों पर दृष्टि-विक्षेप कर देता था। वे कुछ विशेष गंभीर हो गए। मैंने उनसे पूछा "दीवारों की नक्काशी बड़ी कलात्मक है।"

उत्तर में वे केवल मुस्करा-भर दिए थे।

आज से कई वर्ष पहले मैं इस घर में बराबर आता था। मैं भी यहीं रहता था पर यह संयोग ही समझिए कि आज मुझे इस घर में दुखद घटना पर आना पड़ा है। क्योंकि संतोष घर से मरने की धमकी देकर भाग गया है। मैं नास्तिक हूं फिर भी किसी शक्ति से प्रार्थना करता हूं कि वह संतोष को सही-सलामत घर वापस भेज दे। यह प्रार्थना करना क्या आस्तिकता का चिह्न नहीं ? खैर, यह दूसरा विषय है। मैं बड़े बाबू के साथ उनके कमरे में गया। कमरा क्या था पूरा सामन्ती महल था। बड़े-बड़े झाड़-फानूस और आदमकद शीशे। दो पलंग शीशम की लकड़ी के जिनके दोनों तरफ मयूरों की आकृतियां बनी थीं। फर्श पर बढ़िया गलीचा था जिसमें एक शेर एक गाय को मार रहा था। मैंने उन्हें हठात् पूछा "आप हिन्दू हैं फिर आपने गाय को मारनेवाले गलीचे को क्यों खरीदा ?"

वे धीमे से हंसे। उनकी हंसी का अभिप्राय मैं तुरन्त समझ गया कि वे मुझे बेवकूफ समझ रहे हैं। फिर भी मैंने अपनी आकृति को गंभीर बनाए रखा ताकि उनकी हंसी से उत्पन्न मेरे चेहरे की झेंप उन्हें न दीखे।

वे आरामकुर्सी पर बैठते हुए बोले, "यह इसलिए खरीदकर लाया हूं ताकि लोग यह समझते रहें कि गाय बेचारी कितनी भली और सीधी होती है पर जो जन्म से हिंसक होता है वह उस निर्दोष पर भी प्रहार किए बिना नहीं रह सकता। यह दृश्य मुझे गाय की रक्षा के लिए सदा प्रेरित करता है। खैर, मैं तुम्हें एक बात बताने आया हूं। संतोष जाते समय एक पत्र छोड़ गया था। मैं उस पत्र को तुम्हें दिखाना चाहता हूं। रही संतोष की बीबी की बात। वह तुमसे तीन दिन के बाद भेंट करेगी। अभी वह मिलने और ठीक से बातचीत करने की स्थिति में नहीं है। बहुत दुःखी और आवेश में है। उसका मन घोर एकांत और शून्यता पाकर संतोष प्राप्त करेगा। उसके पास दो दासियां भी हैं।'

"लेकिन आपको संतोष की खोज जोर-शोर से करनी चाहिए। कहीं उसने

कुछ कर लिया तो आपके घर का चिराग बुझ जाएगा।"

"नहीं गुरु, मेरे घर का चिराग नहीं बुझ सकता।" उन्होंने दृढ़ता से कहा "फिर, वह मुझे इस तरह सताया करेगा तो मैं उसकी चिंता नहीं करूंगा। लोग औलाद को सुख के लिए पाल-पोसकर बड़ा करते हैं, परेशानी के लिए नहीं पर तुम्हारा दोस्त मुझे ऐसी गलत धमकियां देने लगा है यह मुझे अच्छा नहीं लगता। संतोष की बहू नीता उसके कारण कितनी दुखी है! बेचारी तीन दिन से कुछ भी खा-पी नहीं रही है। रही उसकी रेडी से खोज की बात सो मैं इसके सर्वथा पक्ष में नहीं हूं। इससे उसका महत्त्व बढ़ जाएगा और तब कोई चोर-डाकू उसे अपने कब्जे में करके मुझसे दस-बीस लाख की मांग कर लेगा। फिर इस तरह की चर्चाएं कुटुम्ब के गौरव पर भी धब्बा लगाती हैं। मैं ऐसी चर्चाओं को गूंगी बनाकर रख देना चाहता हूं। घर के नौकर जो मुझसे अत्यन्त आतंकित हैं, वे इस घटना की ओर अधिक ध्यान नहीं देते। वे जानते हैं कि छोटे बाबू काम से बाहर गए हुए हैं। पर हां नीता के कारण मुझे तुम्हें बुलाना पड़ा। जरा सोचो न वह कहती है कि यदि संतोष लौटकर नहीं आया तो वह आत्महत्या कर लेगी। यह तो लैला-मजनू का किस्सा हो गया। गुरु आखिर वह घर से क्यों चला गया यह मेरी समझ में नहीं आया। हर बात का निर्णय हम बैठकर भी कर सकते हैं। पत्नी पर उसके द्वारा लगाए गए आक्षेप सर्वथा गलत हैं। मैं नीता को जानता हूं—वह एक पवित्र और शुद्ध आत्मा है। उसके चेहरे और मुख पर वैसी ही आभा है जैसी तुम पुराणों में वर्णित सतियों के चेहरों पर पाते हो। वह हृदय से इतनी ही कोमल और दयालु है जितना हमारा ईश्वर। फिर ये आंखें हमारी आन्तरिक कुटिलता का पर्दाफाश किए बगैर नहीं रह सकतीं।" और तुम नीता की बड़ी-बड़ी गहरी-गहरी आंखों में आंखें डालकर देखोगे तो तुम्हें लगेगा कि उसकी आंखों में कृष्ण की मैया यशोदा की ममता सावित्री की निष्ठा और अनुकम्पा का सा रूप है। वह निर्मल हृदया है। सच मैं केवल उसीके आगे नतमस्तक होता हूं। अगर उसने आत्म-हत्या कर ली तो मुझे सचमुच बहुत दुख होगा।" वे एकदम चुप हो गए। एक गहरी वेदना उनके मुख पर छा गई। मैं खुद उनके दुख से दुखी हो गया।

वे उठे। उनके मुख पर रहस्यमरी मुस्कान की क्षीण रेखाएं चमकीं और उन्होंने एक पत्र मेरे हाथ में थमा दिया। मैं उस पत्र को लेकर पढ़ने लगा—

सादर पिताजी

मैं आत्महत्या करने के लिए जा रहा हूं। मैं इस पत्नी के रहते इस घर में नहीं रह सकता। वह सचमुच कुलटा है। यह उसने अपने मुख से स्वीकार किया है। उसका सहवास मुझे रात-दिन पीड़ा दे रहा है। मुझे हर आदमी की हंसी एक ऐसा क्रूर व तीखा व्यंग्य लग रही है जो मुझे चैन से सोने भी नहीं देती। मैं हर घड़ी उद्विग्न रहता हूं। चैन की मुझे एक सांस भी नसीब नहीं है। क्या करूं? उस कुलटा का सामना भी मुझे सहन नहीं। जिसने अपने पाप को छिपाकर मेरे सम्मान को खत्म कर दिया।

मुझे अब मालूम हुआ है कि यह लड़की ठीक नहीं है। मुझे इसने एक ऐसी दुश्चिन्ता और अपमान के वातावरण में छोड़ दिया है जो मेरे लिए असह्य है। एक मर्द जो सदा अपने आदमियों में अपनी श्रेष्ठता और महत्ता का उद्घोष करता आया है, वह एक पतिता का पति बनकर कैसे जी सकता है! अब पिताजी मेरे परिचितों की खोखली हंसी जिसमें मर्मान्तिक विद्रूप से भरी होती है मानो उन सभी को मेरी दशा पर तरस है। मानो वे हरदम कहते रहते हैं कि देखो बेचारे की बहू भी

और आपके सामने मैं कुछ अधिक कह नहीं सकता। इसलिए, मैंने यह रास्ता निकाला है। मैं उस जैसी स्त्री का पति होकर जीवित नहीं रह सकता और आप अपनी बहू को सती-साध्वी से कम मानने को तैयार नहीं हैं। एक बार नहीं सौ बार मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि आप मुझे क्षमा कर दें। —संतोष

पत्र मैंने पढ़ लिया।

मेरे लिए यह एक सर्वथा रहस्यमय घटना थी। बड़े बापू के कथन में और इस पत्र के अनुसार सतोष की बीबी गीता के चरित्र के बारे में कोई स्पष्ट धारणा मैं नहीं बना सका। यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं संतोष के विवाह पर

कुछ कर लिया तो आपके घर का चिराग बुझ जाएगा।"

"नहीं बुझ मेरे घर का चिराग नहीं बुझ सकता।" उन्होंने दृढ़ता से कहा "फिर, वह मुझे इस तरह सताया करेगा तो मैं उसकी चिंता नहीं करूंगा। लोग औलाद को सुख के लिए पाल-पोसकर बड़ा करते हैं, परेशानी के लिए नहीं पर तुम्हारा दोस्त मुझे ऐसी गलत धमकियां देने लगा है, यह मुझे अच्छा नहीं लगता। संतोष की बहू नीता उसके कारण कितनी दुखी है! बेचारी तीन दिन से कुछ भी खा-पी नहीं रही है। रही उसकी तेजी से खोज की बात सो मैं इसके सर्वथा पक्ष में नहीं हूं। इससे उसका महत्त्व बढ़ जाएगा और तब कोई चोर-डाकू उसे अपने कब्जे में करके मुझसे दस-बीस लाख की मांग कर लेगा। फिर इस तरह की चर्चाएं कुटुम्ब के गौरव पर भी धब्बा लगाती हैं। मैं ऐसी चर्चाओं को गूंगी बनाकर रख देना चाहता हूं। घर के भीतर जो मुझसे अत्यन्त आतंकित हैं वे इस घटना की ओर अधिक ध्यान नहीं देते। वे जानते हैं कि छोटे बाबू काम से बाहर गए हुए हैं। पर हां नीता के कारण मुझे तुम्हें बुलाना पड़ा। जरा सोचो न वह कहती है कि यदि संतोष लौटकर नहीं आया तो वह आत्महत्या कर लेगी। यह तो लैला-मजनूं का किस्सा हो गया। खूब आखिर वह घर से क्यों चला गया यह मेरी समझ में नहीं आया। हर बात का निर्णय हम बैठकर भी कर सकते हैं। पत्नी पर उसके द्वारा लगाए गए आक्षेप सर्वथा गलत हैं। मैं नीता को जानता हूं—वह एक पवित्र और शुद्ध आत्मा है। उसके चेहरे और मुख पर वैसी ही आभा है जैसी तुम पुराणों में वर्णित सतियों के चेहरों पर पाते हो। वह हृदय से उतनी ही कोमल और दयालु है जितना हमारा ईश्वर। फिर ये आंखें हमारी आन्तरिक कुटिलता का पर्दाफाश किए बगैर नहीं रह सकतीं।" और तुम नीता की बड़ी-बड़ी गहरी-गहरी आंखों में आंखें डालकर देखोगे तो तुम्हें लगेगा कि उसकी आंखों में कृष्ण की मैया यशोदा की ममता सावित्री की निष्ठा और अनुकम्पा का सा रूप है। वह निर्मल हृदया है। सच मैं केवल इसीके आगे नतमस्तक होता हूं। अगर उसने आत्महत्या कर ली तो मुझे सचमुच बहुत दुःख होगा।" वे एकदम चुप हो गए। एक गहरी वेदना उनके मुख पर छा गई। मैं खुद उनके दुख से दुखी हो गया।

वे उठे। उनके मुख पर रहस्यभरी मुस्कान की क्षीण रेखाएं चमकीं और उन्होंने एक पत्र मेरे हाथ में थमा दिया। मैं उस पत्र को लेकर पढ़ने लगा—

पूज्य पिताजी

मैं आत्महत्या करने के लिए जा रहा हूं। मैं इस पत्नी के रहते इस घर में नहीं रह सकता। वह सचमुच कुलटा है। यह उसने अपने मुख से स्वीकार किया है। उसका वह्वाव मुझे रात-दिन पीड़ा दे रहा है। मुझे हर आदमी की हंसी एक ऐसा क्रूर व तीखा व्यंग्य लग रही है जो मुझे चैन से सोने भी नहीं देती। मैं हर घड़ी व्यथित रहता हूं। चैन की मुझे एक सांस भी नसीब नहीं है। क्या करूं? उस कुलटा का साया भी मुझे सहन नहीं। जिसने अपने पाप को छिपाकर मेरे सम्मान को खत्म कर दिया।

मुझे अब मालूम हुआ है कि वह लड़की ठीक नहीं है। मुझे इसने एक ऐसी दुश्चिंता और अपमान के वातावरण में छोड़ दिया है जो मेरे लिए असह्य है। एक मर्द जो सदा अपने आदमियों में अपनी श्रेष्ठता और महत्ता का उद्घोष करता आया है, वह एक पतिता का पति बनकर कैसे जी सकता है। अब पिताजी मेरे परिचितों की खोखली हंसी कितने मर्मान्तिक विद्रूप से भरी होती है मानो उन सभी को मेरी दशा पर तरस है। मानो वे हरदम कहते रहते हैं कि देखो बेचारे की बहू भी

और आपके सामने मैं कुछ अधिक कह नहीं सकता। इसलिए, मैंने यह रास्ता निकाला है। मैं उस जैसी स्त्री का पति होकर जीवित नहीं रह सकता और आप अपनी बहू को सती-साध्वी से कम मानने को तैयार नहीं हैं। एक बार नहीं सौ बार मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि आप मुझे क्षमा कर दें। —संतोष

पत्र मैंने पढ़ लिया।

मेरे लिए यह एक सर्वथा रहस्यमय घटना थी। बड़े बाबू के कथन से और इस पत्र के अनुसार संतोष की बीबी गीता के चरित्र के बारे में कोई स्पष्ट धारणा मैं नहीं बना सका। यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं संतोष के विवाह पर

कुछ कर लिया तो आपके घर का चिराग बुझ जाएगा।

"नहीं बुझ मेरे घर का चिराग नहीं बुझ सकता।' उन्होंने दृढ़ता से कहा 'फिर, वह मुझे इस तरह सताया करेगा तो मैं उसकी चिंता नहीं करूंगा। लोग औलाद को सुख के लिए पाल-पोसकर बड़ा करते हैं, परेशानी के लिए नहीं पर तुम्हारा दोस्त मुझे ऐसी गलत धमकियां देने लगा है, यह मुझे अच्छा नहीं लगता। संतोष की बहू गीता उसके कारण कितनी दुःखी है! बेचारी तीन दिन से कुछ भी खा-पी नहीं रही है। रही उसकी देखी से खोज की बात सो मैं इसके सर्वथा पक्ष में नहीं हूं। इससे उसका महत्त्व बढ़ जाएगा और तब कोई चोर-डाकू उसे अपने कब्जे में करके मुझसे दस-बीस लाख की मांग कर लेगा। फिर इस तरह की चर्चाएं कुटुम्ब के गौरव पर भी धब्बा लगाती हैं। मैं ऐसी चर्चाओं की गूंगी बनाकर रख देना चाहता हूं। घर के नौकर जो मुझसे अत्यन्त आतंकित हैं वे इस घटना की ओर अधिक ध्यान नहीं देते। वे जानते हैं कि छोटे बाबू काम से बाहर गए हुए हैं। पर हां गीता के कारण मुझे तुम्हें बुलाना पड़ा। जरा सोचो न वह कहती है कि यदि संतोष लौटकर नहीं आया तो वह आत्महत्या कर लेगी। यह तो लैला-मजनूं का किस्सा हो गया। इस आखिर वह घर से क्यों चला गया यह मेरी समझ में नहीं आया। हर बात का निर्णय हम बैठकर भी कर सकते हैं। पत्नी पर उसके द्वारा लगाए गए आक्षेप सर्वथा गलत हैं। मैं गीता को जानता हूं—वह एक पवित्र और शुद्ध आत्मा है उसके चेहरे और मुख पर वैसी ही आभा है जैसी तुम पुराणों में वर्णित सतियों के चेहरों पर पाते हो। वह हृदय से इतनी ही कोमल और दयालु है जितना हमारा ईश्वर। फिर ये बातें हमारी आन्तरिक कुटिलता का पर्दाफाश किए बगैर नहीं रह सकतीं। और तुम गीता की बड़ी-बड़ी गहरी-गहरी आंखों में आंखें डालकर देखोगे तो तुम्हें लगेगा कि उसकी आंखों में कृष्ण की मैया यशोदा की ममता सावित्री की निष्ठा और सुकन्या का सा तप है। वह निर्मल हृदया है। सच मैं केवल उसीके आगे नतमस्तक होता हूं। अगर उसने आत्महत्या कर ली तो मुझे सचमुच बहुत दुःख होगा। वे एकदम चुप हो गए एक गहरी वेदना उनके मुख पर छा गई। मैं खुद उनके दुःख से दुःखी हो गया।

बे उठे। उनके मुख पर रहस्यभरी मुस्कान की क्षीण रेखाएं चमकीं और उन्होंने एक पत्र मेरे हाथ में थमा दिया। मैं उस पत्र को लेकर पढ़ने लगा—

आदरणीय पिताजी

मैं आत्महत्या करने के लिए जा रहा हूं। मैं इस पत्नी के रहते इस घर में नहीं रह सकता। यह सचमुच कुलटा है। यह उसने अपने मुख से स्वीकार किया है। उसका सहवास मुझे रात-दिन पीड़ा दे रहा है। मुझे हर आदमी की हंसी एक ऐसा क्रूर व तीखा व्यंग्य लग रही है जो मुझे चैन से सोने भी नहीं देती। मैं हर घड़ी खिन्न रहता हूं। चैन की मुझे एक सांस भी नसीब नहीं है। क्या करूं? उस कुलटा का साया भी मुझे सहन नहीं। जिसने अपने आप को छिपाकर मेरे सम्मान को खत्म कर दिया।

मुझे अब मालूम हुआ है कि यह लड़की ठीक नहीं है। मुझे इसने एक ऐसी दुश्चिन्ता और अपमान के वातावरण में छोड़ दिया है जो मेरे लिए असह्य है। एक मर्द जो सदा अपने आदमियों में अपनी श्रेष्ठता और महत्ता का उद्घोष करता आया है, वह एक पतिता का पति बनकर कैसे जी सकता है! सच पिताजी मेरे परिचितों की खोखली हंसी कितने मर्मान्तिक विद्रूप से भरी होती है मानो उन सभी को मेरी दशा पर तरस है। मानो वे हरदम कहते रहते हैं कि देखो बेचारे को यह भी

और आपके सामने मैं कुछ अधिक कह नहीं सकता। इसलिए, मैंने यह रास्ता निकाला है। मैं उन जैसी स्त्री का पति होकर जीवित नहीं रह सकता और आप अपनी बहू को सती-साध्वी से कम मानने को तैयार नहीं हैं। एक बार नहीं सौ बार मैं आपसे प्रार्थना करूंगा कि आप मुझे क्षमा कर दें। —संतोष

पत्र मैंने पढ़ लिया।

मेरे लिए यह एक सर्वथा रहस्यमय घटना थी। बड़े बापू के कथन में और इस पत्र के अनुसार संतोष की बीवी नीला के चरित्र के बारे में कोई धारणा मैं नहीं बना सका। यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं संतोष के

नहीं आ सका। उस समय कम से कम गीता भाभी से तो मिल लेता। पर जो हो गया उसके लिए सोचना व्यर्थ है।

"अब तुम्हीं बताओ।" बड़े बाबू ने मेरे विचारों को भंग करते हुए कहा, "ये समझदार आदमी की बातें हो सकती हैं? कुछ मित्रों ने बहकाया दिया और कुछ अपने विवेक को खो बैठा! यह हिन्दी फिल्मों का प्रभाव है। जीवन की घटनाओं को बिना समझे, केवल नाटकीय दृश्य उत्पन्न करने के लिए वे व्यर्थ की भावुकता को उभारकर आज के युवकों को गलत राह दे रहे हैं।"

"मगर बाबू जी" ।"

"सुनो पुत्र मैं जीवन में गलत परम्परा को डालने का इच्छुक नहीं हूँ। तुम यह चाहते हो कि तुम्हारा दोस्त भविष्य में मुझे बात-बात पर तंग करे। मैं चाहता हूँ कि वह साधारण प्राणी की तरह संतुष्ट जीवन गुजारे। वह मेरी आज्ञा और इच्छा के परे भी विरुद्ध न चले।" "और वह मुझे इस तरह का वाहियात खत लिखकर चला गया। मैं इसे सहन नहीं कर सकता। मैं नहीं चाहता कि एक अयोग्य और मूर्ख पुत्र के लिए पागलों की तरह विलाप करूँ और रो रोकर निढाल हो जाऊँ? मैं एक वीर और पत्थरदिल इन्सान हूँ। मैं यह चाहता हूँ कि वह स्वयं आए और मुझसे क्षमा माँगे।"

उनका कहना अत्यन्त प्रभावशाली था। उनके कथन में एक निश्चितता थी जैसे खोया हुआ संतोष पा जाएगा। क्या वह आ जाएगा? मैंने भी अपने आपसे ऐसा प्रश्न किया। उत्तर में मस्तक पर धुंधले-धुंधले बादल छा गए।

इसी रात बड़े बाबू को बम्बई से बुलाने का ट्रंक आ गया। उनकी एक फैक्टरी में मजदूर हड़ताल करने जा रहे थे। स्थिति बिगड़ने को थी। वहाँ के मैनेजर ने स्पष्ट रूप से यह लिख दिया था कि अगर आप नहीं आए तो स्थिति असंतोषजनक हो सकती है। अतः बड़े बाबू को वहाँ से जाना पड़ा। उनके जाते ही मैं घिर सा गया। मेरा मस्तिष्क दूने वेग से कार्य करने लगा। उत्साह और उमंग मेरी नस-नस में समा गए।

जाते समय बड़े बाबू ने रोष भरे स्वर में मुझसे कहा था "अब तुम्हीं कहो अगर वह होता तो मुझे यहाँ जाना नहीं पड़ता। वस्तुतः वह एक अयोग्य

ही मूर्ख लगता है। किन्तु मैं तुम्हें आज्ञा के साथ-साथ आग्रह भी कर रहा हूं कि आदमी की अधिक चतुराई उसके सिर में धूल डलवा देती है।"

मैं उनका संकेत समझ गया था। वे मुझे शांति से पड़े रहने को कह रहे थे। पर मैंने उसकी किंचित् भी परवाह नहीं की। मैंने अपना कार्य आरम्भ कर दिया। मुझे रह रहकर यह ख्याल आता था कि सम्पत के अन्तस् में बड़े बाबू के जीवन के अप्रकाश पृष्ठ अंकित हैं। मैं पुनः उसीसे मिला।

उसने मुझे देखते ही कहा "मैं समझता हूं कि कुंज बाबू, आप मेरे पास मेरी जवानी की रोचक घटनाएं सुनने के लिए आए हैं।"

मैंने कहा, 'हां।'

"फिर सवेरे आना।"

बिजली पीछे की ओर जल रही थी इसलिए मैं सम्पत के चेहरे के भावों को नहीं पढ़ सका। पर मुझे यह विश्वास हो गया था कि वह नशे में है और अभी उसका सावधानी से बोलना सम्भव नहीं है। मैं वापस आकर अपने कमरे में सो गया।

एक नौकर दूध रख गया। मैंने दूध पी लिया और पुस्तक पढ़ने लगा। न मालूम मुझे कब नींद आ गई।

सुबह-सुबह ही मैं सम्पत के पास पहुंचा।

सम्पत सोया हुआ था। मैंने उसे उठाया। वह उठकर अपने चारों ओर लिहाफ लपेटकर बोला, "क्या है कुंज बाबू?"

मैंने उसे कहा "अभी तक आप नहीं उठे?"

"मैं कभी का उठ गया था।"

"सच?"

"हां। मैंने बीच-बीच में जब कभी भी अपनी आंखें खोलीं, मुझे आपका ही ध्यान आया। मैं सोचने लगा कि अपनी जवानी की मधुर स्मृतियां आपको सुनाकर मेरा मन अत्यन्त प्रसन्न होगा।...यह नौकरानी मुझे कितना कृत्रिम पर उत्तेजित प्रेम करती थी!"

"तो मैं ।"

नहीं आ सका। उस समय कम से कम मीता भाभी से तो मिल लेता। पर जो हो गया उसके लिए सोचना व्यर्थ है।

"अब तुम्हीं बताओ। बड़े बाबू ने मेरे विचारों को भंग करते हुए कहा "ये समझदार आदमी की बातें हो सकती हैं? कुछ मित्रों ने बरगला दिया और खुद अपने विश्वास को खो बैठा। यह हिन्दी फिल्मों का प्रभाव है। जीवन की घटनाओं को बिना समझे, केवल नाटकीय दृश्य उत्पन्न करने के लिए वे व्यर्थ की भावुकता को उभारकर आज के युवकों को गलत राह दे रहे हैं।

"आप जरा सी ।"

"सुनो बृज मैं जीवन में गलत परम्परा को डालने का इच्छुक नहीं हूं। तुम यह चाहते हो कि तुम्हारा दोस्त भविष्य में मुझे बात-बात पर तंग करे। मैं चाहता हूं कि यह साधारण प्राणी की तरह संतुष्ट जीवन गुँजारे। वह मेरी आज्ञा और इच्छा के जरा भी विरुद्ध न चले। "और वह मुझ इस तरह का वाहियात खत लिखकर चला गया। मैं इसे सहन नहीं कर सकता। मैं नहीं चाहता कि एक अयोग्य और मूर्ख पुत्र के लिए पागलों की तरह विलाप कर और रो-रोकर निढाल हो जाऊं ? मैं एक वीर और पत्थरदिल इन्सान हूं। मैं यह चाहता हूं कि वह स्वयं आए और मुझसे क्षमा मांगे।"

उनका कहना अत्यन्त प्रभावशाली था। उनके कथन में एक निश्चितता थी जैसे खोया हुआ संतोष आ जाएगा। क्या वह आ जाएगा ? मैंने भी अपने आपसे ऐसा प्रश्न किया। उत्तर में अन्तस् पर धुंधले-धुंधले बादल छा गए।

इसी रात बड़े बाबू को बम्बई से बुलाने का ट्रंक आ गया। उनकी एक फैक्टरी में मजदूर हड़ताल करने जा रहे थे। स्थिति बिगड़ने को थी। वहां के मैनेजर ने स्पष्ट रूप से यह लिख दिया था कि अगर आप नहीं आए तो स्थिति असंतोषजनक हो सकती है। अत: बड़े बाबू को वहां से जाना पड़ा। उनके जाते ही मैं फिर हो गया। मेरा जासूस दूने वेग से कार्य करने लगा। उत्साह और उमंग मेरी नस-नस में समा गए।

जाते समय बड़े बाबू ने रोष-भरे स्वर में मुझसे कहा था "अब तुम्हीं कहो अगर वह होता तो मुझे वहां जाना नहीं पड़ता। वस्तुत: वह एक अत्यन्त

ही मूर्ख लड़का है। किन्तु मैं तुम्हें मात्रा के साथ-साथ आग्रह भी कर रहा हूं कि आदमी की अधिक चतुराई उसके सिर में धूल डलवा देती है।"

मैं उनका संकेत समझ गया था। वे मुझे शांति से पड़े रहने को कह रहे थे। पर मैंने उसकी किंचित् भी परवाह नहीं की। मैंने अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया। मुझे रह-रहकर यह ख्याल आता था कि सम्पत के मस्तिष्क में बड़े बाबू के जीवन के प्रच्छन्न पृष्ठ अंकित हैं। मैं पुनः उसीसे मिला।

उसने मुझे देखते ही कहा "मैं समझता हूं कि बृज बाबू, आप मेरे पास मेरी जवानी की रोचक घटनाएं सुनने के लिए आए हैं।"

मैंने कहा "हां।"

'फिर सवेरे आना।"

बिजली पीछे की ओर जल रही थी इसलिए मैं सम्पत के चेहरे के भावों को नहीं पढ़ सका। पर मुझे यह विश्वास हो गया था कि वह नशे में है और अभी उसका सावधानी से बोलना सम्भव नहीं है। मैं वापस आकर अपने कमरे में सो गया।

एक नौकर दूध रख गया। मैंने दूध पी लिया और पुस्तक पढ़ने लगा। न मालूम मुझे कब नींद आ गई।

सुबह-सुबह ही मैं सम्पत के पास पहुंचा।

सम्पत सोया हुआ था। मैंने उसे उठाया। वह उठकर अपने चारों ओर लिहाफ लपेटकर बोला "क्या है बृज बाबू ?

मैंने उसे कहा "अभी तक आप नहीं उठे ?"

"मैं कभी का उठ गया था।"

"सच ?"

'हां। मैंने बीच-बीच में जब कभी भी अपनी आंखें खोलीं मुझे आपका ही ध्यान आया। मैं सोचने लगा कि अपनी जवानी की मधुर स्मृतियां आपको सुनाकर मेरा मन परमानन्द प्रसन्न होगा। वह नौकरानी मुझे कितना कृत्रिम पर उत्तेजित प्रेम करती थी !"

'तो मैं'' ।"

वह मुझे रोककर बोला "ठहरो।" फिर उसने ऊंचे स्वर में कहा "भो री सीता सीता भो!"

मैंने देखा वही नौकरानी हाथ में पानी का गिलास लिए हुए आ रही है। अत्यन्त कृशकाय और सूखी-सूखी। वह संभल-संभलकर कदम उठा रही थी। उसकी आंखें नीली और आकर्षक थीं और उन्हीं से उसके यौवन-काल के सौंदर्य को आंका जा सकता था। यह सही था कि वह अपने यौवनकाल में अत्यन्त तेजमयी व आकर्षक रही होगी। उसके अन्तराल से प्रेम का निर्झर निरन्तर झर्झरित होता रहा होगा क्योंकि उसकी आंखों में ममता की दीप्ति मुखर थी।

उससे मेरा प्रथम बार ही साक्षात् हुआ था। वह मुझे देखकर ठिठकी। उसका ठिठकना मुझे एक तरुणी के स्वभाव-सा लगा। इस अवस्था में ठिठकना सहज स्वाभाविक नहीं लगता। मैंने यह भी अनुमान लगाया कि वह मुझे बैठा कहेगी पर उसने मुझे इस तरह भी सम्बोधित नहीं किया। वह अपना घूंघट थोड़ा-सा खिसकाकर बोली "आज आप जल्दी उठ गए।"

वह खिलखिलाकर मूठ बोला "नहीं तो? कुछ बाबू ने उठा दिया। वरना अफीमची का जल्दी से उठना संभव नहीं हो सकता।" कहते-कहते उसने सीता के हाथ से पानी का गिलास लेकर अफीम की एक डली निकाली। आंखें बन्द कीं। सीता चली गई। वह होंठ फड़काता रहा जैसे कोई मंत्र बोल रहा हो। फिर वह प्रकट में बोला "न सी जिसने अफीम की डली उस लड़के से लड़की भली। जो लेवे अफीम की डली उसकी खिल जाए कली-कली। अफीम देवा है मैया।" और उसने अफीम खा लिया। इस कार्य से निवृत्त होते ही वह बोला "अरे, सीता चली गई? वह तुमसे शर्मा गई कुछ बाबू, अन्यथा वह मुझसे दो-चार प्रेम की बातें अवश्य करती।"

मैंने विषय को बदलते हुए कहा "आप मुझे बड़े बाबू के बारे में कुछ बता न?"

"हां हां!"

फिर बताइए न?

वह कुछ देर तक विचारता रहा। गहरा सन्नाटा। मैं उत्सुकता से उसके चेहरे को देखता रहा।

वह बोला "बड़े बाबू जल्लाद हैं। उस लालची की तरह निर्दय और स्वार्थी हैं जो सोने के अंडों के मोह में मुर्गी को भी मार डालता है। पौराणिक कथा में वर्णित दैत्य और उनमें कुछ भी अन्तर नहीं है।

वह जलती आंखों से मुझे देखने लगा। उसके स्वर में घृणा बोल रही थी। मैं डर-सा गया। मुझे लगा कि नशे के कारण वह अपनी सहज बुद्धि को खो चुका है।

"आप मुझे इस तरह घूर घूरकर क्यों देख रहे हैं? क्या मैं झूठ बोल रहा हूं। मैं आपको कहता हूं कि बड़े बाबू किसी राक्षस से कम नहीं हैं।"

"पर ?"

"मेरी समझ में आप अभी मीता बहू से मिल लीजिए।

"पर बड़े बाबू ने उससे दो दिन के बाद मिलने को कहा है।" मैंने सोचा कि यह अचानक विषयान्तर क्यों हो गया।

वह बोला "बड़े बाबू को किसीसे प्यार और मोह नहीं है। वे सम्पत्ति के सागर में डूबकर पागलों की तरह चीखना चाहते हैं। पर मैं आपको वैसा नहीं समझता। आप उनकी तरह अनुभूतिहीन नहीं हो सकते। आप जाइए और पता लगाइए।'

मैं क्या करता? मैं सीधा मीता के पास गया। मीता की आंखें रो-रोकर सूज गई थीं। सूजी हुई आंखों और उतरे हुए मुख ने मुझे भी उदास कर दिया। मैं एक कुर्सी पर बैठ गया। अपना परिचय दिया। उसने मुझे पहचान लिया। उसकी आंखें सजल हो उठीं। वह मधुर स्वर में एक-एक शब्द को तोल तोलकर बोली "आपका इस समय आना मेरे लिए अत्यन्त शुभ रहेगा। मैं अकेली घबरा रही थी।"

"बड़े बाबू का पत्र पाते ही मैंने यहां आना अपना कर्तव्य समझ लिया। आप जानती हैं—मैं उसका बचपन का संगी हूं। बचपन में हम दोनों कृष्ण सुदामा की तरह रहते थे—एक-दूसरे के सुख-दुख के हिस्सेदार।"

वह मुझे रोककर बोला, "ठहरो !" फिर उसने ऊँचे स्वर में कहा "ओ री सीता'''सीता ओ !"

मैंने देखा वही नौकरानी हाथ में पानी का गिलास लिए हुए आ रही है। अत्यन्त कृशकाय और सूखी-सूखी। वह संभल-संभलकर कदम उठा रही थी। उसकी आँखें नीली और आकर्षक थीं और उन्हीं से उसके यौवन-काल के सौंदर्य को आंका जा सकता था। यह सही था कि वह अपने यौवनकाल में अत्यन्त तेज मयी व आकर्षक रही होगी। उसके अन्तरतम से प्रेम का निर्झर निरन्तर प्रस्फुटित होता रहा होगा क्योंकि उसकी आँखों में भावना की दीप्ति मुखर थी।

उससे मेरा प्रथम बार ही साक्षात् हुआ था। वह मुझे देखकर ठिठकी। उसका ठिठकना मुझे एक तरुणी के स्वभाव-सा लगा। इस अवस्था में ठिठकना सहज स्वाभाविक नहीं लगता। मैंने यह भी अनुमान लगाया कि वह मुझे बेटा कहेगी पर उसने मुझे इस तरह भी सम्बोधित नहीं किया। वह अपना घूँघट थोड़ा-सा खिसकाकर बोली "आज आप जल्दी उठ गए।"

वह खिलखिलाकर झूठ बोला "नहीं तो ? कुज बाबू ने उठा दिया। वरना अफीमची का जल्दी से उठना संभव नहीं हो सकता।" कहते-कहते उसने सीता के हाथ से पानी का गिलास लेकर अफीम की एक डली निकाली। आँखें बन्द कीं। सीता चली गई। वह होंठ फड़फड़ाता रहा जैसे कोई मंत्र बोल रहा हो। फिर वह प्रकट में बोला "न ली जिसने अफीम की डली उस लड़के से लड़की भली। जो लेवे अफीम की डली उसकी खिल जाए कली-कली। अफीम देवा दे मेवा।" और उसने अफीम खा लिया। इस कार्य से निवृत्त होते ही वह बोला "अरे, सीता चली गई ? वह तुमसे शर्मा गई कुंज बाबू, अन्यथा वह मुझसे बार-बार प्रेम की बातें अवश्य करती।"

मैंने विषय को बदलते हुए कहा "आप मुझे बड़े बाबू के बारे में कुछ बता रहे थे न ?"

"हाँ हाँ !"

"फिर बताइए न ? आज वे यहाँ हैं भी नहीं।

वह कुछ देर तक विचारता रहा। गहरा सन्नाटा। मैं उत्सुकता से उसके चेहरे को देखता रहा।

वह बोला "बड़े बाबू जल्लाद हैं। उस लालची की तरह निर्दय और स्वार्थी हैं जो सोने के अंडों के मोह में मुर्गी को भी मार डालता है। पौराणिक कथा में वर्णित दैत्य और उनमें कुछ भी अन्तर नहीं है।

वह जलती आँखों से मुझे देखने लगा। उसके स्वर में घृणा बोल रही थी। मैं डर-सा गया। मुझे लगा कि नशे के कारण वह अपनी सहज बुद्धि को खो चुका है।

"आप मुझे इस तरह घूर घूरकर क्यों देख रहे हैं? क्या मैं झूठ बोल रहा हूँ। मैं आपको कहता हूँ कि बड़े बाबू किसी राक्षस से कम नहीं हैं।"

"पर… ?"

"मेरी समझ में आप अभी गीता बहू से मिल लीजिए।"

"पर बड़े बाबू ने उससे दो दिन के बाद मिलने को कहा है।" मैंने सोचा कि यह अचानक विषयान्तर क्यों हो गया।

वह बोला "बड़े बाबू को किसीसे प्यार और मोह नहीं है। वे सम्पत्ति के सागर में डूबकर पागलों की तरह चीखना चाहते हैं। पर मैं आपको वैसा नहीं समझता। आप उनकी तरह अनुभूतिहीन नहीं हो सकते। आप जाइए और पता लगाइए।"

मैं क्या करता? मैं सीधा गीता के पास गया। गीता की आँखें रो-रोकर सूज गई थीं। सूजी हुई आँखों और उतरे हुए मुख ने मुझे भी उदास कर दिया। मैं एक कुर्सी पर बैठ गया। अपना परिचय दिया। उसने मुझे पहचान लिया। उसकी आँखें सजल हो उठीं। वह मधुर स्वर में एक-एक शब्द को तोल तोलकर बोली "आपका इस समय आना मेरे लिए अत्यन्त शुभ रहेगा। मैं अकेली घबरा रही थी।"

"बड़े बाबू का पत्र पाते ही मैंने यहाँ आना अपना कर्तव्य समझ लिया। आप जानती हैं—मैं उसका बचपन का संगी हूँ। बचपन में हम दोनों कृष्ण सुदामा की तरह रहते थे—एक-दूसरे के सुख-दुख के हिस्सेदार।"

"हाँ भाई साहब प्रायः वे आपकी चर्चा करते रहते थे। कई बार उनकी यह भी इच्छा होती थी कि वे आपके लिए किसी समाचारपत्र का प्रारम्भ करें ताकि यह त्रुटि भी समाप्त हो जाए, पर ससुरजी से भय खाते रहे।"

अभी तक मैंने एक जासूस की तरह उसके चेहरे के भावों का निरीक्षण नहीं किया था। अब मैंने पहली बार उसकी ओर देखा। मैं मंत्रमुग्ध-सा उसे देखता रहा। उसके चेहरे पर वही सौम्यता सौजन्य तथा पवित्रता थी जो पवित्र व सच्चरित्र स्त्री के चेहरे पर ही रहती है। मुझे लगा कि यह स्त्री कुलटा नहीं हो सकती। इसपर सन्देह करना भी अपराध होगा। अप्रत्याशित मैंने अपने-आपको रोका क्योंकि मैं भावुकता में बहने लगा था। एक जासूस के कर्तव्य के लिए भावुकता का बहुत कम महत्त्व रहता है। और भावुकता में किसीके चेहरे के अणुओं द्वारा अन्तस् की वास्तविकता को पा जाना अत्यन्त दुष्कर ही नहीं, असम्भव भी है, अतः मैं सावधानी से एक वैज्ञानिक की तरह उसे देखने लगा।

मैं प्रकट रूप में बोला "मैं उसके बंधुत्व को बड़े सम्मान की दृष्टि से देखता हूं। पर उस दुर्घटना के कारण मेरा मन दुखी हो गया है। क्या आप उसपर कुछ प्रकाश डाल सकती हैं?"

"मैं इतना ही जानती हूं कि सत्य का उद्घोष हानिप्रद ही नहीं सर्वनाश का सूचक भी हो सकता है। मैं चाहती तो उन्हें कुछ भी नहीं बताती पर मुझे क्या पता था कि उनकी निश्छलता में एक कलुषित जिज्ञासा है और उस जिज्ञासा के पीछे उनका संदेहयुक्त हृदय भी।" वह कुछ रुककर बोली "मैंने उनको सत्य सत्य कहा कि यह युवक मेरे प्रति चकर आकर्षित हुआ था। इसी चीज को लेकर उन्होंने मेरे जीवन को जहर बना दिया। अगर मैं समझती कि इस कारण इतनी बड़ी दुर्घटना घटनेवाली है तो मैं भी हजारों लड़कियों की तरह अतीत की इस साधारण घटना को स्वप्नवत् की घटना की तरह विस्मृति के गहरे गर्त में फेंक देती।"

"वह लड़का कौन था?"

"वह मेरे पड़ोस में रहता था। अच्छा लड़का था। छोटे बाबू ने उसे एक

बार देखा भी है। पर मैं यह नहीं समझी कि इस कारण वे घर छोड़कर आत्म-हत्या करने चले जाएँगे! मेरी और 'मार्कपित कुमार' कहना इतना बड़ा अपराध नहीं हो सकता! अगर वे इस संसार में नहीं रहेंगे तो मैं भी ऐसा लांछित व अपमानित जीवन लेकर जीवित नहीं रह सकती।

'मुझे लगता है कि इसमें कोई रहस्य है।" मैंने अपनी जासूसी बुद्धि का परिचय दिया।

"रहस्य के बारे में मेरी जानकारी कुछ भी नहीं है। पर मैं इतना दावे से कह सकती हूँ कि यह इतनी अपमानसूचक बात नहीं थी।" इसके पश्चात् उसने मुझे सारी बातें विस्तृत रूप में बताईं जिसपर मैं बाद में प्रकाश डालूँगा। यहाँ मैं इतना ही आपको कहना चाहूँगा कि गीता से हुई बातचीत से यह स्पष्टतया संकेत मिल गया कि उसके और संतोष के बीच दुराव उत्पन्न कराने के लिए कोई अज्ञात शक्ति कार्य कर रही है। उसका यह भी निश्चय हो है कि अगर संतोष ने वस्तुतः आत्महत्या कर भी तो यह अपनी जान पर खेल जाएगी। पर उसे भी विश्वास है कि यह सम्भव नहीं है। उसने ईश्वर से मनौती कर रखी है। सदा प्रार्थना करती है।"

मैं अपने कमरे में चला आया। मुझे आए एक सप्ताह हो गया था। इस बीच मैंने एक जासूस की तरह कितने ही सत्य व तथ्य एकत्रित किए। मुझे लगा कि इस घर का हर व्यक्ति एक अच्छी कथा का नायक हो सकता है। चाहे यह पुरानी शास्त्रीय मान्यताओं के आधार पर नायक न बने पर प्रत्येक के साथ एक दिन अवश्य कथा जुड़ी है जो उसे नायक जैसा महत्त्व दिला ही सकती है। इस घर में बड़े बाबू का चरित्र किसी हिस्टीरिया के रोगी से कम नहीं है जो पूँजी को जीवन का सर्वोपरि सत्य और चरम ध्येय मानकर चलते हैं।

क्योंकि तीसरे ही दिन बम्बई से लौटते ही बड़े बाबू ने मुझसे कहा "मुझे यह पता लग गया है कि तुम जासूसी कर रहे हो! यह जासूसी मुझे कतई पसंद नहीं है। क्या तुम मेरे घर से अपमानित होकर जाना चाहते हो? सुनो, हमारे वैयक्तिक जीवन में कुछ ऐसी बातें होती हैं जिनके हम संतोषप्रद उत्तर नहीं दे सकते और न ही हम देना चाहते हैं। इधर भी तुमने अपने-आपको अधिक

महत्त्वपूर्ण बनाने की चेष्टा की तो मैं तुम्हें कल ही यहां से रवाना कर दूंगा। बस अपने साधनों द्वारा उसे पाने की चेष्टा करो—प्रच्छन्न रूप से। एक बात याद रखो कि तुम मेरे बेटे के मित्र बनकर आए हो न कि पत्रकार और जासूस बनकर।"

मैंने देखा बड़े बाबू की आकृति बड़ी भयंकर हो गई है। क्रूरता की रेखाएं उनके चेहरे पर दीखने लगी हैं।

मैंने उनसे ऊपर के मन से माफी मांगी।

मैं एक सप्ताह उस घर में और रहा। जहां तक हो सका मैंने उस घर के प्रत्येक चरित्र को बखूबी समझने की कोशिश की। वहां की हर रहस्यमयी घटना और दुर्घटना का मैंने एक जासूस की तरह पता लगाया। संदीप के कमरे की खोज में एक सेंटम के तकिये के अन्दर उसकी डायरी मिली। उस डायरी ने मुझे कई नये तथ्यों से परिचित कराया। घर के सभी व्यक्तियों की आत्माओं एवं उनके मस्तिष्कों के पोस्टमार्टम के बाद मुझे लगा कि मेरे इस उपन्यास का नायक ही बदल गया है और विषयवस्तु का केन्द्र कुछ और ही हो गया है। लीजिए, आप भी सुनिए—

फतह एक मामूली घराने में उत्पन्न हुआ था। उसका पिता एक साधारण बनिया था। लगभग छह सौ रुपये साल कमाता था अर्थात् उनचास रुपये पांच आने और चार पाई प्रत्येक माहवार। गृहस्थी की गाड़ी रेत में चलती बैल गाड़ी की तरह अत्यन्त मद्धिम गति से चल रही थी। फतह न अच्छा पहन सकता था और न अच्छे ढंग से रह सकता। तभी उसके दुर्भाग्य ने एक नई करवट ली। उसका बाप बीमार पड़ा। पहले उसे बुखार आया। बुखार के साथ पेट में दर्द। दर्द के साथ मृत्यु! फतह ने उस दुःख को भी सहा।

बाप को जलाकर वह आया था। वह मत्र (मरने पर सारे काम कराना)

हो गया था और उसने कभी वस्त्र पहन रखे थे। उसकी माँ सफेद लिबास में कमरे के एक कोने में मुरझाई कली-सी पड़ी थी। उसके ललाट की बिंदी, उसकी चूड़ियाँ और उसका शृंगार लुट गया था। वह अपने-आपको नहीं रोक सका। एक बार उसके,अन्तराल का बांध टूट पड़ा। माँ ने उसे आँचल में छिपा कर रोदन-भरे स्वर में कहा "न रो फत्तू तू इस तरह रोएगा तो अपने जीवन को कैसे संवारेगा ?

"माँ ! मुझे पिताजी बहुत याद आते हैं।"

"हाँ बेटा वे आदमी थे ही ऐसे। उनके जैसा देवता पुरुष इस कलि-काल में कहाँ ? जितना मिल जाए, उसीमें संतोष और शांति। पर हमारे ऐसे पुण्य कहाँ कि उनका साया हमें उम्र भर मिलता ? तो भी हमें साहस के साथ जीना पड़ेगा।"

माँ की विश्वास भरी बातें फतह को हिम्मत बंधाती रहीं। माँ प्रायः कहा करती थी कि फतह इस जगत् में पैसा बहुत बड़ी चीज है। अब इस कुटुम्ब का सारा भार तुम्हारे पर है। बस परीक्षा देकर तू अपने मामा के पास चला जा।

फतह भी अपने घर की आर्थिक स्थिति को देखकर यही सोचता था। उन दिनों फतह सोलह वर्ष का था। आठवीं में पढ़ता था। उसके संग कई अच्छे-अच्छे सेठों के बेटे पढ़ते थे। वे फतह को अपनी सोसायटी में सम्मिलित करके प्रायः उसे हंसी का पात्र बनाया करते थे। वे उसका तरह-तरह से अपमान करते थे और उस पीड़ा से फतह के हृदय का विद्रोह ऐंठने लगता था इसपर भी वह उन लड़कों का विरोध नहीं करता था। सारे क्रोध और अपमानों के दुःख को वह एक कृत्रिम हंसी में छिपा लेता था ताकि वे धनपतियों के लड़के उसे अपनी सोसायटी से अलग न करें। स्कूल में वे लड़के फतह को खूब तंग करते थे। कोई उसका होल्डर छिपा देता कोई उसकी पुस्तक गायब कर देता। कोई उसकी पीठ पर गधा लिख देता तो कोई उसकी कापियों में अश्लील अंगों के चित्र बना देता था। स्कूल से छुट्टी होने के बाद वे फतह की टोपी छीनकर एक-दूसरे लड़के के पास फेंकते रहते और फतह कभी उसके और कभी इसके पास दौड़ा फिरता था। कभी-कभी उसकी टोपी एक हाथ से दूसरे हाथ जाती-जाती गुम हो जाती

थी और जब तक फत्तह रो न लेता तब तक यह गुस्सा प्रकट नहीं होती थी। टोली जैसे ही उसके हाथ में आती वैसे ही वह उन सभी को गंदी गालियां बकता था लेकिन थोड़ी देर के बाद वह उनसे समझौता कर लेता था। उन्हें विश्वास दिलाता था कि उसने जो गालियां बकी थीं, वे क्रोध की ही उपज थीं। फत्तह उन लड़कों के बीच रहकर गौरव का अनुभव करता था। वह अपनी मां को भी सदा कहा करता था कि उसके फलां-फलां सेठों के बेटे पक्के मित्र हैं। गोया उन लड़कों की मित्रता कोई महत्त्वपूर्ण बात हो। मां भी कहती थी—बेटा, आदमी की संगत ही उसे बनाती बिगाड़ती है। काले के पास गोरा बैठे, रंग न बदले पर अकल बदल जाती है। अच्छे के पास बैठोगे तो अच्छी अकल आएगी और बुरे के पास बैठोगे तो बुरी।" तब फत्तह एक पूरी लिस्ट अपनी मां को सुना देता था। मां को संतोष हो जाता था कि उसका बेटा अच्छे लड़कों के साथ रहता है।

कभी-कभी कोई घटना जीवन के इरादों को स्पष्ट और मजबूत कर जाती है। एक ऐसी ही घटना फत्तह के जीवन में घटी।

होली के दिन थे। शहर में बड़ी मस्ती थी। लोग अपने-अपने दलों को लेकर आनन्द लूट रहे थे। सेठ पुरुषोत्तम के लड़के पूनम ने इस अवसर पर एक दावत दी। दावत में सभी मित्रों को निमन्त्रित किया गया। फत्तह भी उसका मित्र था। जब लिस्ट बन रही थी तब फत्तह भी पीठ किए बैठा था। उसका नाम उस लिस्ट में नहीं लिखा गया। कारण भी सुना। उत्तम कह रहा था "हम सब पैसेवाले हैं, हमारे बीच यह कंगला (गरीब) ठीक नहीं रहेगा।" फत्तह जहर का घूंट पीकर रह गया। उसके हृदय-सागर में पीड़ा की कई लहरें एकसाथ दौड़ गईं। वह घर आया। उसके चेहरे पर उदासी की रेखाएं स्पष्ट झलक रही थीं। मां को यह सब समझते देर न लगी। फत्तह के पास आकर बोली "क्यों रे, आज तेरा मुंह उतरा-उतरा क्यों?

"नहीं तो!"

"मां से भी झूठ बोलता है।" फत्तू मेरा तेरे सिवाय कौन है। ले-देकर आगे-पीछे तू ही एक है। इस घर का चांद सूरज, कर्ता मालिक और विधाता

मां का आसरा। बोल बेटे मां से कुछ भी न छिपा।"

अपने हृदय के आवेग को दबाता हुआ फत्तह रुद्ध कण्ठ से बोला "मां इस संसार में सबसे बड़ी इज्जत किस चीज की है?"

मां बेटे के प्रश्न का मर्म समझ गई। वह गंभीर हो गई। फत्तह की आंखों में अपनी आंखें डालकर बोली "लोग कहते हैं कि इज्जत सदा ईमान की होती है। आदमी सच्चा बना रहे उसका सम्मान कभी नहीं मिटता। पर यह सब पहले होता था। अब सब बदल गया है।" उसने 'पहले' शब्द पर खूब जोर दिया।

"मैं पहले की बात नहीं पूछता। फत्तह ने फिर पूछा।

'आज एक ही वस्तु की इज्जत होती है। और वह वस्तु है पैसा।"

"ठीक कहती हो मां। पैसे के बिना कुछ भी नहीं है।

"हां बेटा पैसवालों के कुत्तों की भी लोग बड़ी तारीफ करते हैं। अगर वह दौड़कर किसीको काट भी ले तो लोग यही कहेंगे—सेठजी के कुत्ते का कोई दोष नहीं दोष इस आदमी का ही है। जरूर इसने उसे छेड़ा होगा हालांकि ऐसी कोई बात नहीं होती।

"मां पिताजी का पैसा कहां है?" वह अनायास ही यह प्रश्न कर उठा।

"कहां है?" मां के होंठों पर तड़प-भरी सूखी मुस्कान नाच उठी "पैसा उनके पास कहां था बेटा! जो वे कमाते थे उससे गुजर भी कठिनता से होती थी। सच बात यह है कि हम बहुत गरीब हैं, किसी तरह रूखा-सूखा खाकर निर्वाह कर लेते हैं।"

"मां मैं पैसा बहुत कमाऊंगा।

"भगवान तुम्हें सफलता दे। सुन फत्तू कलकत्ते में तेरे मामा हैं। तू उनके पास चला जा वे तुझे कहीं न कहीं काम पर लगा ही देंगे।"

'हां मां मैं कलकत्ता जाऊंगा। बहुत बड़ा आदमी बनूंगा।"

"पर पहले इम्तिहान तो दे ले।

"दूंगा।" फत्तह के चेहरे पर दृढ़ दृढ़ता चमक उठी।

होली की छुट्टियों के बाद फत्तह स्कूल गया। उस दावत से उसका जो

बहिष्कार हुआ था यह बात इतनी अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं थी फिर भी फ़तह को यह बहुत ही चुभ गई। वह विचित्र दुष्कल्पनाओं में झूलता रहा। होली जैसे त्योहार में वह घर से बाहर नहीं निकला। घुटता-घुटता-सा रहा। मित्रों से कतराता रहा। अगर कोई घर भी आ जाता तो वह उसे बहाना बनाकर टाल देता। उन दिनों वह इतना अन्तर्मुख रहा कि स्कूल में भी उसकी गंभीरता नहीं टूटी। उत्तम को उससे प्रयोजनहीन दुर्भाव था। वह फ़तह को पीड़ा पहुँचाने के लिए कोई न कोई बात कहता ही था। स्कूल में उसे देखते ही उत्तम बोला "कहो ईद के बाद इतने दिन कहाँ रहे?"

"घर पर।"

"क्यों?"

"तबीयत ठीक नहीं थी।"

"वाह भई वाह उस दिन तुम पार्टी में भी नहीं आए। ऐसी भी क्या नाराज़गी थी?" उत्तम ने बड़ी चतुराई से पूछा की। फ़तह को गुस्सा आया कि वह उसके दो-चार थप्पड़ मारे, पर उसकी गरीबी ने उसे ऐसा नहीं करने दिया। वह अपमान को स्वाभाविक प्रतिक्रिया में पी गया। बोला "मैं नहीं आ सका।"

"तुम बड़े भाग्यहीन हो। कितनी बढ़िया रसोई बनी थी! मैं तुम्हें हर कौर के साथ याद करता था।"

"तुम मेरे पक्के दोस्त हो न?" कहकर वह आगे बढ़ गया। उसका दिल भर आया। उसकी क्या ज़िन्दगी है! क्या उसे इसी तरह अपमानित और उपेक्षित होना पड़ेगा? जब कि यह सत्य था कि उसे न्योता नहीं दिया गया था। इस तथ्य से अपरिचित व अनजान मित्रों को वह यही कहता रहा कि उसकी एकाएक तबीयत ख़राब हो गई थी और वह उस पार्टी में सम्मिलित नहीं हो सका। किन्तु जब उसकी वही मित्रमंडली जमती तब वह फ़तह को लक्ष्य बनाकर उसकी खूब खिल्ली उड़ाती। उसपर व्यंग्य कसती और उसकी दशा ऐसी कर देती जैसी एक आवारा पतंग की होती है। तब वह एकान्त में रात-दिन सोते-जागते एक ही बात सोचा करता था कि वह बड़ा होते ही

इतना रुपया कमाएगा कि हम सबसे गिन-गिनकर बदला लेगा। प्रतिशोध की यह भावना उसमें पलने लगी। इसके साथ उसकी माँ उसके मन-मस्तिष्क में एक ही महामंत्र फूँका करती थी कि बेटा धन के बिना बनिये का कोई जीवन नहीं।

परीक्षा समीप आ रही थी। फतह खूब मेहनत के साथ पढ़ने लगा। वह चाहता था कि मिडल की परीक्षा पास करके वह कलकत्ता चला जाएगा। अब उसे हिन्दी अंग्रेजी और मारवाड़ी के नाम-पते पढ़ने व लिखने आ गए हैं।

इसी बीच शहर में कोई तांत्रिक महात्मा आए। हिमालय से लेकर कुमारी अंतरीप तक उन्होंने पैदल-यात्रा की थी। दिगम्बर रहते थे। प्रशस्त भाल और हृदयस्पर्शी वाणी। उनकी चमती-गहरी आँखों में सम्मोहन का आकर्षण!

कहते हैं, साधु नहीं पुजता है बल्कि उसके साधक उसे पुजवाते हैं। अब प्रत्येक की जबान पर उस महात्मा का नाम आने लगा तब फतह भी माँ के अनुरोध पर उसके पास गया। महात्माजी उस समय लगभग पच्चीस-तीस व्यक्तियों को प्रवचन दे रहे थे। एक जिज्ञासु ने उनसे प्रश्न किया था "मैं देवता के विभिन्न रूपों को नहीं मानता। मैं इतना ही मानता हूँ कि एक अलौकिक शक्ति है जो हमें निर्दिष्ट करती है। रूपों की विभिन्नता और नामों की अनेकता प्राणी-मात्र के लिए घातक सिद्ध हुई। यह मुझे कपोल-कल्पित-सी लगती है।"

महात्माजी ने उत्तर में कहा "आप एक शक्ति में विश्वास करते ही हैं। वह महाशक्ति अलौकिक और अनुपम है। आपने कठोर साधना द्वारा उसे प्राप्त कर लिया। आप उस परम ब्रह्म परमात्मा की शक्ति को जान गए पर आप अपने अनुयायियों एवं उपासकों को इस बात का कैसे विश्वास दिलाएँगे? आपके हजार बार कहने पर भी संशय उनके अन्तस् में बना रहेगा। रूप की कल्पना आदिऋषियों ने इसी हेतु की थी। क्योंकि ईश्वर एक स्थान पर जड़ की तरह नहीं रहता। वह चैतन्य है। क्योंकि मैं शक्ति के बिना ईश्वर

"तुम फत्तह, परदेस का मिलाप चिट्ठियों से ही होता है, इसलिए चिट्ठी बराबर देते रहना।"

फत्तह की आँखें भर आई थीं। वह भी रुँधे कंठस्वर में कुछ स्पष्ट कह नहीं पाया। वह रवाना हुआ। माँ ने कहा "यह नारियल यमुना की धार में बहा देना। और सुन माँ की प्यास और उसकी आँखों की आशा बेटे के साथ ही रहती है।"

फत्तह घर से बाहर निकला।

एक सोलह शृंगार किए नवयुवती जल का लोटा लिए घर के दरवाज़े के आगे खड़ी थी।

वह फत्तह को शुभ सगुन (जाते हुए आदमी के लिए प्रथम अच्छा मिलन) देने खड़ी थी। फत्तह ने उसके जल के लोटे में चाँदी का एक रुपया डाल दिया। युवती के प्रसन्न नयन मुस्करा उठे।

बाहर इक्का खड़ा था—वह उसमें बैठा और इक्का चल पड़ा।

माँ ममता-भरी दृष्टि से ओझल होते हुए इक्के को देखती रही। उसकी आँखों से अविरल आँसुओं की धारा बह रही थी।

हवड़ा।

वह अपने साथवाले आदमी के साथ उतरा। उन्होंने एक घोड़ा-गाड़ी किराये पर की। घोड़ा-गाड़ी का मालिक मुसलमान था।

अभी घोड़ा-गाड़ी पुल के पास पहुँची ही थी कि घर्-घर्-घर् की आवाज़ हुई और पुल बीच में से खुलने लगा। देखते-देखते पुल बीचोंबीच से अलग हो गया। फत्तह विस्मित-सा उसे देखने लगा। देखते-देखते उसने अपने साथी काशीरामजी से पूछा "काशीरामजी, यह पुल बीच में से अलग क्यों हो गया?"

"अब इसके नीचे से बड़ा जहाज निकलेगा।" और काशीरामजी ने उसकी ओर बिना देखे ही बताया कि यहाँ इतने बड़े-बड़े जहाज हैं कि उनमें लोगों के

बाग-बगीचा तक भी बना रखे हैं।

फत्तह के लिए यह आकर्षण की वस्तु रही।

गाड़ी ने हुबड़ा पार किया। बड़ा बाजार में ही उसका मामा रहता था। वह सेठ सूर्यमलजी के यहां काम करता था। सूर्यमलजी का कपड़े का अच्छा व्यापार था। वे विलायत का प्रसिद्ध माल बेचते थे। काफी आमदनी थी। उन्हीं-के यहां फत्तह काम करने लगा। चौबीस रुपये माह। खाना वह अपनी मामी के यहां खा लेता था।

उसका काम था—ग्राहक आने पर उनकी मांग के अनुरूप कपड़ा दिखाना। वह अत्यन्त ईमानदारी व श्रम से काम करता और हर समय उसका ध्यान काम सीखने की ओर प्रवृत्त रहता था। वह चाहता था कि किसी भी शर्त पर वह एक दिन अपने-आपको समृद्ध बनाएगा बहुत बड़ा आदमी बनेगा। इस वास्ते उसे कई बार अपने ऊपर काम करनेवालों की फुत्कारें, फटकारें, झिड़कियां सुननी पड़ती थीं। पर वह उन्हें हंस के पी जाता था।

सेठ सूर्यमलजी का उन्नीसी उम्र का एक बेटा था—मगनमल। अपने व्यापार की उन्नति के लिए उसने एक मिल भी खरीद ली थी। उसका नाम उसने 'रूप काटन मिल' रखा। मगन अंग्रेजों की सोहबत से पूरा साहब बन गया था। कोट-पैंट पहनता था। अपने समाज में उसका काफी दबदबा था। वह शादीशुदा भी था पर उसकी बीवी एक भद्दिनी की तरह थी। काला रंग और मोटी। पर वह अपने साथ खूब धन लाई थी उसी धन का ही पुण्य प्रताप था कि उस मिल के अंग्रेज मालिक को सारे के सारे रुपये एकसाथ नकद दे दिए गए थे।

फत्तह दुकान से लगभग आठ बजे छूटता था। रात को वह खाना खाकर सो जाता था। उसके जीवन में किसी तरह की सरसता नहीं थी। उसका कोई विशेष मित्र और दुश्मन नहीं था। वह अकेला था—गुमनाम सागर में नाव की तरह।

तब उसके जीवन में अप्रत्याशित एक घटना घटी।

बात यह थी कि कलकत्ता आए,फत्तह को लगभग दो वर्ष हो गए थे। इन

दो वर्षों में उसके मामा ने उसके पूरे रुपये बचा लिए। सस्ते का युग था। दस आने में बढ़िया धोती और दस पैसों में बन्द गले की बनियान आ जाती थी।

जिस बाड़ी में लगभग पचास परिवार रहते थे। सारे के सारे राजस्थानी थे और बाड़ी का मालिक भी चूरू का कोई बनिया ही था। यह बाड़ी उसने एक बंगाली जमींदार से खरीदी थी जिसका सारा धन सुरा और सुन्दरी की भेंट चढ़ गया था। उस बाड़ी के मालिक के घर एक रात कोई कटीक जाति का चोर घुस गया। रात के लगभग बारह बजे थे। फतह माल के स्टॉक को मिलाने दुकान में बैठ गया था। देर हो गई थी। बिहारी जमादार सोया पड़ा था। सन्नाटा था।

चोर ने घुसकर ताला तोड़ा। अचानक मकान-मालिक की बेटी की आँख खुल गई। खट्-खट् की आवाज ने उसे अपनी ओर खींचा। वह लड़की धीरे धीरे उठी। उसने अन्धेरे में खट्-खट् सुनी। भय से वह चीख पड़ी "चोर, चोर चोर!"

दूसरे ही क्षण चोर लपककर भागा। सीढ़ियों पर ही उसे फतह ने धर दबोचा। बाड़ी में चहल-पहल मच गई। लोग दौड़े-दौड़े आए और उन्होंने पकड़े हुए चोर को और पकड़ लिया। चोर को सेठजी के सामने लाया गया। फतह को भी हाजिर किया गया। पहली बार फतह ने सेठ की बेटी शिवली को एक ऐसी दृष्टि से अपनी ओर घूरते देखा कि उसकी रग रग में एक अजाब सिहरन दौड़ गई। सेठ ने उसे बड़ी शाबाशी दी और उसे अपने योग्य किसी सेवा के लिए कहा।

दूसरे ही दिन फतह सेठजी के पास गया। सेठजी भोजन कर रहे थे। फतह को देखते ही उनके अधरों पर मुस्कान नाच उठी। वे मधुर स्वर में बोले "क्यों फतह, कैसे आना हुआ?"

"आपके पास छत पर बहुत-से रसोईघर हैं। मुझे रहने की दिक्कत होती है। अगर आप एक रसोईघर मुझे दे दें तो आपकी बड़ी मेहरबानी होगी।"

सेठ ने विहँसकर कहा "मैं तुम्हें किराये पर नहीं दे सकता। मगर तुम यूं

ही रहने के लिए लेना चाहो तो ?"

'ऐसे ?

"देखो फतह, तुम्हारे अहसान का बदला भी मुझे चुकाना है। तुम बिना किसी रोक-टोक के यहाँ रह सकते हो।"

फतह को रहने के लिए अपनी अलग जगह हो गई।

सर्दी का मौसम था।

कलकत्ता की प्यारी सर्दी।

फतह की आजकल ड्यूटी बदल गई थी। घर के मुनीमजी बाहर चले गए थे अतः सेठजी ने उसे घर पर काम-काज करने के लिए भेज दिया था। फतह के लिए यह अवसर अत्यन्त अच्छा रहा। सेठजी के घर में अधिक परिवार नहीं था। सेठ उनकी पत्नी कौशल्या और भगत बाबू की बहू गीता। वह सुबह से शाम तक उनकी जी-हजूरी करता था। 'हाँ सेठानी जी' 'हाँ बाबूजी' और 'हुक्म बाबूजी' के कहते-कहते उसका गला सूख जाता था।

रात को लगभग वह आठ बजे आता। शौच आदि से निवृत्त होकर वह छत पर बने रसोईघर में अकेला बैठा रहता था। नीचे बड़ा आंगन और कमरों में जलते हुए प्रकाश को वह अनिमेष दृष्टि से देखता था। 'सबका जीवन सुखी है। सब अपने-अपने बाल-बच्चों में मस्त हैं। सब खूब धन कमाते हैं। पर वह अब भी आठ रुपये माहवार कमाता है। गत वर्ष उसकी तरक्की हो गई थी। हवा के झोंके उसके मन में कंपकंपी उत्पन्न करके चले जाते थे। पर वह दीवार के सहारे बैठा रहा। कभी-कभी वह तारों को देख लेता था और कभी-कभी वह यूँही खड़ा होकर सड़क पर दृष्टि डाल लेता था।

अप्रत्याशित उसे किसीके हल्के कदमों की आहट सुनाई पड़ी। आहट क्रमशः उसकी ओर आती गई। उसने उस अन्धेरे में बढ़ती छाया को पहचानने का प्रयास किया। सोचा 'भाभी होगी। और दूसरे क्षण उसने कहा "भाभीजी!"

छाया सहमी सी होकर उसकी ओर बढ़ती गई। अचानक एक भय की लहर उसके तमाम शरीर में दौड़ गई।

"कौन हो सकता है ? उसने एक बार जोर से अपने मन को पूछा। वह

बड़ा हो गया।

"तुम डर गए क्या? मुझे नहीं पहचाना?"

"नहीं।"

"मैं हूं?"

"कौन मैं?"

"सिपली।"

"इतनी रात गए क्यों आई हो?"

"पहले रसोईघर में चलो।"

"लेकिन ?"

"देखो श्यामू मेरा इतना-सा कहना मान लो चलो न। मुझे तुमसे एक जरूरी काम है।" उसका स्वर अत्यन्त मादकपूर्ण हो गया। उसमें चुम्बक-सी शक्ति उत्पन्न हो गई। श्यामू उसके साथ चल पड़ा।

रसोईघर में उसने जाते ही लालटेन जलाई।

सिपली की आंखों में वैसे ही भाव थे जैसे भाव उस दिन उसने देखे थे। सिपली उसके समीप आई। उसके कन्धे पर अपना हाथ रखकर बोली "मेरी बहिन को तुम कहां छोड़ आए?"

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा?"

"बड़े भोले हो? क्या तुमने अभी तक विवाह नहीं किया?"

"नहीं?"

"सच!"

"राम राम फिर तुम अकेले कैसे रहते हो?" वह श्यामू के और समीप आ गई। नारी के प्रथम उत्तेजित स्पर्श ने उसे पत्थर बना दिया। वह भयभीत स्वर में बोला "तुम्हें यहां नहीं आना चाहिए। तुम्हें कोई देख लेगा तो?"

"तुम उसकी चिंता क्यों करते हो? श्यामू तुम मुझे खुश कर दोगे तो मैं तुम्हें पिताजी से कहकर अच्छा काम दिला दूंगी।"

"सिपली!"

सिपली उसके और समीप आ गई। वह बोली "मैं क्या करूं? मेरा पति

लय से पीड़ित है। शादी के बाद चार रातियों के अतिरिक्त केवल शून्यता जनित एकांत।

"लेकिन ?"

"लेकिन क्या ? अगर मेरे पति की जगह कोई स्त्री होती तो यह पुरुष दूसरा विवाह कर लेता। तुम पुरुष भी कितने स्वार्थी हो! यदि तुम्हारी इच्छा किसी स्त्री को हड़पने की हो गई हो तो तुम उसकी कुछ भी नहीं सुनते हो! तुम्हारा धर्म-कर्तव्य और नैतिकता सब रखी रह जाती है और मैं अर्थात् एक नारी फतह, मैं तुमसे प्रार्थना करती हूं।"

"तुम यहां से जा सकती हो। धार्मिक नेता की तरह चमककर उसने कहा "तुम किसीकी पत्नी हो! जानती हो कि मनुष्य का इससे पतन हो जाता है! मुझे जीवन में बड़ा आदमी बनना है। शिवली!"

"फतह! चार वर्ष बीत गए हैं। मैं बहुत दुःखी हूं। मैं साध्वी-सती का जीवन अब नहीं बिता सकती। जबसे तुम्हें देखा है तब से हर घड़ी सोचती हूं कि मैं तुमसे दो चार प्यार की मधुर बातें कर लूं। पर कई दिन से यहां तक आती थी और किसी अज्ञात भय से कांपकर लौट जाती थी।

"आज तुम फिर लौट जाओ। यह अच्छा ही रहेगा।

उसके इस कथन के साथ ही शिवली को गुस्सा आ गया। वह हठात् नीचे चली गई। जाते समय उसने इतना ही कहा "नपुंसक!"

नपुंसक शब्द और वह घटना वह भुलाए न भूला। उसे वह बहुत परेशान करती रही। उसे प्रतीत हुआ कि अगर वह इस घटना को किसीसे नहीं बताएगा तो पागल हो जाएगा। तब उसने अपने एक मित्र हरदास को सारा किस्सा सुनाया। हरदास सुनकर उन्मादित व्यक्ति जैसी अपार प्रसन्नता से उछल पड़ा "वास्तव में तुम नपुंसक हो।"

अपरिमित विस्मय फतह के नैनों में चमक उठा।

हरदास खिलखिलाकर हंस पड़ा "मर्द होते तो उस छोकरी को अपने कब्जे में कर लेते। फिर तुम्हें पता लगता कि तुम बड़े आदमी कितनी जल्दी

बनते हो ! क्या तुम बिना गौरवपूर्ण कार्य के दौलत प्राप्त करना चाहते हो ?" और उसने एक लखपति सेठ की कहानी सुना दी। वह लखपति सेठ किसी जमाने में सड़कों पर पकौड़े बेचता था और आज कई दुकानों और मकानों का मालिक है। इसमें इतना ही रहस्य है कि उसने एक बंगाली विधवा को अपने यौवन द्वारा मोह लिया था और उस विधवा ने अपना सर्वस्व उसपर विसर्जन कर दिया था।"

हरदास कुछ क्षण चुप रहकर बोला "उस सेठ ने भी जीवन भर उस बंगालिन को दूसरी पत्नी ही माना। अभिजात्यवर्ग में ऐसा चलता ही है। मैं उस सेठ को इसलिए सम्मान की दृष्टि से देखता हूं क्योंकि उसने बाद में अपना धर्म निभाया। उस बंगालिन बेवा का सारा धन लेकर उसने उसकी उपेक्षा नहीं की। उसे प्रतिष्ठा और पद दिया। उसके सभी लड़के उसे 'बहू मां' कहकर पुकारते थे।"

फ्वाद को लगा कि हरदास ठीक कहता है। पैसा ऐसे कहां से आ सकता है ? उसके लिए साधन··· साधन साधन !

और वह काफी देर तक गंभीर बना रहा। हरदास ने उसके अन्तर्मन को भांपते हुए कहा "मैं कहता हूं कि उस लड़की को अपने कब्जे में कर लो और··· ?"

पर उसके बाद पिवली ने उसकी ओर देखा भी नहीं। वह रात को घटों छत पर बैठा रहता था। प्रतीक्षा में आकुल आतुर फ्वाद चहलकदमी में मादक शीत के झकोरों को भी भूल जाता था पर पिवली एक बार भी ऊपर आई नहीं। तब वह उसके घर जाने लगा। पिवली ने उसकी ओर ताका भी नहीं। आखिर एक दिन उसने पिवली से पूछा "मुझसे बहुत नाराज हो ?"

"मैं तुमसे क्यों नाराज होऊं ? मैं नाराज अपने भाग्य से हूं। भाग्यहीन थी ही और अब आशाहीन भी बन गई हूं।"

"उस दिन मैं तुम्हारी पीर को नहीं समझ पाया था।

"और मैं उस दिन अपने धर्म को नहीं समझ पाई थी। मैं परित्यक्ता हूं। दूसरे पुरुष की कामना ही मेरे लिए पाप है। तुम जानते हो कि मुझे पाप के

प्रायश्चित्त के रूप में एक उपवास रखना पड़ा—आत्मपीड़ा में निरन्तर जलना पड़ा।"

पराजित योद्धा की तरह वह बोला "मुझे क्षमा नहीं करोगी ?"

उसकी आँखों में घृणा चमक उठी। कठोरता की रेखाएं उसके मुख पर नाच उठीं। वह बोली, "क्षमा ? मैं तुम्हें क्षमा कैसे कर सकती हूं ? मैं स्वयं अपराधिन हूं। मैंने एक छिनाल की तरह तुम्हारे सम्मुख अपनी बेहयाई का प्रदर्शन किया। कुछ समझ में नहीं आता। मुझे किस भावना ने ऐसा वासनामय बना दिया था। मैं अत्यन्त लज्जित हूं। तुमसे क्षमा मांगती हूं। ऐसी मांग अत्यन्त नीच कुलटा भी नहीं कर सकती। कहकर शिवली ने अपने नेत्र झुका लिए।

नादान बालक की तरह वह शिवली को देखता रहा क्या यह वही शिवली है जो एक रात अन्धेरे में जन्म-जन्मान्तरों की प्यासी की भांति उसके पास आई थी ? उसकी आँखों में उद्दाम वासना थी और समर्पण की लालसा थी। ओह ! नारी भी क्या है ! अगम अगोचर और अकथ।

वह चला आया। दिन भर वह भगत के घर पर अनिच्छा से कार्य करता रहा। उस दिन उसे बार-बार ऐसा महसूस हो रहा था कि कोई अज्ञात शक्ति उसे आज कार्य करने को बाध्य कर रही है। वह अज्ञात शक्ति का सही परिचय नहीं पा सका। क्योंकि उसके कर्म में एक यांत्रिकता समाविष्ट हो गई थी।

भगत बाबू के यहां से वह सिरदर्द का बहाना बनाकर चला आया। वह हरदास के पास गया। हरदास की छोटी-सी मनिहारी की दुकान थी। उसने हरदास के पास जाकर सारी कथा सुनाई। हरदास उस दिन की तरह खोखली हंसी हंसकर बोला "चिड़िया हाथ से निकल गई ! क्या तुम यह समझते हो कि सदा-सदा कोई नारी इस तरह निर्लज्ज और अनावृत होगी ? मेरे भाई, जीवन में ऐसे भी क्षण आते हैं—इतने उत्तेजित-विचलित क्षण कि आदमी अपने अस्तित्व के चरम सत्य को विस्मृत करके एकदम अनावृत हो जाता है।

"पर मैं अब बहुत परेशान हूं। मुझे अब बड़ा दुख हो रहा है। मेरे हाथ

से यह मौका क्या सदा के लिए चला गया ?"

"एकदम चला गया। और तुम्हारे कारण ही चला गया। तुम एकदम मूर्ख हो ! मूर्ख ही नहीं—गधे हो। आदमी में एक कौए जैसी सजगता और चतुराई होनी चाहिए।

हताश होकर फत्तू आ गया। उस दिन वह बड़ी रात गए घर लौटा। अपने-आपको धिक्कारता रहा। उसके भीतर से बार-बार यही ध्वनि उठती थी कि तुम पैसेवाले नहीं बन सकते नहीं बन सकते।

और इस ध्वनि के कारण वह मरणासन्न-सा हो गया। अतीत की स्मृतियाँ उसपर खिलखिलाकर हँस पड़ीं। उस दिन के बाद वह निरन्तर इसी प्रयास में लगा रहता था कि वह सीता को पुनः राजी करेगा।

नई-नई सुबह।

निर्मल नीला आकाश धरती के शृंगार को सूर्य रश्मि द्वारा सजा रहा है। कितने ही तरुण मोटे पर्वतमाला के आगे विस्तृत हरी-हरी श्यामल दूब को रौंदते हुए घूम रहे हैं।

फत्तू भी महीनों के बाद आज प्रसन्नमन उस मैदान में घूम रहा था। गत दिनों एकाएक हृदयगति रुक जाने से सूर्यमलजी का देहान्त हो गया था। भगत अब पूरी सम्पत्ति का स्वामी बन गया था। उसे प्रसन्नता इस बात की थी कि सीता उसकी ओर आकर्षित हो रही है। कल उसने विहँसकर उसका हाथ भी पकड़ लिया था। अब की बार उसने पहले की भाँति गलती नहीं की। वह सीता को एक अजीब मुस्कराहट से देखता रहा।

दोपहर थी।

सीता अपने कमरे में बैठी हुई कोई धार्मिक ग्रन्थ पढ़ रही थी। सूर्यमलजी की मृत्यु के उपरान्त भगत बाबू यदा-कदा सीता के पास आते थे। मैं आपको पहले ही बता चुका हूँ कि वह महिषी थी—दोनों अर्थों में। कैसे ? भगत बाबू की

पटरानी और भैंस की तरह बलखाती।

फतह उनके पास फल लेकर गया था।

"सेठजी को तुमने इधर देखा?" गीता ने उससे पूछा।

"नहीं।"

"आजकल वे कहां रहते हैं?"

"मैं नहीं जानता। आप स्त्री हैं और स्त्रियों के पेट में कोई बात नहीं पचती। मैं आपको उनके बारे में कुछ रहस्यपूर्ण बातें बता दूंगा तो आप नाराज हो जाएंगी। अगर आपने कहीं उन्हें कुछ कह दिया तो मेरी नौकरी छूट जाएगी। फिर, एक सच्चे और ईमानदार नौकर को अपनी मालकिन से अधिक अपने मालिक के प्रति ईमानदार और वफादार रहना चाहिए।"

कहकर फतह चला आया। कई दिनों से उसने जो योजना बनाई थी, वह आज कार्यान्वित होने को आ रही थी। वह जान गया था कि इस घर में सबसे अधिक दुखी और संतप्त प्राणी कोई है तो वह गीता। वह हर घड़ी उसकी दुर्बल भावनाओं को सहलाता रहता था। उसकी खूब प्रशंसा करता था। धीरे-धीरे उसने महसूस किया कि गीता की असीम कृपा की किरणें उसपर पड़ने लगी हैं और आज जब उसने स्वयं उससे प्रश्न कर लिया तब उसने एक ऐसी अधूरी बात कह दी जिससे उसकी उत्सुकता जागरित हो गई।

उसने थोड़ी ही देर में फतह को वापस बुलाया। फतह यह जानता भी था कि उसे तुरन्त बुलावा आनेवाला है। और वह प्रतिक्षण उस आमंत्रण के लिए व्यग्र रहने लगा। जब नौकरानी बेतकी ने उसे कहा "आपको गीता बहूजी बुला रही हैं" तब उसके मन की बांछें खिल उठीं। वह अपने को नाटक के अभिनेता की तरह तैयार करके गीता के सम्मुख गया।

"क्या है बहूजी?"

"फतहजी, जरा बैठिए।"

फतह गम्भीर मुद्रा बनाकर बैठ गया।

'आपने अधूरी बात कहकर मुझे और चिंतित कर दिया। मैं आपको बस

भी सौगन्ध खाकर कहती हूं कि आपकी कही हुई बात को किसीसे भी नहीं बताऊंगी।"

मगन की बुरी आदतों से पढ़ाई परिचित था ही। मोम-विलास-सम्बन्धी उसमें कई विचित्र कलाएं भी छुप रखी थी। वह उन्हें कुशल कलाकार की तरह गीता के सम्मुख प्रस्तुत कर सकता था और उसके बदले वह गीता की हमदर्दी एवं विश्वास प्राप्त कर सकता था पर उसने सब बातें उगलना ठीक नहीं समझा।

वह अत्यन्त संयत होकर बोला 'बहूजी मैं आपकी दुर्दशा नहीं देख सकता। मुझसे आपपर होते अन्याय नहीं देखे जाते।

"जो भाग्यहीन हैं, वे सुख को कैसे पा सकते हैं?

"नहीं बहूजी!" वह एक अत्यन्त विद्वान की तरह बोला "मनुष्य भाग्य को सर्वोपरि मानकर अन्याय व अधर्म सहता रहे यह न्यायोचित नहीं।" वह कहकर गीता के उन्नत आनन को देखता रहा 'मनुष्य केवल भाग्य के बल पर अकर्मण्य हो जाता है। उसे कुछ करना चाहिए।"

"मैं क्या कर सकती हूं?"

"आप यह कहिए कि आप क्या नहीं कर सकतीं?" जरा रुककर बोला "पर आप एक बच्ची औरत की तरह सब सहती हैं—विवाहित होकर पति वियोग बिना वजह सहती हैं। "मैं आपसे एक प्रश्न पूछता हूं।" कहकर वह चुप हो गया।

गीता ने उसे ऐसे भाव से देखा जैसे वह कह रही हो कि पूछिए।

"क्या रूप ही सब कुछ है?"

"—"।" वह एकदम निरुत्तर हो गई।

"रूप और यौवन के अतिरिक्त भी एक चीज है वह है हृदय।" वह तेजी से बोल रहा था। क्योंकि उसके मन में अभी तक उस पंक्ति का प्रसंग नहीं टूटा था कि 'आप क्या नहीं कर सकतीं?' आप भी दो-चार पुरुषों को पाल सकती हैं। आपके पास पर्याप्त धन है। लेकिन पहले-पहल वह ऐसे शब्द कहकर गीता को नाराज नहीं करना चाहता था। वह जानता था कि हर लड़की पिघली नहीं हो सकती। स्त्री, वह भी भारतीय स्त्री झट से पति को नहीं छोड़ सकती।

इसलिए पहले वह कुछ ऐसी बातें कहना चाहता था जिससे वह उसके मन की थाह पा सके।

वह अपनी आँखों में चिन्ता को झलकाते हुए बोला "आपके हृदय में कितनी श्रद्धा, कितनी करुणा और कितनी भक्ति है! अगर कोई जौहरी होता तो वह आपकी कीमत आँकता।"

थोड़ी देर गम्भीर मौन छाया रहा।

अचानक गीता बोली "अपनी नौकरानी चन्दो कहती है कि मुझे कंकर का जवाब पत्थर से देना चाहिए।"

यह सुनते ही प्रह्लाद के मन में खुशी का हिलोरा उठा। जो बात वह कहना चाहता था, वह परोक्ष रूप से चन्दो ने कह दी। कदाचित् गीता ने अपनी ही बात चन्दो के माध्यम से कही हो तो? उसको इस विचार से उत्साह मिला। वह गम्भीर होकर बोला "वह मूर्ख है। जीवन में मूर्खता अत्यन्त पीड़ादायक होती है। बहूजी! आप पैसेवाली हैं। भगवान का दिया आपके पास सब कुछ है। आप अपनी तमाम उम्र अपने पीहर में व्यतीत कर सकती हैं। आपके संकेत पर कौन युवक आपके चरण चूमना सौभाग्य नहीं समझेगा! आपको बुरा अवश्य लगेगा कदाचित् आपको पीड़ा कुछ भी हो पर यह सही है कि अमृत बाबू आपको एक कुम्हलाई हुई कुतिया ही समझते हैं और अपने को परियों के देश का राजकुमार! जब कि वे ऐसे सुन्दर नहीं हैं। हाँ रुपयों की आकर्षक नदी में बाजारू औरतें स्नान करना अपना कर्तव्य समझती हैं। जो शरीर का सौदा केवल धन के लिए करती हैं, उन लड़कियों के अतिरिक्त उन्हें कौन हार्दिक प्यार करता है? कोई भी प्राणी केवल रुपयों की बदौलत औरतों को सदा अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सकता।"

"फिर वे रात रात-भर कहाँ रहते हैं?"

"मैं आपको सब कुछ बता सकता हूँ। मुझे आपसे सहानुभूति है। क्योंकि आप जैसी धीर-गम्भीर स्त्री सबसे बड़े आनन्द से वंचित रहकर, एक उपेक्षिता का जीवन बिताए, यह मेरे जैसे वफादार नौकर के लिए शर्म की बात है।"

उसका बायाँ हाथ अनायास ही प्रह्लाद के हाथ पर चला गया।

"फ़रहदजी आपको बताना ही होगा।" आवेश और उत्तेजना-भरा मन एकाएक ठिठक गया। उसने अपने बायें हाथ को थपथपा कर दूसरे हाथ से उसे इस तरह भींचा जैसे उसके बायें हाथ में अभी-अभी बिजली का करेंट दौड़ा हो। लज्जा से उसका मस्तक झुक गया। फ़रहद के अधरों पर कृत्रिम मुस्कान दौड़ गई। तत्क्षण गीता ने उसे विनती भरी दृष्टि से देखा। वह अपने कान को सिर नीचा करके खुजलाने लगा। वह अपनी झेंप मिटाता हुआ बोला "वे अर्थात् आपके पति और मेरे स्वामी उन्हीं स्त्रियों के पास जाते हैं जो केवल पैसों के लिए पुरुष से प्यार करती हैं। जिन्हें जिस्म के सौदे में ज़रा भी हिचकिचाहट नहीं होती। वे अपने शरीर के अंगों को उतनी ही लापरवाही से बेचती हैं जितनी लापरवाही से मालिनें अपनी बेकार सब्ज़ी को रात में बेचती हैं। और हां कभी-कभी वे औरतें अपने प्रेमी से अधिक धन मिल जाने के प्रलोभन में उसकी हत्या तक भी कर देती हैं।" "मेरी इन सभी बातों के कहने का तात्पर्य यह है कि आपके पति वेश्याओं के यहां जाते हैं और रात रात-भर नाचा सुनते हैं।"

फ़रहद एकदम चुप हो गया। कमरे में घोर सन्नाटा छा गया। गीता हतप्रभ सी उसे देखती रही।

फ़रहद फिर बोला "मैंने जो कुछ कहा है वह आपकी आज्ञा से कहा है। आपकी आज्ञा को मानना भी मेरा कर्तव्य ही है। क्योंकि इस घर में आपका भी आधा अधिकार है। पति की पत्नी अर्धांगिनी होती है। किन्तु इतना ख्याल रहे, ऐसी बातें पेट में ही रहनी चाहिएं।" और उसने मन ही मन कहा 'और आपका पेट, ईश्वर की क़सम बहुत बड़ा है, मर्तबान के उदर की तरह। वह खिलखिलाकर हंसना चाहता था पर वह गीता की नाराज़गी से डर गया। दूसरे वह अभी गम्भीर बना रहना चाहता था।

गीता ने अपना मौन नहीं तोड़ा।

"आपके दुख को मैं जानता हूं। एक चरित्रहीन पति की सीधी-सादी और भोली पत्नी के अन्तस्तल का मर्म मुझसे छिपा नहीं है। हाय ईश्वर, तुमने औरत बनाई ही क्यों? मैं कहता हूं औरत का जन्म मृत्यु से भी भयानक है। अंगारों पर चलने से भी अधिक पीड़ादायक है।"" "बहूजी, विश्वेश्वर टंडन

की बहू अपने चरित्रहीन और वेश्यागामी पति के अत्याचार सहती-सहती पागल हो गई। भगवान ऐसा न करे कि आपको ज़रा भी कष्ट हो। मैं आपके अहित की कल्पना सपने में भी नहीं करता। सच कहूं मुझे आपके प्रति आत्मिक श्रद्धा है। इस कलिकाल में कौन पत्नी अपने दुश्चरित्र पति की उपेक्षा तिरस्कार, दुत्कारें और वियोग सहती है जबकि आप खुद लाखों की मालकिन हैं। यदि आप भी ऐसी ही होतीं तो ममत बाबू को मालूम होता कि पीड़ा क्या होती है! पराई पीर हंसने की पीर है और खुद की पीर रोने की। अच्छा मैं अभी चलता हूं। नमस्ते! वह दरवाज़े तक गया और वापस आकर बोला, "देखिए, मैंने ये सभी बातें आपको अपनी समझकर कही हैं, बुरा न मानिएगा और इन्हें अपने तक ही सीमित रखिएगा।"

उसने उसी दृष्टि से देखा जिस दृष्टि से शिवसी ने उसको प्रथम बार देखा था।

मीता ने कहा "मैं आपकी बात को अपने मन में छिपाकर रखूंगी।" वह उठकर उसके पास आई। उसकी ओर देखती रही। वह कुछ कह न सकी।

'अच्छा मैं अभी जाता हूं।" वह जाने लगा तभी मीता ने उसका हाथ पकड़कर कहा "फठहजी!" और उसने अपना हाथ इस तरह वापस खींचा जैसे यह भूल से हो गया हो। पर फठह के अधरों पर कुटिल मुस्कान छिटक गई। वह समझ गया कि हर बुद्धिमान स्त्री इसी तरह जान-बूझकर किए गए कार्यों की महत्ता को निर्मूल करने के लिए ऐसा ही अभिनय करती है।

"आप उनको कहिएगा कि मैंने उन्हें याद किया है।

"बहुत अच्छा।"

स्मृति का एक आवर्त समाप्त हो गया। सामने से आती हुई एक कार की भों-भों ने उसके ध्यान को भंग कर दिया। वह अचकचाकर एक ओर हो गया।

सूर्य कुछ ऊपर चढ़ आया था।

आज वह छुट्टी लेगा। छुट्टी लेने का एक ही बहाना है—पेट में दर्द या सिर में दर्द।

आदमी सुख की अनुभूति के बीच किसी तरह का व्यवधान नहीं चाहता। वह डूबा रहना चाहता है—आकंठ अपनी स्वर्णिम और मधुर मस्ती में।

वह एक वृक्ष के तने का सहारा लेकर बैठ गया। अपनी स्मृति को पुनः जोड़ने लगा।

गीता से मिलने के बाद वह भगत बाबू के पास गया। वे दफ्तर में ही थे और किसी कार्य में व्यस्त थे। वह बिना कुछ खबर दिए उनके पास चला गया। उसे सभी जानते थे कि वह घर का मुनीम है और भविष्य में भी वह इसी पद पर प्रतिष्ठित रहेगा। उसका काम संतोषप्रद था और उसकी ईमानदारी और सचाई दर्पण की भांति अपना प्रतिबिम्ब फेंक रही थी।

फतह को देखते ही भगत बाबू प्रश्न भरी दृष्टि डालकर बोले "क्या है फतह?"

"अर्ज है कि आपको बहूजी ने याद किया है।"

"अच्छा!"

"जी।"

"ठीक है। अब तुम जा सकते हो।"

फतह चला आया। रात-भर वह गीता के बारे में सोचता रहा। सेठजी ने बताया था कि जब कभी भी भगत बाबू घर आते हैं तब गीता अंग्रेजी मेम की तरह अपनी सजावट करती है। अपने घूमे हुए काले बालों पर पाउडर मलती है। ललाट पर बिंदिया लगाती है। नई साड़ी पहनती है। प्रायः वह भीनी साड़ी ही पहनती है क्योंकि सफेद साड़ी में उसका काला रंग हास्यास्पद लगता है। वह फिर कमरे में अपने पति की प्रतीक्षा करती है। भगत बाबू के कदमों की आहट आती है तो उसका हृदय भर आता है और आंखें छलछला आती हैं।

पति आता है। महासमर्पण की उद्दाम भावना लिए वह पति के सम्मुख जाती है। पति इधर-उधर की पांच-दस बातें करके पड़ जाता है। वह कुछ इसके अतिरिक्त भी बात करना चाहती है। लेकिन भगत बाबू निर्जीव पत्थर की तरह मखमली शय्या पर पड़ जाते हैं। तब उसके अन्तस् का अतृप्त प्रेम

हाहाकार कर उठता है। उसकी भावनाओं पर भाले जैसे प्रहार लग जाते हैं और उसका विषाद आँखों में खारा पानी बनकर बह जाता है।

फिर भी पति के साथ एक शय्या पर सोकर गीता एक अपूर्व आनन्द का अनुभव करती है। उन क्षणों को वह जीवन का अनुपलब्ध क्षण समझती है और उसे ईश्वर का महाप्रसाद समझकर इस तरह ग्रहण करती है जैसे स्वाति बूंद को पपीहा ग्रहण करता है।

पर सुबह होते ही उसपर एक घृणा का भाव असर करता है। वह अपने शृंगार को भ्रष्ट भ्रष्ट करती है और साड़ी को कभी-कभी कैंची से फाड़ भी देती है और सारे दिन तक भोजन नहीं करती।

इस विक्षिप्त रूप की कल्पना करके फतह अत्यन्त आनन्दित हुआ। उसे लगा कि सवेरे-सवेरे ही गीता ने अपने कपड़ों को कैंची से फाड़ा होगा और अपने विकराल रूप में वह चौकी पर बरस पड़ी होगी। उसके चेहरे पर कुटिल मुस्कान नाच उठी और उसकी इच्छा हुई कि वह एक बार खुशी में नाच उठे। वह नाच नहीं सका पर उसने अपने-आपकी एक नृत्यकार के रूप में कल्पना जाहिर कर ली।

सूर्य चढ़ रहा था।

वह उठा और मैदान के बीचोंबीच निरन्तर यात्रियों के चलने से बनी पगडंडी पर चलता रहा।

'आज मैं काम पर नहीं जाऊंगा। गीता बहू मेरी हर क्षण प्रतीक्षा करेगी! अपनी व्यथा को वह करुणा की व्यक्ति करनेवाले शब्दों में रखना चाहेगी! मेरे सम्मुख वह गाय की तरह दीन होकर भगत बाबू की शिकायत करेगी? मेरे हाथ का स्पर्श करेगी! मैं भी आज ...!'

और वह एकाएक गम्भीर हो गया, 'हरदास ठीक कहता था कि लखपति बनने के लिए मनुष्य को अपना नैतिक पतन करना ही पड़ता है। बिना इस पतन के पैसा नहीं आ सकता! ओह! गीता बहूजी को मैं अपने कब्जे में कर लूंगा, फिर उससे कुछ धन ठगूंगा, फिर अपना व्यापार करूंगा, खूब रुपया कमाऊंगा, शादी करूंगा, उन दोस्तों से मिल-मिलकर बदला लूंगा ...। हा-हा-हा!

वह उन्मादित हो उठा। पर दूसरे क्षण वह एक आदमी से टकरा गया और चौंककर उसने उससे क्षमा-याचना की।

मां की चिट्ठी आई थी।

फतह पत्र पढ़कर गद्गद हो गया। मां का निश्छल प्यार और उसके सुखी होने की हार्दिक कामना ने उसको अत्यन्त प्रभावित किया। उसने हर बात की दो पंक्तियों के पश्चात् उसकी मंगल-कामना की थी। वह सोचता रहा—'दुर्निवार प्रहार भी मां की ममता को नहीं मिटा सकता। अन्त में मां ने लिखा था "मैंने तुम्हारे लिए एक अत्यन्त रूपवती कन्या देखी है। उसका नाम है पद्म। पद्म की तरह ही उसका मुख है। मैं कल जाकर उससे तुम्हारी मंगनी निश्चित कर आऊंगी। मुझे उम्मीद है कि तुम दो-तीन हजार रुपये अपने सेठजी से मांग लाओगे।"

'पद्म!

वह इस शब्द की महिमा पर सोचता रहा। उसकी सुरभि और मादकता उसके दिलो-दिमाग को सुवासित करने लगी। उसे लगा कि वह सचमुच उस महान सुख से वंचित है जिसके लिए स्त्री-पुरुष ईश्वरीय विधान के कठोरतम दंडों की अवहेलना करते हैं।

दोपहर तक वह मादक कल्पनाओं में झूलता रहा।

सेठजी के यहां से बुलावा आ गया था। वह गया। वह रास्ते-भर अपने बालों को बिखेरता रहा। हालांकि वह टोपी पहने हुए था पर वह अपने हृदय की खुशी को कृत्रिम उदासी में छिपाना चाहता था। बार-बार उसके मन पर 'पद्म' की सुगन्ध छा जाती थी और वह अपने-आपको पुनः उदास करने की चेष्टा करता था। इसी उधेड़-बुन में उसने रास्ता सदा की अपेक्षा जल्दी से तय कर लिया।

बाड़ी में पहुंचते ही भीता की सास ने सबसे पहले उससे पूछा "क्या बात

है फत्तू, आज तू आया नहीं ?'

"क्या करूं सेठानीजी सवेरे से ही सिर में जोर का दर्द है।" यह सर्वथा बहाना था और इसलिए जब वह यह कह रहा था तब उसकी नजर नीचे झुक गई थी।

"कौनसी दवा ली है ?"

"दवा कुछ भी नहीं ली। बाम लगाया था।

'सर्दी लग गई होगी ? ऐसा करना कि रात को सोते समय उकाली (धनिया मिश्री काली मिर्च का मिक्सचर) ले लेना। सवेरे ही सब ठीक हो जाएगा।' उसने बिना पूछे ही उपचार बता दिया।

'ठीक है।' कहकर वह सीधा गीता के कमरे की ओर चला। रास्ते में उसे केतकी मिल गई। वह उसे देखते ही बोली, "आज बहूजी का मिजाज ठीक नहीं है। कल मगन बाबू आए थे और रात को ही कोई उन्हें बुलाने आ गया इसलिए वे वापस चले गए।

फत्तह ने उसकी जरा भी चिन्ता नहीं की। वह निर्भयता से उसके कमरे में घुसा।

गीता को पहले ही फत्तह के आगमन का आभास मिल गया था। वह अपने दोनों हाथ कमर पर अटकाए, सिर झुकाए चहलकदमी कर रही थी। उसका चेहरा लाल था और उसके चेहरे की कठोरता से स्पष्ट लग रहा था कि वह क्रुद्ध और उत्तेजित है। फत्तह को देखते ही उसकी आँखों में आँसू छलछला आए और करुण क्रन्दन करती हुई वह बोली "मुझे तुम जहर लाकर दे दो। मैं अब जीवित रहना नहीं चाहती।"

फत्तह ने उसे ढाढस बंधाते हुए कहा "शान्ति से यह बताइए, आखिर बात क्या है ?"

"मैं अब और अधिक अपमान नहीं सह सकती।"

"आपका अपमान ?'

"मैंने तुम्हें उनके पास भेजा था। वे मेरे कहने पर आए भी थे और फिर न जाने क्यों चले गए ? मैंने उन्हें बहुत रोका पर वे एक निर्दय की तरह मुझे

ठुकराकर चले गए। न जाने कौन मनजानी दुष्ट रात को चोर की तरह मेरा सुख लूटकर ले गई।"

"यह दुःख की बात है, अपमान और पीड़ा की बात है, पर मैं क्या कर सकता हूं? मैं उन्हें कुछ भी नहीं कह सकता। एक अदना नौकर हूं जिसका कोई अस्तित्व नहीं है। जो अपने स्वामी के सामने केवल स्वामीभक्त कुत्ते की तरह टुकुर-टुकुर देख सकता है।

"पर मैं उन बैरी औरतों से निःसन्देह बहुत अच्छी हूं। आखिर मैं उनकी पत्नी हूं अर्धांगिनी हूं। वह बहुत उत्तेजित हो गई थी।

"आप शांति रखिए। मैं जानता हूं—आपके दिल को ठेस लगी है। आप की व्यथा का कोई पार नहीं है। कोई भी सम्मानप्रिय स्त्री जो अपने मैके से लाखों रुपयों की सम्पत्ति लाई हो वह इस तरह का अनुचित दबाव सहन नहीं कर सकती! मैं आपकी प्रशंसा किए बिना नहीं रह सकता क्योंकि आपने उनके इतने अत्याचार सहकर भी धैर्य और शान्ति का परिचय ही दिया है।" उसने एक कथानायक की तरह अत्यन्त सुन्दर वाक्य कहे।

वह वेदना में डूब गई। आह निकालती हुई बोली "ईश्वर, मुझे अपने पास बुला ले!" कहकर वह बेहोश-सी हो गई। फतह ने लपककर उसे उठाया। महिषी की मजबूत बांहें उसकी ओर लिपटने लगीं। फतह कांपने लगा। वह हतबुद्धि हो गया। पर कदमों की आहट से वे दोनों चौंक पड़े। सीता तुरन्त उठी और अपनी तिजोरी में से एक सोने का झुमका देते हुए कहा "एकदम ऐसा ही बनाना है।" उसका इतना कहना था कि बेतड़ी आ गई।

"बहूजी।"

"क्या है?"

"मांजी ने कहलवाया है कि आप कुछ नाश्ता कर लें।

"चूल्हे में झोंक दो नाश्ते को!" वह जल उठी। बेतड़ी अपना मुंह उतार कर चली गई।

"कल तुम सवेरे आ जाना।

फतह ने हौले से कहा, "हां!"

"ठीक नौ बजे।"

फतह चुप था। अब उसके हाथ में एक ऐसी चिड़िया आ रही है जो सच मुच सोने की है। जो सदा उसे सोने का अंडा दे सकती है। उसे एक तरह का जुनून-सा चढ़ गया। वह जुनून में ही सीधा हरदास के पास पहुंचा और उसने हरदास को सारी बातें बताईं।

हरदास में उल्लास का संचार हो उठा "वाह! सचमुच तुमने इस बार बाजी मार ली! अब तुम्हें लखपति बनने से कोई भी नहीं रोक सकता। पूंजी इकट्ठी करने के लिए आदमी को अनैतिक बनना ही पड़ता है। व्यापार में पाप-पुण्य और भले-बुरे की व्याख्या पर ध्यान नहीं दिया जाता। उसमें इतना ही ध्यान रखा जाता है कि वह दूसरे पूंजीपति से अधिक चतुर है या नहीं।"

"उसने मुझे कल नौ बजे बुलाया है।"

"तुम आठ बजे यहां आना!" वह उसी उल्लास से बोला "पर स्नान आदि करके। तुम्हारे सेठ के घर में कौन-सा सम्प्रदाय चलता है?"

"वैष्णव।"

"सिर पर तिलक निकाल लेना। गले में कंठी पहन लेना। मुख से 'श्रीकृष्ण शरणं मम' का जप करते रहना।" वह क्षण-भर रुककर बोला "वैसे तुम्हारा अपना सम्प्रदाय भी वैष्णव है। है न? हां, फिर सोने में सुहागा समझो। जो मर्जी आए करो। पर इतना ध्यान रखो कि पाप कमाई, चोरी और सीनाजोरी से प्राप्त की हुई किसी भी वस्तु को पहले कृष्णार्पण कर दो। दुष्कर्म करने के पूर्व तुम्हें अपने प्रभु को इतना निवेदन कर देना चाहिए कि मैं यह सब तुम्हारे लिए कर रहा हूं। जो ईश्वर-अर्पण है वह क्षम्य ही नहीं ग्राह्य भी है।"

फतह ने महसूस किया कि हरदास यह सब कहते हुए एक विचित्र आनंद में झूम रहा है।

"अब तुम जाओ और उस लक्ष्मी को अपने अधिकार में करो। लक्ष्मी की कृपा बार-बार नहीं मिलती।"

फतह वहां से सीधा आ गया। आते ही उसने एक पत्र अपनी मां को लिखा जिसमें उसने यह निवेदन किया कि तुम विवाह की तिथि निकलवाकर मुझे भेज दो

मैं परसों दिन पहले आ जाऊंगा।

उस दिन सुबह ही सुबह वह उठा। स्नान आदि से निवृत्त होकर वह पाठ-पूजा में व्यस्त हो गया। आज रात उसने मन ही मन संकल्प किया था कि द्वारका के नाथ ने उसको इस कार्य में सफलता दे दी तो वह उनके प्रसाद चढ़ाएगा? वह नित्यप्रति दर्शन-वन्दन करेगा। आज की यह पूजा भी वह उसीके अनुसार कर रहा था।

उसने अपने खानदानीदेव श्रीनाथजी की तस्वीर के आगे 'श्रीकृष्णशरणं मम' की ग्यारह मालाएं फेरीं। मामी से मिला। उसको वह चिट्ठी बतलाई। मामी हर्ष से खिल उठी "मिल ले, जल्दी से जल्दी बात तय करें।

"आप भी लिख दीजिए।"

"तुम्हारे मामा से लिखवा दूंगी। मैं कुछ भी पढ़ी हुई नहीं हूं।"

तब वह बाहर निकला। सड़क पर आवागमन हो गया था। वह भी इक्का दुक्का रवाना हुआ। सबसे पहले वह कालीजी के मंदिर गया। उससे भी अभ्यर्थना की। इसके पश्चात् उसने अपनी चिट्ठी छोड़ी।

अब वह धीरे-धीरे मतवाले हाथी की तरह झूमता हुआ भगत बाबू के घर पहुंचा। उसने देखा—सेठानी वहीं बाहर गई हुई है। सेठानीजी मंदिर में अपने इष्टदेव की सेवा में लीन हैं। वह भी गया। सबसे पहले उसने सेठानीजी के आराध्य को नमस्कार करके 'जै श्रीकृष्ण' कहा। सेठानीजी ने उसकी ओर देखा—मदह के सिर पर तिलक देखकर उसका मुख भी उल्लास से भर उठा। सेठानीजी ने अति प्रसन्नता से कहा "आज जल्दी आ गए हो।"

"हां सेठानीजी, बहूजी ने बुलाया है।"

"आज प्रसाद यहीं से लेना। मुझे दस बजे मंदिर जाना है।"

"जो हुक्म।" उसने हुक्म के गुलाम की तरह गर्दन झुकाकर कहा "मैं यहीं हूं।"

वह तुलसीचरणामृत लेकर गीता के पास आया। गीता ने उसे देखकर कहा "जरा देखकर आओ कि और नौकर-चाकर क्या कर रहे हैं।"

उसने बाहर आकर देखा—सब अपने-अपने कार्य में व्यस्त हैं। वह वापस लौट गया।

"तुमने अपने विवाह के बारे में क्या सोचा ?"

"माँ मेरा जल्दी ही विवाह करना चाहती है पर मेरे पास रुपया नहीं है।"

"क्या कहते हो मेरे होते हुए उन्हें किसी तरह की चिंता नहीं करनी चाहिए। आखिर तुम हमारे भक्त नौकर हो।

"मैं आपके ही भरोसे सब काम कर रहा हूं।

"जो अपना होता है उसीसे कुछ आशा की जाती है।"

इसके बाद इधर-उधर की बातें होती रहीं। बातों के सिलसिले में ऐसे भद्द संकेत होते रहे जिसका वर्णन करना खतरे से खाली नहीं है। संकेतों की अंत में कार्य के रूप में परिणति हुई। मर्मांतिक हृदयों का पर्याभिमय स्पष्ट भाषा में हो तो उसका नंगा व घृणित रूप हमारे समक्ष प्रस्तुत होता है किन्तु अगर उसको गूढ़तम शब्दावली में रखा जाए तो अपरिपक्व मनवाले पाठकों के लिए सोच का विषय बन सकता है। अतः मैं न चाहकर भी उसे संकेत में रख रहा हूं ताकि उसे अश्लीलता की संज्ञा से विभूषित न किया जाए और वह पाठकों के मन में उत्तेजनापूर्ण कल्पनाएं छोड़ जाए कि उन संकेतों के चित्र क्या हो सकते हैं।

फत्तू की साध पूरी हो गई। पहले ही दिन गीता ने उसे गले की जंजीर दी। वह प्रसन्न था। उसे लगा कि प्रभु ने उसकी प्रार्थना सुन ली है। वह उसको प्रसाद चढ़ाएगा। वह सारे दिन प्रसन्नमन रहा और जब दूसरे दिन वह अपनी भाभी के यहां प्रसाद देने गया तब भाभी ने उससे पूछा "अरे फत्तू, क्या बात है ? आज प्रसाद किस बात का है। क्या सगाई की मिठाई खिला रहे हो ? वह हंस पड़ी।

फत्तू ने कुछ भी नहीं कहा। वह इतना ही कह पाया कि उसने बचपन में किसी बात के लिए प्रसाद बोला था। कल सपने में साक्षात् भगवान ने उसे आज्ञा दी यह उसीका प्रतिफल है। बनिये की बुद्धि स्वतः ही अपने हित का काम

करती है। इस जंजीर के मिलने की बात को उसने हरदास को भी नहीं बताया। उसे भय था कि कहीं हरदास उसे अनुचित रूप से दबाने न लगे। इसके विपरीत उसने हरदास को जोशपूर्वक कहा कि तुम्हारे कारण उसकी नौकरी चली जाती। सेठानी उसे अपने भाई की तरह मानती है। हरदास लज्जित हुआ। फतह ने इस बार भी ईश्वर को धन्यवाद दिया क्योंकि वह जिस कौशल से कार्य कर रहा था वह ईश्वर के ही आदेश से कर रहा था ऐसा उसका विश्वास था। वह कभी-कभी अपने बुद्धि-कौशल की खुद प्रशंसा करता था कि उसमें इतना नीति-चातुर्य कहाँ से आ गया। तब गर्व की भावना उसमें जाग उठती थी और वह नादान बच्चे की तरह किलक उठता था। फिर एकाएक गंभीर होकर वह ईश्वर को याद करता था।

इसके विपरीत उसमें ऐसा अहम् तनिक भी नहीं आया जिसके कारण लोगों को यह वहम हो कि उसका मीता के साथ अनुचित सम्बन्ध है। वह पहले से अधिक गंभीर हो गया था और उसने पहले की अपेक्षा कपड़े भी और रद्दी किस्म के पहनने शुरू कर दिए थे। यह सब वह जान-बूझकर करता था। कभी उसे अपने-आप पर हंसी आती थी और वह अपने-आपसे कहता था 'मैं भी कितना ढोंगी हूं!'

कुछ भी हो उसमें एक कुशल अभिनेता के सारे गुण मौजूद थे। उसकी जगह कोई और होता तो वह इतनी बड़ी सेठानी से अनैतिक संबंध स्थापित करके आकाश पर उड़ने लगता। वह नख से शिर तक बदल जाता। तन उजला हो जाता मन उजला हो जाता और उसका संसार उजला हो जाता।

उसकी आन्तरिक प्रसन्नता उसके लाख प्रयास के बाद भी नहीं छिपी। एक दिन शिवली ने उसे पूछ ही लिया "आजकल तुम बहुत खुश नजर आते हो?"

शिवली उससे कई माह के बाद बोली थी। पता नहीं वह क्यों झेंप गया इसलिए वह कुछ रुक-रुककर बोला "ऐसी क्या बात तुमने मुझमें देखी है जो मैं तुम्हें बहुत खुश नजर आ रहा हूं।"

"ठीक से व्याख्या मैं नहीं कर सकती। तुममें परिवर्तन जरूर है।"

'मेरे मन का भेद यह जान गई क्या?' उसने मन ही मन कहा और वह उसे देखने लगा। निर्निमेष दृष्टि से देखता रहा। शिवली ने अपना मुंह दूसरी

ओर घुमा लिया। मैं आज जाकर अवश्य दर्पण में अपना मुख देखूंगा? वाह, मैं भी मूर्ख हूं। मुझे अवश्य ही अपने चेहरे पर आभासित परिवर्तन को समझना चाहिए।

वह प्रकट रूप में बोला "क्या मैं अधिक थक गया हूं?" वह जानता था कि उसकी तन्दुरुस्ती पहले से बहुत अच्छी है।

"नहीं। तुम पहले से अधिक रोबीले दिखने लगे हो।"

"सच?"

"ऐसा लगता है कि तुम्हें कोई गड़ा हुआ धन मिल गया है। क्योंकि आज पैसा ही ऐसी वस्तु है जो बूढ़े को जवान बना सकता है।

वह सिर से पांव तक कांप गया। वह अत्यन्त कठिनता से अपने मन की व्यग्रता छिपा पाया।

"तुम नहीं जानते कि पैसा अपना रंग आज छिपाने पर लाता है।" शिवनी ने दुबारा उसपर आक्रमण किया "मुझे केतकी ने सब कुछ बता दिया है। वह उसके पहले मेरे यहां ही काम करती थी।"

सांप का डसा जिस तरह बेचैन होने लगता है, उसी तरह वह विचलित हो गया।

"मुझे दुख इसी बात का है कि तुम्हें जब यही सौदा करना था तब मुझे क्यों ठुकराया? मैं भी पतिवंचिता ही हूं। वह रखैल और मैं वंचिता दोनों में अन्तर क्या है? फिर मैं उससे अधिक रूपवती हूं।" वह पश्चाताप से अपनी गर्दन लटकाकर घृणा-भरे स्वर में रुक रुककर बोली "ओह! पुरुष की भी क्या पसन्द होती है! हीरा पन्ना माणिक मोती को छोड़कर वह कांच के टुकड़े व कागज की कलियों को पसन्द करता है। सचमुच वह एक घृणित जीव है जिसके समक्ष कभी किसी नारी को गिड़गिड़ाना नहीं चाहिए।"

"तुम्हें केतकी ने गलत समाचार दिए हैं। वह मुझे भाई की तरह मानती है। किसीकी किसीके साथ गहरी सहानुभूति होने का मतलब यह नहीं है कि उनके सम्बन्धों में अनैतिकता छूटी जाए। यह तुम्हारा ओछापन है। यह तुम्हारी घृणा है।" उसने बड़े प्रभावशाली ढंग से कहा।

"वह झूठ क्यों बोलेगी ? बच्ची से तुम्हारी कौनसी स्पर्धा है ?"

"वह नीच नौकरानी मेरे रुतबे को सहन नहीं कर सकती । वह एक चोट्टी और कुलटा है । वह स्वयं मुझे अपने जाल में फांसना चाहती है । मैं कल ही उसे यहां से निकलवा दूंगा । ऐसी नमकहराम नौकरानी खानदान के लिए कलंक सिद्ध हो सकती है ।"

"बात कुछ न कुछ जरूर हुई है अन्यथा तुम इतने लाल-पीले न होते । लेकिन तुम्हें उस गरीब नौकरानी से बदला नहीं लेना चाहिए । वह एक सर्वथा छोटी जाति की स्त्री है । ऐसी स्त्रियां प्रत्येक को एक-दूसरे की बात कहकर सहानुभूति प्राप्त करने की चेष्टा करती हैं । हो सकता है कि वह झूठ ही बोली हो ?"

"वह बिलकुल झूठ बोली है । मेरा उससे भाई का !

"नीचता की भी एक सीमा होती है । मैं भी जानती हूं कि आजकल प्यार और व्यभिचार का इतना घिनौना रूप हो रह गया है । स्वस्थ परम्पराओं के साथ-साथ शब्दों की पवित्रता और महत्ता भी खत्म हो गई है । मुझे थोड़ा भी आश्चर्य नहीं है कि तुम भी उसी दूषित परम्परा के निम्न आदमियों की श्रेणी में आते हो ।" वह निर्भयता से कह रही थी ।

"तुम कौनसी अच्छी हो ? वह जल उठा ।

उसने कुछ देर तक उसपर स्थिर दृष्टि डाली जैसे वह जो कुछ कहना चाहती हो उसको पहले मन ही मन दुहरा रही हो 'मैं नीच नहीं होती तो तुम्हारे पास आती ही क्यों ? मैं कहती हूं कि मैं एक सच्चा चरित्रवान और ईमानदार स्त्री हूं । मुझे किसीको भी इस तरह का उपदेश देने का कोई अधिकार नहीं है । किन्तु तुम्हें देखकर मुझे ऐसा लगा कि मैं तुमसे बहुत अच्छी हूं । मैंने किसीको भाई नहीं बनाया । मैंने अपने पति को धोखा देकर कोई कृत्य नहीं किया । मेरा पति भी मेरे दुःख को जानता है । लेकिन क्या तुम्हारी तरह बहिन बहिन कहकर ?

"छिनाली !" वह गरजा ।

"धीरे बोलो नीचे भी आदमी रहते हैं । उनके भी कान हैं । तुम जाओ

छिपाना चाहो, पर पाप नहीं छिपता। बेचारी बेठड़ी को यहां से निकलवा देने से तुम्हें क्या मिलेगा? मैं समझती हूं कि इससे तुम्हें हानि ही होगी। उसने अभी मुझे ही कहा है, बाद में वह सबको कहेगी और जो बात लोकप्रिय होने लगती है, उसके लिए कई व्यक्ति चौकन्ने हो जाते हैं। क्योंकि यहां फालतू आदमी अनेक हैं जो अवैतनिक रूप से बातें बनाने का काम बड़े आनंद से करते हैं। और हां कुछ ऐसे भी आदमी होते हैं जो गंदी बातों का प्रचार अत्यन्त कलात्मक ढंग से अर्थात् अपनी ओर से कुछ मिलाकर मुफ्त में ही करते हैं। अतः इस काम में जल्दबाजी सर्वथा तुम्हारी अयोग्यता ही बताएगी।' उसके चेहरे पर निर्लज्जता नाच रही थी वह भी बड़ी निर्भीक।

"तुम चुप रहो।" वह झल्लाया।

"मैं चुप ही हूं। मुझे तुम्हारे बारे में कुछ कहने से क्या मिलेगा! मैं जलन-वश भी नहीं कह रही हूं। मैं केवल स्नेहवश कह रही हूं। मैं चाहती हूं—तुम्हारा यह धंधा मजबूती और बिना किसी बाधा के चलता रहे। किन्तु इसमें फूंक-फूंककर कदम रखनेवाला ही अधिक सफल होता है। यह चतुराई का काम है। इसमें प्रभुता से अधिक विनम्रता ही उपयोगी सिद्ध हुई है।" उसकी अंखियों में गहरा व्यंग्य था।

"ठीक है ठीक है।" वह पागल की तरह चीखा। उसने अपनी आंखें एक मूर्ख की तरह झपकाईं जिससे छिबली के होंठों पर दुष्टता भरी मुस्कान नाच उठी।

"तुम इतनी गन्दी व नीच बातें कैसे सोच लेती हो?" वह एकदम चमककर बोला "तुम्हें इस तरह अश्लील बातें करते लज्जा नहीं आती! स्त्री की भी अपनी मर्यादा होती है।"

"मर्यादा केवल स्त्री की नहीं होती, मर्यादा सबकी होती है। मैं भी 'मर्यादा' शब्द का मतलब समझती हूं पर जब विषय ही इतना गंदा छिड़ गया है तब मर्यादा जैसे शब्दों का अस्तित्व ही क्या रह जाता है?" उसके चेहरे पर धृष्टता खेल उठी "जब तुमने बार-बार 'माई' शब्द को प्रयोग करके मुझे मूर्ख बनाने की चेष्टा की तब मैं क्या करती? फिर एक बात और है। दरअसल हमें और

मर्यादा आदि शब्दों का प्रयोग करने का कोई हक नहीं है। हम पतित हैं—लौकिक दृष्टि से !"

"मैं जाता हूं।"

'पाप के पांव कच्चे होते हैं। और, सेठजी को तंग न करना तुम्हें मेरी सौगन्ध है।' वही धृष्टता वही प्रहार करता हुआ विद्रूप। फतह तिलमिला गया। वह अपनी कोठरी में जाकर अपने-आपसे उलझने लगा 'सचमुच पाप प्रच्छन्न नहीं रहता। मैंने शिवली को नाराज करके ठीक नहीं किया। किन्तु मुझे परेशान नहीं होना चाहिए। मुझे सेठजी को डांटना चाहिए। उसे समझना चाहिए कि ऐसी झूठी ! 'झूठी' शब्द के साथ ही उसे धक्का-सा लगा। उसकी अन्तरात्मा ने जैसे उसके विचारण पर ब्रेक लगा दिया हो। 'बात झूठी थोड़े ही है। बात सच्ची है। झूठ का आवरण वही चढ़ा रहा है।' लेकिन उसे सेठजी को कुछ भी नहीं कहना चाहिए। उसका कहना उसे और दुर्बल करेगा और बात की सचाई को सम्बल मिलेगा। वह किसीसे कुछ नहीं कहेगा। आखिर उसने यह निश्चय किया।

उसके तीसरे दिन उसके समर्थन की एक घटना और घटी। मनुष्य की परिस्थिति जब सुधरती है तब बड़ी तीव्र गति से सुधरती है और उसे हर तरफ से लाभ ही लाभ मिलता है।

गीता की सास कौशल्या तीर्थ करने जा रही थी। वह लगभग छह माह तक विभिन्न तीर्थों में घूमेगी इसलिए फतह को यह हुक्म दिया गया कि वह इस बाड़ी में आकर रहे। इस प्रस्ताव से वह बहुत प्रसन्न हुआ। क्योंकि इधर शिवली काम-बेकाम छत पर आ जाती थी और उसे एक विचित्र दृष्टि से घूरती थी जिसको सहन करना उसके बस का नहीं था। उसकी गति उसके संकेत तथा उसके हाव-भाव सबके सब उसे अपने पर व्यंग्य करते लगते थे। वह चाहता था कि वह जल्द से जल्द यह बाड़ी छोड़ दे, पर निष्कारण छोड़ना भी उसे सर्वथा अनुचित लगा ऐसा करना सन्देह भी जगा सकता है तथा शिवली गुस्से में आ शायद उसके राज को फाश भी कर सकती है। पर जैसे ही उसे बाड़ी मालकिन का यह हुक्म मिला वैसे ही वह अति प्रसन्नता में क्षण-भर के लिए उन्माद

पस्त-सा हो गया। वह इसे भी ईश्वर का वरदान ही समझ रहा था। और जब वह अपना सामान लेने के लिए वाड़ी में आया तब वह ऐसा महसूस कर रहा था जैसे वह गत तीन दिन तक किसी अदृश्य कैद में बन्द था। इसलिए अपने रास्ते में कालीजी के सम्पूर्ण भक्ति से दर्शन किए और एक पैसा भी उनके चरणों में भेंट किया।

वह सामान लेकर जा रहा था। मामीजी का आग्रह था कि वह दिन में एक बार उसकी वाड़ी में आकर उससे जरूर मिल जाए। पर मामा जो मामी से अधिक व्यावहारिक दृष्टिकोण रखता था उसे एक कोने में ले गया और परामर्श-भरे स्वर में बोला "फत्तू! तेरी मामी ठहरी बावली काम की बात करती ही नहीं। अगर वहां खाना दोनों समय मिल जाए तो यहां रोज-रोज के आने-जाने का झंझट मत रखना। इस नगर में वही काम करना चाहिए जिसमें दो पैसों का लाभ हो। हम सैकड़ों कोसों से इसलिए ही आए कि कुछ जमा करें। घरवाले कहीं भागकर नहीं जाएंगे। और इस बात की चेष्टा करना कि सेठजी तुम्हें अपना ही समझें। आज के जमाने में किसीको जान प्यारी नहीं है, प्यारा है काम।'

मामा के परामर्श को फत्तू ने ऋषि-वचन की भांति आत्मसात् कर लिया।

जिवली भी आई। वह सब कुछ जानते हुए भी अनजान बनकर बोली "कहां जा रहे हो फत्तू भैया।" भैया कहने के पूर्व वह एक क्षणिक रुकी थी जिससे इस शब्द के तत्कालीन प्रयोग की धृष्टता और विद्रूप फत्तू से नहीं छिप सके।

उसने गुस्सीली आह छोड़ी जो उसकी विवशता की प्रतीक थी। वह अपने सामान को देखता हुआ बोला 'सेठजी के घर जा रहा हूं।"

"क्यों?

'उनका हुक्म है।"

"हुक्म का ताबेदार होना एक अच्छे नौकर का कर्तव्य है। क्या तुम्हारी तबियत वहां दूर नहीं लग जाएगी?"

"नौकरी के साथ तबियत का सम्बन्ध बेतुका-सा ही लगता है।"

"पर छोड़ते हुए चेहरे पर खुशी की चमक भी बेतुकी-सी लगती है। पर

तुम उन्नति के लिए अपना घर छोड़ रहे हो मैं प्रभु से प्रार्थना करूंगी कि व
तुम्हें दिन दूनी और रात चौगुनी सफलता दे।

शिवली का उसे इस तरह धोखा देना उसकी कुछ समझ में नहीं आया
क्योंकि वह उसे अपने से तनिक भी सम्बन्धित नहीं समझता था "ये एक अस
फल और उपेक्षित प्रेमिका हो एक निम्न कोटि की प्रेमिका की प्रतिक्रिया
है। ऐसी स्थिति में उसकी सहृदता और शालीनता मिट जाती है और उसक
हर बात वक्रोक्ति का रूप धारण कर लेती है। उसमें निर्लज्जता का भी समावेश
हो जाता है और वह कुछ स्पष्ट संकेत भी करके अपनी जलन का अहसास करात
है। क्या शिवली एक असफल प्रेमिका है उसकी ? नहीं वह उसे सदा कष्ट
पहुंचाना चाहती है। कष्ट ? यह शब्द उसके मस्तिष्क में कई प्रश्न खड़े कर
गया।

शिवली जब उसपर व्यंग्य कस रही थी तब उसके मुख पर किंचित् भी
झिझक व झेंप नहीं थी। वह अत्यन्त साधारण मूड में यह सब कह रही थी
वह परेशान हो चुका था। अन्त में उसने तंग आकर कहा "अब तुम जा सकती
हो। मैं तुमसे सख्त विनती करता हूं।" सख्त के साथ विनती शब्द का अप
भ्रंश ही था।

"मेरे यहां रहने से तुम्हें कोई बाधा हो रही है ? तुम निस्संकोच अपनी मामी
से बातचीत कर सकते हो। मैं तुम्हें एकांत में जाने की इजाजत देती हूं।" वह
हुक्मरान की तरह कह रही थी।

"मुझे जो भी करना है, करता रहूंगा पर तुम ईश्वर के लिए यहां से चली
जाओ। और मुझे तंग न करो।"

वह हंसती हुई चली गई।

मामी ने उसके जाते ही कहा, "आजकल यह बहुत बोलने लगी है। पहले
यह चुप रहती थी।"

"आजकल इसका दिमाग खराब है।" उसने चिढ़ते हुए कहा।

इसके बाद वह भगत बाबू की बाड़ी में आ गया। माँ कौशल्या तीर्थ-यात्रा
पर चली गई। घर में तीन-चार नौकर और एक जमादार रह गया।

सेठजी को उसने कुछ भी नहीं कहा। वह अपरिचित बना रहा। उसने अपनी प्रकृति में कुछ परिवर्तन किए। जैसे वह पहले की अपेक्षा अधिक गंभीर बना रहता था। वह सेठजी का आदर करता था। वह भगत बाबू को बार-बार बहूजी के पास आने का अनुरोध करता था। उसके कई अनुरोधों पर कभी-कभी एक रात के लिए भगत बाबू आ जाते थे। शेष रातें वह चोर की तरह गीता के पास जाता था। फतह का यह व्यापार बिना किसी अवरोध के चलता रहा।

उस दिन संक्रान्ति थी।

गंगा-स्नान करके जैसे ही फतह लौटा वैसे ही उसने अपनी मामी को अपने कमरे में पाया। गीता उस समय संक्रान्ति के दान के रूप में चांदी के प्याले बांट रही थी। तेरह चांदी के प्याले उसको बांटने थे। अतः वह अपने नौकरों को समझा रही थी कि किस-किस आदमी को प्याला देना है। एक प्याला फतह को भी दिया गया। गीता इतनी व्यस्त थी कि वह फतह की मामी से बातचीत भी नहीं कर सकी।

"क्या बात है मामीजी? क्या आप अपने भांजे के लिए संक्रांत (दान) लाए हैं?"

"हां, मैंने अलग बांटे हैं। पर मैं एक विशेष बात तुमसे कहने आई हूं। वह यह है कि तुम्हारी मां की चिट्ठी आई है। तुम्हारा विवाह उसने माघ से एक माह बाद करने का निश्चय किया है। इसलिए तुम्हारी मां ने कहा है कि तुम जल्द से जल्द आ जाओ।"

"लेकिन—?"

"लेकिन-वेकिन कुछ नहीं चलेगा। तुम्हारे कौन-सा बाप बैठा है जो सारी तैयारियां कर देगा? तुम्हें खुद अपना काम करना है।"

मैं बस भगत बाबू से बात करूंगा।"

र ही दिन वह भगत बाबू के पास गया। भगत बाबू दफ्तर से कहीं या
राजकमल से बनारस की एक हीराबाई के यहां सुविधानुसार जाते
।

ह को वे देखते ही बोले "छन्नू, आज मैं तुम्हें आगाह करना चाहता
,स भविष्य में बहूजी की कोई भी सिफारिश लेकर मेरे पास मत आना।
ा भला-बुरा खूब समझता हूं।"

वह नितांत गंभीर हो गया "मैं किसी तरह की सिफारिश लेकर अभी
पास नहीं आया हूं। मैं केवल एक माह के लिए देश जाना चाहता हूं
लिए निवेदन करने आया हूं।" (प्रवासी राजस्थानी अपने प्रांत को देश
ा से ही सम्बोधित करते हैं।)

क्यों? चौंककर पूछा भगत बाबू ने।

'इसलिए बाबूजी कि मेरा विवाह है।

'विवाह, क्या तुम्हारा विवाह अभी तक नहीं हुआ है?

'नहीं।"

"आश्चर्य है!"

"आश्चर्य की क्या बात है? गरीब के घर चोंक भी सहजता से नहीं
। आप स्वयं जानते हैं—बुड्ढे-बुढ़िया के विवाह में भी कुछ खर्च होता है
मैं सिर्फ साठ ही रुपए पाता हूं पिताजी हैं ही नहीं फिर कौन सहारा देता
चिंता करता?

"अच्छा यह बताओ लड़की कैसी है? उनकी आंखों में सांप जैसी दीप्ति
गई।

"सुन्दर है।"

"तुम्हारे भाग्य अच्छे हैं। पुरुष को सदा सुन्दर स्त्री से ही शादी करनी
हिए। तुम कब जाना चाहते हो? नहीं तुम जब कभी भी जा सकते हो।"

"मुझे कुछ रुपयों की जरूरत है।"

"कितने की?"

"हजार दो हजार की।

"टोकड़ियों से मैं भेजा।
'बहुत अच्छा।"

उसके तीसरे ही दिन फतह देश चला गया। उसके पास तमाम जेवर थे। गीता ने वे जेवर उसे पूरे रूप में बनाकर दिए थे। कुछ नकदी भी उसे दी थी ताकि वह धूमधाम से विवाह कर सके।

गीता से विदा होते हुए उसे बड़ा कष्ट हुआ। गीता ने अन्त में चंद शब्द कहे जिसका अर्थ यह था कि तुम जल्द ही लौट आना। मुझे तुम्हारे बिना एक पल भी चैन नहीं पड़ेगा।

एक वर्ष बीत गया।

इस एक वर्ष में अनेक महत्त्वपूर्ण बातें हुईं। उन महत्त्वपूर्ण बातों में मुख्यतः वे थीं जिन्हें मैं आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूं। हालांकि कुछ घटनाएं ऐसी भी घटती हैं कि हर व्यक्ति उनपर आश्चर्य करता है पर इसमें आश्चर्य की तनिक भी गुंजाइश नहीं है। हम जीवन में हर घटना को एक ही दृष्टि से नहीं देख सकते। हर व्यक्ति को एक ही मानदंड से मूल्यांकन नहीं कर सकते। आज किसीकी आत्मा का हम गहराई से विश्लेषण करें, तो समझें तो एक विचित्र रहस्य हमारे सम्मुख उपस्थित हो जाएगा और हम सहजता से उस मनुष्य पर विश्वास नहीं कर पाएंगे कि यह मनुष्य इतना विषम व रहस्यपूर्ण हो सकता है।

मैं आपके सम्मुख जो कहानी प्रस्तुत कर रहा हूं वह एक ऐसे आदमी की कहानी है जो किसी भी तरह से धनवान बनना चाहता है। उसकी दुरात्मा को मैंने खूब जाना-परखा है। इसलिए मेरी कथा का नायक आपको वर्तमान जीवन-जगत् में दूर-सा लगेगा तथा आप उसे अस्वाभाविक भी कह देंगे। कहीं कहीं आप मुझपर खफा भी हो सकते हैं पर जो विकृतियां व कुंठाएं इसमें एकत्रित हो रही हैं, क्या उनसे यह संभव नहीं कि आनेवाले कल में पूंजी-आश्रित पोष-

गुना इस्लाम पृथक्-पृथक् रूप से देखने को नहीं मिल सकते ? अभी तो बिसमिल्लाह है। पहले क्या थे अब क्या हैं और कल क्या होंगे, यह हम सभी जानते हैं। और इस कहानी में आए हुए चरित्र तथा घटनाएं भी सच्ची हैं। अन्तर इतना ही है कि मैंने उन्हें एक पुस्तक का रूप दे दिया है। साहित्यिक रूप देने से कुछ कलात्मक विशेषताएं सहजता से आ जाती हैं।

इस एक वर्ष में फत्तह तीव्र गति से उन्नति करता गया और आज वह भगत बाबू का हेड मुनीम बन गया है। उन्नति में सहायक हुई उसकी अपनी बीबी। इस व्यापारिक युग में हर वस्तु का उपयोग आदान प्रदान के रूप में ही हो रहा है। मुझे यह लिखते हुए दर्द हो रहा है। सोच रहा हूं हमारा आदर्श और हमारी नैतिकता कहां है ?

बेचारी पद्म को व्यर्थ में ही अपने सतीत्व को नष्ट करना पड़ा।

जब वह पहली बार आई थी भगत बाबू ने उसे भोजन पर बुलाया था। उस अकेली को ही बुलाया था। भोजन करने के बाद भगत बाबू ने उससे गंदा मजाक किया। पद्म को यह बहुत बुरी लगी। उसने फत्तह से शिकायत की। फत्तह ने उस बेचारी को बुरी तरह डांटा। वह बेचारी हकपका के रह गई। उसकी समझ में नहीं आया कि उसकी शिकायत का उत्तर पाते ही डांटकर क्यों दिया जा रहा है ? उसे भ्रम हुआ, शायद भगत बाबू ने उससे मजाक गलती से कर लिया था या वहां इस तरह का गंदा मजाक करने की रीति है।

उसके चंद दिन बाद भगत बाबू ने उसे अपने दफ्तर बुलाया और कहा, "अब तुम मेरे साथ ही रहा करो।"

"जैसी आपकी मर्जी।"

"मैंने तुम्हारे सालाना वेतन की रकम के आगे एक बिन्दी और बढ़ा दी है।" अर्थात् फत्तह का सालाना साठ रुपये से सीधे छः सौ रुपये हो गया। वह बहुत प्रसन्न हुआ। उसने उसी रात अपनी बीबी को समझाया "तुम अक्ल से काम नहीं लेती हो।" इस वाक्य ने पद्म को झकझोर दिया। उस दिन वह इस वाक्य का गूढ़तम संकेत नहीं समझी थी पर बाद में उसे मालूम हुआ कि उसका संकेत कितना घिनौना और गंदा था।

और तब एक दिन उसने तड़पकर कहा "आपका दिमाग ठीक है ? आप जानते हैं कि आपकी पत्नी के साथ आपका मालिक कैसा व्यवहार करता है !"

वह पुंसत्वहीन प्राणी की तरह ढिठाई भरी हँसी हँसकर बोला "तुम बनिये की बहू हो मैं तुम्हें अधिक कहना नहीं चाहता।"

"अब मैं समझी। तुम मेरा सौदा करना चाहते हो। तुम मुझे बेचना चाहते हो।"

फतह उसका विकराल चेहरा देखकर स्तब्ध हो गया।

"आप भलमानसपन का ढोंग रचकर अपने को निर्दोष समझना चाहते हैं ? मैं समझती हूँ यह बहुत ही नीचे दर्जे का कमीनापन है और आप इसके साथ एक भयंकर जुल्म भी कर रहे हैं।"

"तुम मेरी पत्नी हो या पति ? पेट भरकर खाने को क्या मिल गया, माथा ही खराब हो गया है। मैं जानता हूँ कि भगत बाबू कैसे आदमी हैं। तुम जरा विवेक और बुद्धि से काम लिया करो। हर बात का इतना थोथा अर्थ मत लगाया करो।"

उसके नैन भर आए, "आपको क्या हो गया है ! सारे पुत्रों की मृत्यु के बाद आप अपार धन का क्या करेंगे ?"

"तुम पगली हो। मूर्ख हो। भविष्य में इस तरह बौखलाना-चिल्लाना मैं पसंद नहीं करूँगा। मैं चाहूँगा कि तुम कुछ समझ से काम लो। मेरी आकांक्षा को देखो, समझो।" वह दृढ़ता से बोला "मैं तुम्हारी सारी हेकड़ी भुला दूँगा।" कहकर उसने अपना हाथ उसे पीटने के लिए उठाया।

पद्म को लगा कि वह पागल हो जाएगी। वह दो दिन तक खाना नहीं खा सकी। आवेश और क्रोध में वह पत्थर की प्रतिमा की तरह हो गई। उसका मन किसी भी काम में नहीं लग रहा था।

दो दिन से फतह भी नहीं आया।

वह दो दिन तक विविध बहियों के काम में भगत बाबू की बाड़ी में ही रहा। गीता अब पहले से और भद्दी हो गई थी। पर उसने खूब धन संग्रह कर लिया था। वह हर माह कुछ न कुछ जेवर बना लिया करती थी। उसको यह विश्वास

ही गया था कि भगत बाबू एक न एक दिन उसे छोड़ ही देंगे। दो दिन के बाद फत्ताह अपनी गाड़ी लाया। गीता ने आते ही उसके पाँव पकड़ लिए। वह रोती हुई बोली "आप इतने नाराज़ हो गए? आपने घर आना क्यों बन्द किया?"

"तुमने मुझे परेशान कर दिया है। मैं तुम्हें लक्ष्मी समझकर घर लाया था और तुम मुझे कंगाल करके रखोगी।"

"अब मैं आपको कभी तंग नहीं करूँगी। आप रात को यहाँ आ जाया करें। मुझे यहाँ अकेले में बड़ा डर लगता है। मैं आपको प्रसन्न रखूँगी प्रसन्न।'

आज जब वह भगत बाबू के पास गया तब भगत ने उसे एक अंगूठी दी। अंगूठी देते समय उसने कहा "यह मेरी ओर से तुम्हारी बहू को।" वह खिल उठा। उसके आँखों की चमक देखकर वह बोला "तुम्हारी बहू बहुत अच्छी है, बहुत अच्छी।" उस समय उनकी आँखों में वासना दीप्त हो उठी।

फत्ताह आजकल भगत बाबू के बंगले में ही रहता था। बंगले के एक कोने में उसको दो कोठरियाँ दी हुई थीं। गीता वहाँ नहीं आती थी क्योंकि भगत बाबू कभी-कभी वहाँ अन्य लड़कियों को भी लाया करते थे। अपनी चरित्रहीनता की परवाह किए बिना ही वह भगत बाबू का विरोध करती थी। नतीजा यह निकलता कि सास-बहू में जोर की ठन जाती। गीता आवेश में ऐसे अपमान सूचक शब्दों का प्रयोग करती थी जो उसे नहीं करने चाहिए थे। इन सबके बीच फत्ताह एक कड़ी था। वह प्रत्येक के समक्ष चतुर राजनायक की तरह कार्य करता था।

वह गीता को कहता, "तुम्हें पैसा धन इकट्ठा करना चाहिए। भगत बाबू का कभी न कभी दिवाला निकलेगा ही। काम ज्यादा और दाम कम।"

वह जीवम्मा को कहता "इसमें भगत बाबू का क्या दोष है? आपकी बहू का मिजाज ही इसका जिम्मेदार है। सेठानीजी मधुर वचन का प्रभाव कौन नहीं जानता? मैं समझता हूँ कि मधुर वचनों से वह भगत बाबू की आत्मा तक को जीत सकती थी पर वह उपेक्षा से विमुख हो गई है।"

और वह भगत बाबू को कहता "आपकी जैसा है तंग अपना जीवन नहीं बनाए

सकता। उसकी भी अपनी आकांक्षाएं, पिपासाएं और सपने होते हैं। मैं आपको महान समझता हूं अन्यथा इस तरह की मही औरत पर दूसरी औरत कभी की बिठा दी जाती जबकि वह सन्तान भी पैदा करने में असमर्थ है। आपने उसको अपने मस्तक की स्वामिनी भले ही न बनाया हो पर लौकिक रूप से उसके उस पद को आप रखे हुए हैं। यह क्या कम है? आपको मैं इसके लिए धन्यवाद देता हूं।"

यह उसकी नीति थी। वह दिन-प्रतिदिन नई-नई बातें सोचा करता था। भगत बाबू की सारी दुर्बलताओं को वह उनकी रईसी बताता था। अपनी पत्नी के रूप के प्रभाव का भी उसने दुरुपयोग किया। वह नारी अनिच्छा से भगत बाबू की ज्यादतियां सहती थी। भगत बाबू ने उसे भी दस हजार के जेवर बनाकर दिए। वह इन जेवरों को देखकर पीड़ा से तिलमिला जाती थी पर फतह खुश होता था। वह अपनी पत्नी के पास बिना किसी हिचक के आता-जाता था और उसकी पत्नी अब सोचा करती थी कि यह कैसा पति है? यह कैसा पति है?

कुछ भी हो फतह ने बड़ी तेजी से बीस हजार रुपये इकट्ठे कर लिए थे। उन रुपयों को देख-देखकर वह एक अपूर्व गौरव अनुभव किया करता था। इन रुपयों के अतिरिक्त जीवन में क्या है वह कुछ भी नहीं सोचता था। धीरे-धीरे पत्नी उसके प्रति घृणा से भर उठी।

एक दिन फतह को यह मालूम हुआ कि अब मां बननेवाली है। वह बहुत खुश हुआ। उसने भगत बाबू को यह खबर सुनाई। भगत बाबू यह समाचार सुन कर उदास हुए और बोले "बच्चा औरत के रूप का दुश्मन होता है।"

भगत बाबू को किसी वस्तु की कमी नहीं थी और वे अनाप-सनाप खर्च भी कर रहे थे। उनकी रईसी के पीछे हो रहे घाटे का उन्हें ज्ञान ही नहीं था और न ही ज्ञान कराया गया। ज्ञान था केवल फतह को। वह हर रात भगत बाबू के लग रहे घाटे को गिना करता था। एक साल दो साल और चार साल। और वह एकांत में मौन अट्टहास करने लगता था।

अब के पेट का बच्चा बढ़ रहा था। साथ-साथ भगत बाबू का घाटा भी बढ़ रहा था। कभी-कभी रोकड़िया कुछ कहता तब फतह उसे रोक देता था। वह

चाहता था—भगत का दिवाला पिट जाए।

रात्रि के निस्तब्ध प्रहर में वह अपने कमरे में बैठे-बैठे उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह खिलखिलाकर हंस पड़ता था। पद्म भयभीत-सी देखती। पूछती "क्या बात है।"

"कुछ नहीं।"

"आप हंसे क्यों?"

"मैं इसलिए हंसा कि शीघ्र ही भगतबाबू का नाम चमकनेवाला है।"

वह समझ गई कि जरूर कोई अनर्थ होनेवाला है। वह पति के संकेतों व शब्दों का मर्म समझने लगी थी। भयभीत स्वर में वह बोली "आप ईश्वर से नहीं डरते?

"मैं सब काम उसकी आज्ञा से ही करता हूं।" मदन दृढ़ता से कहा।

"नहीं। आप उनका इतना अहित मत चाहें। आखिर आपने उनका नमक खाया है। मुझे ऐसा लगता है कि आप स्वस्थ नहीं हैं। आप रुपयों के लिए कभी न कभी पागल हो जाएंगे।"

"तुम इसकी चिन्ता न करो। मैं बिलकुल स्वस्थ हूं। मैं एक दिन सबसे बड़ा आदमी बनूंगा।"

"अपने सुख-संतोष को बचकर?"

"क्यों?"

"क्यों क्या आपने कभी मेरे दर्द को समझा है?"

"तुम्हें कोई दर्द है ही नहीं। बोलो तुम्हें किस चीज की जरूरत है। मैं अभी हाजिर करता हूं।"

पद्म चुप हो गई। वह घृणा से अवाक् होकर रो पड़ी। वह नहीं चाहती थी कि वह यह कहे कि उसके पेट में जो बच्चा है उसके बारे में वह यह भी निश्चयात्मक रूप से नहीं कह सकती कि वह बच्चा किसका है? उसके अपने पति का या भगतबाबू का?

"तुम बहुत अच्छा खाती हो और बहुत अच्छा पहनती हो।"

पद्म निरुत्तर रही। वह विस्मित-सी जड़वत् जैसे अपने पति को देखती

रही। अन्त में वह बोली "मुझे अपने देश भेज दीजिए। अब मैं यहाँ रहना नहीं चाहती।"

"अब मैं तुम्हें देश जरूर भेजूँगा। पहली संतान पीहर में ही होनी चाहिए। इससे मुझे आर्थिक लाभ ही होगा। मैं तुम्हें अवश्य भेज दूँगा। और जल्द ही।"

और दूसरे ही दिन उसने भगतबाबू के कान में यह बात डाल ही दी। भगतबाबू ने कोई दिलचस्पी नहीं दिखाई कि पद्म यहाँ रहे या न रहे। उनके मौन के भेद को वह समझ गया और उसने पद्म को वापस अपने देश भेज दिया।

पद्म के जाने के बाद वह मीता को फिर से बरगलाने लगा। भगत बाबू अमुक लड़की के यहाँ जाते हैं। भगत बाबू अमुक होटल में एक गोरी मेम को लेकर आज रात-भर रहे। देखो वे रुपयों को पानी की तरह बहा रहे हैं अपना घर भर लो वर्ना दर-दर की ठोकरें खाओगी।

"मैंने उन्हें आगाह भी किया था।" मीता ने कहा।

"उन्होंने क्या कहा?"

"वे झिड़ककर बोले, तुम चुप रहो। तुम्हें जो जरूरत हो उसकी मुनीमजी को खबर दे दिया करो।'

"मैं क्या करती जग्गू? मुझे ऐसा लगता है कि कोई बड़ी दुर्घटना घटित होगी। क्या तुम इतनी वफादारी भी अपने स्वामी के लिए नहीं कर सकते कि वे यह जान जाएँ कि उनकी असली स्थिति क्या है? तुम्हें मेरी कसम है। मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूँ कि तुम्हें इससे लाभ ही होगा।"

जग्गू पहली बार भगत बाबू के पास उनकी सही स्थिति समझाने के लिए गया। भगत बाबू उस समय विश्राम कर रहे थे। ढलती संध्या का समय था— सुहावना और मनभावना। रंगीला और नशीला।

"मैं अन्दर आ सकता हूँ?" उसने अपनी गर्दन नीची करके पूछा।

"हाँ हाँ क्या बात है?" सहज भाव से भगत बाबू ने कहा।

"मुझे तीन लाख रुपये चाहिए।"

"क्यों ?" चौंक पड़े भगत बाबू।

"क्योंकि सेठ मोहनचन्द का देना है। उन्होंने तकाज़ा किया है।"

"तो दे दीजिए।"

"पर मैं कहाँ से दूँ ?"

"मिल की बिक्री ?"

"मिल की बिक्री और आप बहूजी तथा सेठानीजी मनमाना खर्च कर र
हैं। मैं नहीं जानता कि वे दोनों क्या करती हैं।"

"मैं एक-दो दिन में प्रबन्ध कर दूँगा।

यह पहला दिन था कि जब भगत बाबू को अचानक झटका लगा। उनक
उदासी बढ़ गई और वे कार में बैठकर चलते बने।

फतह समझ गया कि चमेली के मन्दिर के कुएँ का मामला क्या चल जाएग
इधर अनाप-शनाप खर्चे के कारण सात लाख की टूट थी। यह सात लाख क
से आएगा ? वह इतना प्रसन्न था जितना कोई विजय प्राप्त होने पर मतवाला
किन्तु उसने ऐसा कोई भी भाव अपने चेहरे पर नहीं आने दिया। वह उदास
उदास-सा बैठा रहा। वह जानता था कि भगत बाबू चन्द घड़ी में वापस आए
और उसके समक्ष अपनी समस्या रखेंगे। उसने अपने आपको एक कुशल अभि
नेता की तरह तैयार किया कि उसे उनके सवालों से क्या-क्या कहना है। व
बड़ी देर तक मन ही मन मंसूबे बाँधता रहा। उसका यह अनुमान भी सही निकल
कि भगत बाबू शीघ्र ही लौट आएँगे।

वे लौटे तब बड़े परेशान थे। सच कहा जाए तो उनके चेहरे पर हवाइय
उड़ रही थीं। वे टूटे हुए इन्सान की तरह अपने कमरे में बैठ गए। उन्हों
पुकारा "फतह!

"क्या है बाबूजी ?"

"तुमने मुझे अन्धेरे में रखा!"

"नहीं, नहीं। मैं समझता था कि आप सदा इन बहियों को देखते हैं। मुझ
यह मालूम नहीं था कि आप "

"अब मैं क्या करूँ ?

"मैं आपको बताता हूं। आप ठहरिए!" कहकर वह अपनी कोठरी में गया। उसने अपने पास की कुछ नकदी और कुछ जेवर, जो लगभग पांच हजार के थे, भगत बाबू के चरणों में रख दिए।

"यह क्या?

"यह सब आपका ही है।

वह अत्यन्त नाटकीय दृश्य था जिसने भगत बाबू के मन में उसके प्रति गहरी आस्था को उत्पन्न कर दिया। फलतः वह मन ही मन उस शिकारी की तरह हंस पड़ा जो अपने शिकार को पकड़ने के लिए दाना डालता है और उसी समय उसने ईश्वर से प्रार्थना भी की कि उसे इतना धैर्यशील व निपुण बनाए रखे कि वह भगत बाबू के मन में यह विश्वास जमा सके कि वह उनका अपना है क्योंकि उसकी प्रखर और दुष्ट बुद्धि यह अच्छी तरह जानती थी कि आगे कितना दुर्दान्त दृश्य उपस्थित होनेवाला है। फिर भी उसने सजल आंखें करके कहा "मैं जानता हूं कि इस पाप के मूल में क्या है। आपकी पत्नी। अगर आपकी पत्नी एक सुशिक्षित मधुरभाषिणी और चतुर होती तो आप पथभ्रष्ट नहीं होते? पर आप चिन्ता न करें। यह सही है कि आपको भयंकर परिणाम से टकराना ही पड़ेगा। मैं समझता हूं कि आप किसी एक निजी वकील या बैरिस्टर को बुला लीजिए।"

"क्यों?

'आप यह नहीं जानते कि दो-चार दिन में यह खबर सब जगह फैलने वाली है और तब लेनदार आपकी ईंट-ईंट को नीलाम करवा देंगे। मैं चाहता हूं कि आप अपनी मिल और जायदाद दूसरों के नाम कर दें। आपको मेरी बातें विचित्र अवश्य लगेंगी पर मुझे विश्वास है कि इसीमें आपका भला है। वैसे मैं अभी सेठानीजी के पास भी जाता हूं। बहूजी को भी समझाता हूं और उनके पास जितना भी है उसे ले आता हूं।"

भगत बाबू किंकर्तव्यविमूढ़-से हो गए। चेहरा पीला-पीला और शुष्क-सा नजर आने लगा। उनकी भंगिमा देखकर कौन यह अनुमान लगा सकता था कि यह वही व्यक्ति है जो थोड़ी देर पहले अपने को सबसे अधिक सुखी इन्सान

समझता था।

फतह जाता-जाता वापस मुड़ा और बोला "हमें संकटकालीन स्थिति में किंचित् भी नहीं घबराना चाहिए। क्योंकि घबराहट में हम कुछ ऐसे कदम भी उठा सकते हैं जिसका परिणाम आपका सचमुच दिवाला पिटवा देगा। लोग हमें चतुर व्यापारी नहीं मूर्ख कहेंगे। अन्य ऐसी स्थिति में बड़े आदमी अपना द्वारा बन्द करवाकर खाली हाथ बता देते हैं। इससे उनकी प्रतिष्ठा अवश्य चली जाती है पर फर्म का दूसरा नाम बदल करके पूंजी के बल पर पुनः उसी प्रतिष्ठा को अर्जित किया जा सकता है। क्योंकि आज के युग में पूंजी प्रतिष्ठा और सुख की मूलभूत कारण बन गई है।" वह भगत बाबू की निरपेक्षता की ओर से देखकर बोला "मैं आपकी मानसिक यंत्रणा को समझता हूं।" वह एक नट की भांति एकदम घूमते हुए बोला "ऐसी स्थिति में आदमी संतप्त ही नहीं क्षुब्ध भी रहता है। लेकिन ऐसी अवस्था से समस्या और भी जटिल हो सकती है। समाधान उनके पास भी नजदीक नहीं आते।"

"फतह! मेरी समझ में नहीं आया कि आखिर रुपया गया कहां?"

"मिल भी पूरे वर्ष चली नहीं। कुछ दिन हड़ताल रही। कुछ दिन मशीनों की गड़बड़ी। माल भी ऐसा निकला जिसकी बाजार में बराबर मांग नहीं बनी रही। लगभग दो लाख रुपये आपने खर्च कर दिए। लाख के लगभग मांजी ने ले लिए। वह बद्रीनाथजी के रास्ते में धर्मशाला बनाने की योजना बना रही है। लगभग इतनी ही रकम बहूजी ने ले ली है। इसके अतिरिक्त सारे आदमियों के खर्चे। पर आप अभी अधिक न सोचकर किसी बैरिस्टर को बुला लीजिए। मैं अभी वहां जाकर जो कुछ है ले आता हूं। हमें दिवाला जरूर निकालना है पर नाममात्र का दिवाला अर्थात् सारी पूंजी अपनी और खाली हाथ लेनदारों को।"

वह सीधा बाहर आया।

संध्या का धुंधलका छा गया था।

गीता अपने ठाकुरजी का धूपबत्ती कर रही थी। [illegible] नीचे कार्य में व्यस्त थी। सबसे पहले वह मांजी के पास गया। मांजी अपनी तिजोरी को खोलकर रुपए गिन रही थी। फतह को देखकर उसने रुपये इस हड़बड़ी से

भीतर रखे गोया वह उससे छीन लेगा। उसने तिजोरी को तुरन्त बन्द किया और एक खोखली हँसी हँसकर वह बोली "क्या बात है फतह, आज बेसमय आना कैसे हुआ ?"

"मैं आपके पास एक अत्यन्त जरूरी काम से आया हूं।"

"कौन-सा जरूरी काम है ?" वह संभलकर बोली।

"समथ बाबू एक नई मिल खरीद रहे हैं। उन्हें कुछ रुपयों की सख्त जरूरत है। अतः आपके पास जितना भी रुपया है, वह दे दीजिए, वे आपको पांच सात दिन में लौटा देंगे।"

कौशल्या की आंखें विस्फारित हो गईं। वह अत्यन्त औसेपन से बोलीं, "तुम कभी-कभी मुझ जैसी बुढ़िया की थाह लेने आ जाते हो। क्या तुम मुझसे मजाक तो नहीं कर रहे हो ? आप बच्चे जब कभी अपने नीरस काम से उकता जाते हैं तो बुढ़ियाओं तक से नई-नई बातें करके कुछ आनन्द लेते हैं।"

"नहीं।" उसने दृढ़ता से कहा "मैं आपसे मजाक नहीं कर रहा हूं। क्या एक नौकर इस तरह की बेअदबी कर सकता है ? मैं समझता हूं वह ऐसा करके अपनी नौकरी से हाथ धोकर जीएगा।"

"इसका मतलब यह है कि तुम सच बोल रहे हो ?"

"हां।"

"लेकिन तुम्हें यह भी पता होना चाहिए कि मेरे पास रुपये बिलकुल नहीं हैं। मुझे पांच हजार रुपये अब जरूर चाहिएं। मैं तुम्हें कहलवाने वाली भी थी क्योंकि धर्मशाला का काम अभी तक समाप्त नहीं हुआ है। मैं इस धर्मशाला की वजह से बड़ी तंग हूं।"

"पर अभी आपने हजार-हजार के "

वह बीच में ही मर्मभेदी दृष्टि से फतह को देखते हुए बोली "तुम्हें भ्रम हो गया है। वे रुपये मुझे मेरी सहेली ने दिए हैं। वह आज रात को आकर उन्हें वापस ले जाएगी। तुम्हें मुझपर विश्वास करना चाहिए, मैं समझती हूं एक साठ वर्ष की बुढ़िया व्यर्थ का झूठ नहीं बोल सकती। वह जानती है कि वह तो चार दिनों में अवश्य मरेगी।"

"मुझे विश्वास नहीं होता। क्या आप उस सहेली का नाम बता सकती हैं ?" उसने पैनी नज़र से घूरकर पूछा।

"नहीं बता सकती।"

"क्यों ?"

"क्योंकि उसका पति एकदम जुआरी है। साम दाम दंड भेद से वह मेरी सहेली को गरीब बनाना चाहता है। वह इतना दुष्ट है जितना एक दैत्य हो सकता है। वह सुहाग की चूड़ियां तक भी एक बार बेच आया है। तुम जानते हो मेरी सहेली ने चूड़ियां तो चूड़ियां नाक में कांटा तक पहनना बंद कर रखा है। वह करे भी क्या ? छोटे-छोटे बच्चे हैं उनके भविष्य को देखना जरूरी है।" वह क्षण-भर रुककर व्यथापूरित स्वर में बोली, "मैं तुम्हें भी उसका नाम व पता नहीं बता सकती। तुम उसके पति को अच्छी तरह जानते हो। कहीं तुम स्नेहवश या द्वेषवश उसको कुछ कह दो वह उसे मारे-पीटे भूखी-प्यासी रखे खुद मरने की धमकी दे फिर वह बेचारी क्या करेगी ? सचमुच वह एक हिन्दू नारी है जो आदर्श और कर्तव्य के साथ जीवन निर्वाह करती है। वह एक पतिव्रता की तरह सारा धन अपने पति को देना चाहती है पर वह अपने बच्चों की दुर्दशा नहीं देख सकती। अतः बेचारी ने ये रुपये मुझे संभलवा दिए ताकि वह यहां से थोड़ा-थोड़ा ले जाए।"

"फिर मैं चलता हूं।"

"देखो तुम मेरे बेटे के बराबर हो।" कौशल्या कृत्रिम स्नेह अपने स्वर में लाती हुई बोली "तुम्हें मुझपर विश्वास करना चाहिए। तुम्हारे कहने पर मैं सौगन्ध भी खा सकती हूं।"

"मैं आपपर बहुत यकीन करता हूं।"

"करना भी चाहिए। आखिर मैं इस उम्र में इतने रुपये रखकर क्या करूंगी ? सच पूछो, यह धर्मशाला बन जाए तो मैं बिलकुल मोह-माया से परे हटकर ईश्वर भजन में तल्लीन हो जाऊंगी।"

कौशल्या ने मीठा उत्तर दे दिया।

वह उसी क्षण गीता के पास गया। गीता अपने कमरे की वस्तु को ठीक

कर रही थी। फतह को देखते ही वह विस्मय से बोली "आज तुम रास्ता भूल गए क्या !"

"नहीं तो !

"इतने दिन कहां रहे ? तुम नहीं जानते मैं जिसे प्यार करती हूं, उसके लिए कितनी बेचैन रहती हूं !

"क्या करूं आपके पतिदेव घड़ी-भर के लिए भी नहीं छोड़ते। कभी यहां और कभी वहां !"

"पर' "

"पर क्या ?"

"पर किसी चाहनेवाले को इस तरह सताना कहां तक उचित है ?" उसने चुलबुली प्रमिका की तरह कहा।

"मुझे क्षमा कर दो।" वह चौंककर बोला "सुनो मीरा तुम्हारे पति एक अच्छी मिल खरीदने जा रहे हैं, क्या तुम उनकी इस काम में मदद नहीं करोगी ?

"मैं मिल खरीदने में कैसी मदद कर सकती हूं ?"

"वे चाहते हैं, तुम्हारे पास जितनी नकदी और जितना जेवर है, वह तुम उन्हें दे दो। मैं सच कहता हूं कि उन्हें आजकल रुपयों की बड़ी तंगी है।"

वह एक बार बाहर गई। उसने इधर-उधर ताका और वापस आकर बोली "तुम्हारी क्या राय है उन्हें पैसा दिया जाए या नहीं ?"

उसने स्थिर दृष्टि से उसको देखा। फतह चुप रहा।

"तुमने मुझे प्यार किया है, स्वार्थवश ही किया है पर यह निश्चित है कि तुमने मुझे प्यार जरूर किया है।"

फतह मन ही मन हंसा मैंने तुम्हें जरा भी प्यार नहीं किया। क्या एक चैक से बनावटी प्यार भी किया जा सकता है ? मैंने सिर्फ अपना स्वार्थ पूरा किया।

"तुम यह भी जानते हो कि मैंने अपनी मर्यादा त्यागकर तुम्हें सर्वस्व विसर्जन किया है। परलोक के दंड को जानकर भी मैं पाप करती रही हूं।

मुझे विश्वास है कि इसका मुझे ईश्वर बड़ा कड़ा दंड देगा। पर एक अपेक्षिता स्त्री ऐसे तीव्रतम क्षणों को छोड़ भी कैसे सकती है? उन क्षणों का मोह, आनंद और उल्लास! ऐसे क्षणों की स्मृति को तुम अपने हृदय में रखते हुए मुझसे तत्काल हम-फरेब नहीं कर सकते। मुझे सच-सच बताना होगा कि उन्हें रुपयों की क्यों ज़रूरत है।

वह अत्यन्त प्रभावशाली ढंग से बोल रही थी।

फतह उससे चार नज़र नहीं कर सका।

"मैं समझती हूं कि मैं एक हेय स्त्री हूं। तुम्हारे समक्ष मेरी कोई इज्जत नहीं है। कदाचित् तुम मुझसे घृणा भी करते होओगे पर मैंने तुम्हें प्यार किया है। चाहे उस प्यार में मेरी गुस्से और चिढ़ की भावना भले ही रही हो।"

"मैं तुम्हें सम्मान की दृष्टि से देखता हूं। मैं तुम्हें प्यार करता हूं।" फतह ने अपनी असत् की भावना को छुपाते हुए झूठ कहा।

"फिर बताओ उन्हें रुपयों की ज़रूरत क्यों पड़ी?"

"तुम्हें मुझसे एक वायदा और करना पड़ेगा कि यह बात तुम किसीको भी नहीं कहोगी।"

"मैं तुम्हें वचन देती हूं।"

"तुम्हारे पतिदेव ने ऐय्याशी में बहुत रुपया बरबाद कर दिया है। उनका लगभग सात लाख का लोगों को देना बाकी है। ऐसी स्थिति में उनकी इज्जत बचाना हमारा परम धर्म हो जाता है।"

"तुम पक्के बनिये और मुनीम नहीं हो। अगर कोई बनिया ऐसी स्थिति में जो संभलने में सर्वथा असमर्थ है लोगों को देना चुकाता है वह मूर्ख है।" मीता झट से उसे झिड़कते हुए बोली।

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा।"

"मेरा मतलब स्पष्ट है।" वह गम्भीर होकर बोली "यह तुम जानते ही हो कि आज पैसा ही सब कुछ है विशेषतया हमारी जाति के लिए। एक आदमी दिवाला निकालता है। अगर उसने धन को दबा रखा है तो फर्म का नाम बदल कर अपनी उतनी ही प्रतिष्ठा वापस प्राप्त कर सकता है जितनी उसने खोई है।

क्योंकि आज सबके मूल में पैसा ही सर्वोपरि है। तुम उन्हें समझा देना।"

उसकी बात सुनकर फतह हैरान हो गया। उसने सोचा क्या मैं ही उसके अन्दर नहीं बोल रहा हूं? वह प्रकट में बोला "मैं उन्हें कह दूंगा।"

"इसपर उन्होंने मुझे पांव की जूती से अधिक महत्त्व नहीं दिया है। उन्होंने मेरी उपेक्षा और तिरस्कार भी बेहद किया है। मैं उनका किसी भी मूल्य पर विश्वास नहीं कर सकती। कल वे मेरा सब कुछ लेकर मुझसे किनारा कर लें तो?"

"अब स्थिति बदल गई है।"

"स्थिति फिर बदलने में कितनी देर लगती है।

"मतलब?"

'मतलब यह है कि आज वे मेरे पास जो भी है उसे प्राप्त करना चाहते हैं। क्या यह संभव है कि भविष्य में वे मुझे उतना ही वापस देंगे? मैं समझती हूं कि वे इससे आधा भी मुझे नहीं देंगे?

फतह मन ही मन यही उत्तर चाहता था। वह इतनी कोमल भाषा का प्रयोग जयतबाबू के लिए इसलिए कर रहा था कि लोग उसके अन्तस् की दुर्भावना को न समझें।

वह उदास-उदास-सा वापस लौटा। बैरिस्टर बी ए के सेनगुप्ता आए हुए थे। उनसे कई घंटे गहरी मंत्रणा होती रही।

उसमें यह निश्चय किया गया—पूर्व कॉटन मिल्स कुछ दिन के लिए फतह के नाम दे कर दी जाएं और शेष जायदाद बीबी व मांजी के नाम। इसके बाद सेठ भगतराम अपना दिवाला पिटवा लेंगे। लेनेदार उनसे क्या लेंगे?

फतह की बांछें खिल गईं। उस रात वह सो नहीं सका। उसने तुरन्त अपने आपको लखपति घोषित कर दिया। "मैं लखपति बन जाऊंगा।" उसने अपने कमरे में कहा। वह उन्मादित-सा हो गया और अकेला कुछ देर तक कमरे में नाचता रहा पर उसने सुबह निकलते ही अपने हृदय की असीम प्रफुल्लता को गम्भीरता में आवृत कर लिया। सचमुच वह बहुत चतुर हो गया था।

भगत बाबू कलकत्ता छोड़कर बाहर भाग गए। धीरे-धीरे फर्म ने यह दफ्तर छोड़ा। बात फैलती गई और थोड़े ही दिनों में लेनदार उनके दरवाजे खटखटाने लगे। लेकिन होता क्या? भगत बाबू की भी कोई कीमती चीज उनकी अपनी नहीं थी। बाद में उन्होंने सार्वजनिक रूप से अपने-आपको दिवालिया घोषित कर दिया।

इस दुर्घटना से व्यापारियों को बड़ी ठेस लगी। चंद ब्राह्मण विधवाओं के रुपये भी भगत बाबू के पास जमा थे वे उनके पास आई थीं। आंसू भरकर एक बोली थी "हमारे आगे-पीछे कोई नहीं है हम निस्सहाय हैं। कम से कम आप हमारे रुपये अवश्य दे दीजिए।"

भगत बाबू ने अस्वीकार कर दिया था।

"ऐसी बात आप क्यों कहते हैं? आपने भूखे रहकर तो दिवाला नहीं निकाला है। सभी कहते हैं कि ऐसा आपने जान-बूझकर किया है। आपके पास बहुत धन है।"

भगत बाबू चीख पड़े थे "मैं कुछ नहीं जानता। मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है। मैं आपके लिए कुछ भी नहीं कर सकता।"

तब एक विधवा आंखों में आंसू भरकर चीख उठी थी "सेठजी क्या आपको मरना नहीं है। क्या आपको ईश्वर से डर नहीं लगता?"

भगत बाबू निरुत्तर रहे थे।

"आप समझते हैं, हम गरीब विधवाओं का धन दाबकर सुख से रह पाएंगे? हमारी आहें आपको कभी भी चैन नहीं लेने देंगी। आपके शरीर से हमारा रुपया कोढ़ बनकर फूटेगा।

एक दूसरी विधवा चिल्लाई थी "आपको कभी शांति नहीं मिलेगी।"

भगत बाबू झल्ला पड़े थे "नहीं मिलती है तो न मिले मुझे आप तंग न करें। मैं कहता हूं—आप सब इसी समय चली जाएं।"

"हम नहीं जाएंगी । हम यहां भूखी मर जाएंगी ।

"मरती रहो ।" कहकर भगत बाबू बाहर चले गए थे ।

वे तीनों विधवाएं जिनकी आंखें आंसुओं से भरी हुई थीं जिनकी आत्माएं कांप रही थीं, वे गीता के पास गईं और उन्होंने विनीत स्वर में प्रार्थना की । गीता ने दुःख से इतना ही कहा 'मैं आपके लिए कुछ भी नहीं कर सकती हूं । आप मेरी सास के पास जाइए । उसके दस-बीस हजार रुपये हैं । वह आपका आपका रुपया अवश्य दे देगी । क्योंकि वह एक धार्मिक वृत्ति की बूढ़ी स्त्री है । भगवान के कोप-प्रकोप से डरती है । मंदिरों में दान करती है । धर्मशालाएं बनवाती है ।"

विधवाएं बोलीं "हमारा इस संसार में उन रुपयों के सिवाय कोई नहीं है । आप जरा चलकर उन्हें कह दीजिए ।'

मैं ?" वह चौंक पड़ी और एक वेदना-भरी मुस्कान अधर पर बिखेरती हुई बोली "आप यह चाहती हैं कि आपको अपनी रकम नहीं मिले ?

विधवाओं का चेहरा पीला पड़ गया । उनमें जड़ता आ गई ।

"मैं समझती हूं कि आपका झिलमिलाता केवल रुपयों के लिए है इसलिए आप उसके पास जाइए । उसकी प्रशंसा कीजिए और फिर उससे अपनी रकम मांगिए । आप वहां मेरा नाम मत लीजिए अन्यथा उसे यह शक पड़ जाएगा कि मैंने ही आपको सिखा-पढ़ाकर भेजा है ।

वे विधवाएं उसके पास गईं । उन्होंने अनुनय-विनय किया । सास बोली, "आपका दुःख मेरा दुःख है । मैं विधवाओं का धन दबाकर नरक में जाना नहीं चाहती । मैं आपको विश्वास दिलाती हूं कि मेरे पास जैसे ही रुपये आएंगे, वैसे ही मैं आपको दे दूंगी ।"

विधवाओं को इस दिलासा से शांति हुई । वे आश्वस्त होकर बोलीं, "आपने हमारे भीतर से जाते हुए प्राणों को रोक लिया । ईश्वर आपका यह संकट टाले ।"

उनके जाते ही कौशल्या गीता के पास आई ।

गीता सुखासन पर पड़ी थी । सास को आते हुए देखकर भी उसने

अभिनय किया जैसे उसको उसके आने का कोई ज्ञान ही न हो। सास उसके पास आकर खड़ी हो गई।

"बहू।"

"क्या है ?"

"मुझे तुम्हारा यह व्यवहार अच्छा नहीं लगता।"

"कैसा व्यवहार ?"

बुढ़िया आश्चर्य से उसकी ओर देखकर बोली 'तुम हर मांगनेवाले को मेरे पास भेज देती हो जबकि मैंने एक पैसा भी बचाकर नहीं रखा है। अगर मेरे पास भाड़ा भी रुपया होता तो मैं अपने बेटे की इज्जत थोड़े ही जाने देती ?

बहू तनिक कठोर स्वर में बोली "आप समझती हैं कि मैंने धन दबा रखा है ? दस-बीस हजार का जेवर मेरे पास क्या रह गया मानो आपकी छाती पर सांप लोटने लग हैं।"

"मेरी छाती पर सांप क्यों लोटेंगे ?"

"फिर आप अपने गिरेबान में देखकर जरा कहिए कि आपके पास कितना रुपया है ? मुझे अच्छी तरह से मालूम है कि आपके पास नहीं-नहीं तो भी तीन लाख रुपये हैं। छोटी-सी धर्मशाला—वैसे सही मायने में वह धर्मशाला भी नहीं है, चार कोठरियों का छोटा-सा मकान है—उसे बनाने में लाख-डेढ़ लाख की रकम नहीं लग सकती जबकि वह पूरी भी न बनी हो।"

सास नाराज हो उठी। वह आंखें तरेरकर बोली, "तुम्हें झूठ बोलते शर्म नहीं आती ? मैं अपने परमात्मा की सौगन्ध खाकर कहती हूं कि मेरे पास दो-चार हजार से ज्यादा हो तो ?"

"परमात्मा की सौगन्ध मैं भी खाऊंगी। मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है। बेचारा परमात्मा इस देश की झूठी सौगन्धों से न मालूम कितनी बार दुखी होता होगा।"

'बहू झूठी कसम खानेवाले को ईश्वर कड़ा दंड देता है!"

"मुरली मनोहर सब जानता है कि झूठी कसम कौन खा रहा है।" वह एकदम लाल हो उठी।

तभी आ गया फतह।

सास-बहू को झगड़ते देख वह बीच में गंभीर स्वर में बोला "आप लोग इतनी गरम क्यों हो जाती हैं? सब कुछ बदल गया इसका मतलब यह नहीं है कि आप लोग घर में शांति न रहने दें। मैं आप दोनों को कहता हूं कि आपकी स्थिति शीघ्र ही संभल जाएगी।

कौशल्या आंखों में आंसू भरकर बोली 'यह मुझपर मातम मनाती है! क्या एक मां अपने बेटे को इस तरह अपमानित और लांछित होते देख सकती है?"

गीता उसकी नकल करती हुई बोली "और एक पत्नी क्या अपने पति को भयभीत चूहों की तरह बिलों में घुसते हुए पसन्द कर सकती है? आप क्या जानें कि मेरे दिल पर कितने हथौड़े चल रहे हैं।"

फतह ने दोनों को समझा दिया 'सारी जायदाद जैसी की तैसी है और आप निश्चिन्त होकर रहिए। मैं शीघ्र ही स्थिति को संभाल लूंगा। हां बड़े बाबू के वैयक्तिक जीवन पर इससे बड़ा प्रभाव पड़ा है। वे मर्मान्तक पीड़ा से आहत-से रहते हैं। अकेले बैठे रहते हैं। मुझे उनपर तरस आता है। पर मैं विवश हूं।

अन्त में वह दोनों स्त्रियों को समझा-बुझाकर वहां से आ गया।

अब सूर्य काटन मिल्स का वह मालिक बन गया था।

एक सबसे छुपते हुए जगत बाबू उसके पास आए थे। उन्होंने फतह से आकर कहा था "फतह, मुझे पांच हजार रुपये चाहिएं।

पांच हजार? सेठ जगत बाबू अब आपको रुपये सोच-समझकर खर्च करने चाहिएं। आपने लक्ष्मी को सदा उपेक्षा की दृष्टि से देखा है इसका परिणाम आप देख ही चुके हैं कि आपके पास कुछ भी नहीं रहा है। आप पैसे पैसे के मुहताज हो गए हैं।" उसने जगत बाबू के मन की प्रतिक्रिया को जानने

के लिए ऐसे वाक्यों का प्रयोग किया। उसने अपने को बहुत कोमल बनाने की चेष्टा की पर उसके अन्तर् की धृष्टता छिपी नहीं रह सकी।

"मेरे पास कुछ नहीं है ?" उन्होंने अपनी गर्दन को धीरे-धीरे उठाकर कहा "यह तुम कैसे कह सकते हो कि मेरे पास कुछ नहीं है ? मैंने किसीको कुछ भी नहीं दिया है। मेरी बुरी नीयत के कारण लोग मुझसे घृणा करने लगे हैं। मैं किसीको अपना दुःख नहीं सुना सकता हूं। ओह ! मुझे यह मालूम होता कि मुझे इस नाममात्र दिवाला निकालने से इतनी तीव्र घृणा और उपेक्षा सहनी पड़ेगी तो मैं सबका देना दे देता !"

"आप फिर भावुकता की बातें करने लगे। क्या आप समझते हैं कि ईमानदारी से सम्मान मिलता है ? यह सब दकियानूसी बातें हैं। कुछ भारी-भरकम वाक्य वर्षों से प्रचलित हैं। वे वाक्य वजनदार भी खूब हैं। बोलनेवालों में गर्व को जगाते हैं और सुननेवालों में आदर्श की भावना की सर्जना करते हैं लेकिन उनका व्यावहारिक रूप अब नितान्त बदल गया है। अब उस आदमी की ही प्रतिष्ठा होती है जिसके पास पैसा है। सेठ रामकृष्ण को नहीं जानते हैं ? अपने पहले जमाने में उसने कभी भी सौदे करके रुपये नहीं दिए। कई बार दिवाला निकाला पर आज उसका समाज व देश में वही सम्मान है जैसा किसी पुराने सेठ का।" सेठ बनवारीलाल का उदाहरण भी आपके समक्ष है। क्या उसने अपनी तेरह वर्षीय बेटी का विवाह बूढ़े लखपति कुन्दनमल से नहीं किया था ? समाज में उस समय विरोध भी किया था। उसे सौदाई भी कहा था। बेटी की बिक्री करनेवाला चांडाल कहा था। पर आज क्या उसी समाज के आदमी उसके यहां नाक रगड़ने नहीं आते हैं ?" उसने अत्यन्त तरल के साथ कहा "मुझे आपपर दया आती है। मैं आपको कहूंगा कि आप सर ऊंचा करके घूमिए। ऐसी स्वाभाविक ढिठाई-भरी हंसी हंसिए जिसको देखकर लोग सहम उठें। इसी शान-शौकत से रहिए कि लोगों को यह वहम हो जाए कि आपके पास इतनी ही दौलत है।"

"पर मैं ऐसा नहीं कर सकता।"

"इसका मतलब यह है कि आप लोगों में इस बात का विश्वास दिलवा

चाहते हैं कि आपके पास कुछ भी नहीं है।"

"हाँ !" उन्होंने दृढ़ता से कहा।

मुझे आश्चर्य है।

क्यों नहीं होगा ? क्या तुम यह चाहते हो कि मेरे मित्र मुझे कमीना समझें ? उनकी शेष सहानुभूति को मैं खोना नहीं चाहता।

वह दीवार पर नजर दौड़ाता हुआ बोला "आप बच्चों की तरह बातें करते हैं। क्या वे नहीं जानते हैं कि आपने सारा रुपया दबाकर दिवाला निकाल आया है ? आपकी नीयत साफ नहीं है ?"

"नहीं !" उन्होंने दृढ़ता से कहा "मैंने उन्हें यह आश्वासन दिया है कि कुछ बात पुरानी पड़ जाने के बाद मैं आपको अपने रुपये धीरे-धीरे लौटा दूंगा। क्योंकि अभी परिस्थिति ठीक नहीं है।"

"लेकिन आपको रुपये देगा कौन ?"

"मैं यह बंगला बेच दूंगा। उन्होंने आवेश में कहा "क्या तुम यह चाहते हो कि मैं समाज से सदा अलग होकर रहूं ? मेरा यहां कोई दोस्त न रहे और मेरा व्यक्तित्व सदा-सदा के लिए मर जाए ? नहीं-नहीं। मैं यह सब नहीं सह सकता। तुम मेरी पीड़ा की रत्ती भर भी कल्पना नहीं कर सकते। मैं भीतर ही भीतर घुलता रहता हूं। मैं चाहता हूं कि मुंह छुपाकर कहीं दूर चला जाऊं। आह ! एक हत्यारे की तरह मैं अपने-आपको समझता हूं। अब मुझे काली अन्धेरी एकान्त से पूर्ण गुफा में ही शांति मिल सकती है, ऐसी मेरी आत्मा मुझे कहती है। मैं चाहता हूं जिल्लत की इस जिन्दगी से अच्छा है कि मर जाऊं। ईश्वर मुझे उठा ले। कहते हुए भगत बाबू बालकों की तरह बिलख उठे।

"आप अधीर न होइए। ऐसे मौकों में आपको किसी तरह की कच्ची बात मुंह से नहीं निकालनी चाहिए। आप समझते हैं कि इन बातों का आपके परिवार पर क्या प्रभाव हो सकता है ? वे आपको फूटी कौड़ी भी नहीं देंगे।

"क्यों नहीं देंगे ?" उन्होंने तनिक रोष में कहा "जो चीज मेरी है, वह मेरी ही है।

वह खलनायक की तरह अपने चेहरे पर कटौरता लाकर बोला "आप बच्चे

है। विषम परिस्थिति ने आपको एक भावना-प्रवण युवक बना दिया है जिसे परिस्थिति के अनुरूप कदम उठाने की आदत ही नहीं होती है। यौवन में प्रायः व्यक्ति ऐसे ही हर बात पर जल्दी निर्णय ले लेता है और बहक-बहक जाता है। आपको इस स्थिति में इस तरह नहीं बहकना चाहिए। मैं समझता हूं कि आपको कुछ दिन तक एक ऐसे कुशल अभिनेता का पार्ट अदा करना चाहिए जो दूसरों में विश्वास बैठा सके कि आप बदल गए हैं। आप मेरा संकेत समझ गए होंगे। लीजिए, मैं स्पष्ट कर देता हूं। आपने कभी भी अपनी पत्नी से प्यार नहीं किया। आप सदा दूसरी औरतों में भटकते रहे। आपकी बुराइयों से सभी परिचित हैं इसलिए आपको आपकी पत्नी ने भी एक पैसा नहीं दिया। मैं आपको कहता हूं—लोगों को रुपये देने की बात को लेकर वह आपको एकदम अंगूठा दिखा देगी। वह बंगला क्या आपको अपना छोटा-सा जेवर भी बेचने को नहीं देगी। जब आदमी के बुरे दिन आते हैं तब उसका साया भी साथ छोड़ देता है। तब मैं आपको एक परामर्श दूंगा कि आप अभी यह मान कर चलिए कि मेरे पास कुछ नहीं है। चरवाहों को इसलिए सावधान मत कीजिए कि वे आपको रुपया न दें।"

कहकर फ्याह ने अपनी अलमारी में से दो हजार रुपये दे दिए।

"दो हजार ?

"मैं समझता हूं यह भी बहुत है।"

"अच्छा। उन्होंने असली दृष्टि से देखा। उनकी इच्छा हुई कि वे इन रुपयों को इसके मुंह पर मार दें पर परिस्थिति ने उन्हें ऐसा नहीं करने दिया। वे भीख में आए रोटी के टुकड़ों की तरह उन रुपयों को लेकर चलते बने।

वे वहां से सीधे अपने चंद परिचित दुकानदारों के पास गए। उन्हें कुछ-कुछ रुपये देकर यह आश्वासन दिया कि भविष्य में फ्याह आपके सारे के सारे रुपये दे देगा।

रात को वे देर से घर पहुंचे। उन्होंने देखा गीता सो गई है। मां अपनी एक मायसी (सखी) को बुरे दिनों के आने की बातें बता रही है। वह सारे का सारा दोष तकदीर को लगा रही है। नौकर-चाकरों में अब एक बेतड़ी

और रसोइया रह गए थे। मदन बाबू ने बड़ी मुश्किल से खाना खाया। वे जाकर अपने कमरे में सो गए। ऐसी स्थिति के बाद भी वे गीता से 'पत्नी पति के बीच मधुर संबंध बन जाए' का समझौता नहीं करना चाहते थे। उन्हें अब भी उस महिषी से घृणा थी। उसका काला रंग और उसका बेडंगा शरीर उनमें घृणा भर देता था। उन्हें लगता था कि कभी वह उसे अपनी बाहों में भरकर मार देगी। तब वे अपनी सुन्दर-सलोनी प्रेमिकाओं की मधुर कल्पना में खो गए।

अचानक उन्हें कदमों की आहट सुनाई पड़ी।

"कौन है ?"

"मैं ! क्या आपने पिताजी को कोई चिट्ठी लिखी थी ?" गीता ने अनिच्छा से पूछा "उसका उत्तर आया है।"

मदन बाबू ने गीता की ओर नहीं देखा। उन्होंने उस चिट्ठी को ले लिया। पढ़ी। फाड़कर फेंक दी। वे अपने आपसे कह उठे, "बुरे दिन में कोई भी अपना नहीं होता। आपके पिताजी लिखते हैं कि मेरे पास फूटी कौड़ी भी नहीं है। फिर क्या करोगे लाखों रुपयों का ! दरअसल अब आदमियों को आदमी से नहीं रुपयों से प्यार हो गया है।"

गीता ने कहा "उन्होंने आपको बहुत दिया। क्या आप चाहते हैं कि वे उम्र-भर आपको देते रहें ? कुबेर का खजाना किसीके पास नहीं है। सभी भविष्य की चिंता रखते हुए खर्च करते हैं। आपकी तरह पैसों को पानी नहीं समझते !"

"सुनो गीता मुझे इस समय उपदेश सुनना जरा भी पसंद नहीं है। मैं इस तरह की बातें सुनकर ऊब गया हूं। सभी मुझे ऐसी स्थिति में एक-सा ही मारी-भरकम नीरस उपदेश देते हैं। मैं तुम्हें हाथ जोड़ता हूं—तुम जरा भी उपदेश न दो।" "वह भी मुझे समझाता है। कैसा बुरा समय है मेरा ? कल की मेरी कुली चाटता था आज वह मुझे एक नादान-सा बालक समझता है। मेरी ऐसी इच्छा हुई कि मैं उस नालायक को मार दूं पर मैं बहुत विवश हूं अतः जहर का घूंट पीकर रह गया। मित्र उसके नाम है। मुझे डर है

कि वह कहीं मिल को हड़प न जाए।

"वह ऐसा नहीं कर सकता।"

"आज उसका टोन बदला हुआ था। आज उसके स्वर में उतना ही दंभ मुझे लगा जितना एक लखपति के स्वर में होता है।"

"पर मनुष्य इतना कमीना नहीं हो सकता!" गीता को झटका-सा लगा।

"वह इतना ही कमीना है। तुम उसे नहीं जानतीं कि वह सस्ते पैसों के लिए क्या-क्या कर सकता है। मैं समझता हूं वह रुपयों के लिए नंगा होकर चौराहे पर नाच सकता है। अपनी बीवी को बेच सकता है। अपने-आपको दांव पर लगा सकता है। मुझे आज उससे एकाएक घृणा हो गई।" वह चीखकर बोला "अप्रत्याशित घृणा का होना भी कुछ आधार रखता है। मैं उसकी आंखों का अहंकार सह नहीं पाया। मैंने उसे मन ही मन धिक्कारा और पीटा भी है।"

"क्या वह ऐसा सोचता है कि वह मिल हड़प जाएगा?"

'मुझे डर है कि वह ऐसा ही सोचता है।" उन्होंने अपने शब्दों पर जोर दिया।

"नहीं मैं उसे ऐसा नहीं करने दूंगी।" उसने विश्वास के साथ कहा "मैं कल ही उससे मिलूंगी। कहकर गीता बाहर जाने लगी। भगत बाबू ने अत्यन्त स्नेह से पुकारा "गीता सुनो तो!" कदाचित् जीवन में इस तरह उन्होंने उसे कभी-कभी ही पुकारा था। गीता के मन का तार-तार झनझना उठा। सहसा उसकी पलकों के कोये भीग गए। लेकिन उसने अपनी हृदय की वास्तविकता को अत्यन्त कठिनता से वश कर लिया "क्या है?"

"फकत यह कहना था कि तुम भी मुझे कुछ नहीं दोगी।"

"इन बातों से आप अभी परेशान मत होइए।" कहकर वह बाहर चली गई। उसके जाते ही उन्हें लगा कि उनका संसार में कोई नहीं है। वे असहाय और अकेले हैं।

फतह के मक्का हुआ ।

अब उसके जीवन में काफी परिवर्तन आ गए थे । उसने भगत बाबू की कोठी को छोड़ दिया था । उसने पृथक एक बाड़ी ले ली थी । संयोग समझिए कि फतह के भाग्य से सूर्य काटन मिल्स का माल भी चल निकला । अच्छी आमदनी होने लगी । भगत बाबू के दिवाले की बात भी पुरानी पड़ गई पर वे इस आघात को सह नहीं सके । उनका चेहरा वर्षों से रोगी प्राणी की तरह पीला और दुबला हो गया । गालों की उभरी हुई हड्डियों ने उनके चेहरे की आब को मार दिया । अब वे पूर्णतया शांत और खामोश रहते थे ।

जब उन्हें यह मालूम हुआ कि सूर्य काटन मिल्स का नाम बदला जा रहा है । अब उसका नाम लक्ष्मी मिल्स होगा । वे चिंतित हो उठे । वे सीधे फतह के पास गए । फतह घर में था पर उसकी नौकरानी ने बताया कि वे अभी घर में नहीं हैं । जब भगत बाबू ने सप्रमाण यह साबित किया कि फतह घर में ही है तब नौकरानी ने झल्लाकर कहा "वे आपसे अभी नहीं मिल सकते । वे अपना एक अत्यन्त जरूरी काम कर रहे हैं ।"

घृणा की लहर उनके तमाम शरीर में दौड़ी और वह (क्योंकि भगत बाबू अब बाबू रहे ही नहीं अतः 'तुम' का प्रयोग ही स्वाभाविक लगता है) सीधा अपने घर आया ।

गीता अपनी एक आसामी को डांट रही थी । आर्थिक तंगी के कारण गीता की बाड़ी में लगभग दस अन्य किरायेदार आकर रहने लग गए थे । बंगला भी किराये पर उठा दिया गया था । इसके अतिरिक्त गीता अब ब्याज भी कमाने लगी थी । लेन-देन के मामले में उसका अपना एक उसूल है—बिना कुछ गिरवी रखे वह एक पाई भी नहीं देती थी ।

भगत ने बीच में थोड़ा-सा अवरोध उत्पन्न किया "सुनो गीता जल्दी से भीतर आओ ।"

"आती हूं।"

"मेरा ब्याज क्यों नहीं पहुंचाया ?" गीता ने भड़ककर, नेत्र मिचमिचाकर कहा "मैं लेन-देन में अत्यन्त ईमानदारी चाहती हूं। मुझे यही सह्य नहीं होता कि कोई मेरा एक पैसा भी देर से दे। मैं तुम्हें आखिरी बार कह रही हूं—मेरे ब्याज के रुपये शीघ्र पहुंचा देना वर्ना मैं तुम्हें कचहरी में ले जाऊंगी। यह चमचमाती इज्जत और दमदमाता दंभ धुएं-सा काला होकर उड़ जाएगा। हूं।"

"आप यकीन रखें। मैं आपको कल तक पहुंचा दूंगा।"

आसामी के चले जाने के बाद गीता भगत के पास आई। भगत वर्षों से थके प्राणी की तरह पलंग पर बैठा था।

"क्या बात है आज आप उदास-उदास-से लगते हैं ?" गीता ने कोमलता से कहा "क्या तबियत खराब है ?

"नहीं तो।" उसने भी कोमल स्वर में कहा, "मेरी तबियत खराब नहीं है गीता। दरअसल बात यह है कि फतह मूव काटन मिल्स का नाम बदलकर लक्ष्मी मिल्स कर रहा है।"

वह विस्मय से आंखें फाड़ती हुई बोली "क्या कहते हैं आप !"

"सच कहता हूं। कागजात भी तैयार हो गए हैं।"

"मुझे विश्वास नहीं होता। मैं इसी समय उसके पास जाती हूं।"

"सुनो बात गंभीर है। लाखों रुपयों का सवाल है। मैं पहले ही समझता था कि यह बदमाश मुझे मिल वापस नहीं देनेवाला है। कई दिन से उसकी बात का स्वर और व्यवहार सब-कुछ बदल गया है। मनुष्य इतना नीच भी हो सकता है ! अरे तुम हड़बड़ी में काम खराब कर दोगी। अब हमें असहाय-अपंग की तरह उसके ही पक्ष में रहना पड़ेगा और जितना मिल जाए उसे ग्रहण करना पड़ेगा।"

"आप निश्चिन्त रहिए। मैं कुछ भी गड़बड़ नहीं करूंगी।" वह सीधी वहां से फतह के पास गई। फतह को गीता के आगमन की सूचना मिली। वह खुद उसकी अगवानी करने के लिए आया। उसके अधरों पर गर्व-भरी मुस्कान थी।

"आओ गीता आओ। बड़े दिनों में आई हो।

गीता क्षुब्ध-सी थी। वह तनिक विचलित स्वर में बोली "आज भी नहीं आती पर एक ऐसी बात सुनी कि मुझे आना ही पड़ा।

वे दोनों अब तक बैठक में आ गए थे।

"तुमने ऐसी बात क्या सुनी?" वह बिलकुल अनजान बनते हुए बोला। उसके चेहरे पर हल्की-सी हैरानी थी।

"फतह!' उसने नाक में बल डालते हुए कहा "यह कहां तक ठीक है कि तुम हमारी मिल का नाम बदल रहे हो?"

'नाम बदलने में ही लाभ रहेगा। मैंने एक पंडित से सलाह ली थी। उन्होंने कहा कि जब तक मिल का नाम नहीं बदलोगे तब तक आय में वृद्धि नहीं होगी। सूर्य नाम बड़ा ही दकियानूसी है।"

"तुमने आय में वृद्धि होने के पश्चात् हमें एक पैसा भी दिया है? फतह! तुम यह न भूलो कि तुम इस मिल के केवल नाम-मात्र के स्वामी हो। उसके असली हकदार आज भी हम हैं।"

वह हंस पड़ा।

"तुम दुष्टता की हंसी हंसकर मुझपर आतंक नहीं जमा सकते। मैं तुम्हें हाथ जोड़कर प्रार्थना करती हूं कि हमें अपनी मिल वापस कर दो। तुम यह अच्छी तरह जानते हो, ईश्वर इस तरह के पापों को कभी भी क्षमा नहीं करता।'

"मैं हर काम ईश्वर की आज्ञा से ही करता हूं। मैं बड़ा आस्तिक हूं। सुबह जप किए बिना चाय तक भी नहीं पीता। समझी।"

"यह सब ढोंग है।"

"तुम कह सकती हो।' वह बात को बदलते हुए बोला, "अरे हां मैंने कल सुना था कि आजकल तुम दोनों मियां-बीबी में सुन्दर समझौता हो गया है। क्या ही अच्छा होता कि यह सब पहले हो जाता।"

धूप की लकीर खिड़की से उतरती हुई गीता को छूने लग गई थी। फतह ने नौकर को पुकारा और कहा "खिड़की के आगे पर्दा कर दो। और हां तुम

पानी लाकर पीओगी ही ? गर्मी का मौसम है । एक गिलास ठंडा पानी ।"

बीच में ही गीता ने रोक दिया "मैं पानी नहीं पीऊंगी ।" उसने नौकर के जाने का इन्तजार किया । वह चला गया तब वह बोली "मैं यहां पानी पीने नहीं आई हूं । मैं तुम्हें यह पूछना चाहती हूं कि तुम हमें हमारी मिल वापस कर रहे हो या नहीं ? अब तुम्हारे पास काफी रुपया हो गया है । तीन-तीन दुकानें भी हैं । सट्टे में भी तुमने खूब कमाया है ।"

"कमाना-खोना भाग्य की बात है ।" फतह बोला "रही मिल की बात, उसके लिए मैं इतना ही निवेदन कर सकता हूं कि जितने रुपये लेकर आपने मेरे हाथ यह मिल बेची है, उतने रुपये आप वापस देकर उसे ले भी सकती हैं ! मैं इस मिल से ऊब गया हूं । कल-पुर्जे पुराने होने की वजह से मैं अपनी मनपसंद का माल बना भी नहीं सकता ।

गीता रोने-रोने को हो गई । उसने मन ही मन कहा 'यह आदमी है या लुटेरा ? इसका कोई भी धर्म-ईमान है !"

"मैं चाहता हूं कि तुम मुझे रुपये दे दो । मैं इस मिल को रखना ही नहीं चाहता । मुझे पुरानी मिल में जरा भी दिलचस्पी नहीं है । मैं एक शानदार और बढ़िया मिल खरीदना चाहता हूं ।"

'बड़े बाबू !" नौकर ने आकर कहा ।

'क्या है ?

"सेठ मनहरलाल आए हैं ।"

"मैं अभी आता हूं ।" उसने गीता पर दृष्टि जमाते हुए दृढ़ता से कहा "फिर तुम कब रुपये ला रही हो ? मैं समझता हूं कि पति के दिवालियेपन के पहले जो तुमने रुपये बचाए हैं, उन रुपयों से तुम सहजता से यह पुरानी खटारा मिल वापस खरीद सकती हो । मैं तुम्हें दस-बीस हजार रुपये छोड़ सकता हूं ।"

"तुम सचमुच बेईमान हो ।"वह रुआंसा स्वर में बोली 'मनुष्य का इतना नम्र और चालाक रूप मैंने नहीं देखा । फतह किसी दूसरे का माल हड़प लेना इन्सानियत नहीं ।"

"मैं किसीका माल नहीं हड़पता। मैं इसे पिछले जन्म का पावना मानता हूं। मुझे अखंड विश्वास है कि आदमी बिना कुछ दिए कुछ भी नहीं पा सकता। यह मिल तुम्हारे पति ने पिछले जन्म में मुझसे अवश्य हड़पी होगी जो मुझे इस जन्म में वापस मिल गई है। इसमें नाराज होने की क्या बात है? मनुष्य को अपने लेने-पावने जन्म-जन्मान्तर में चुकाने ही पड़ते हैं।"

"ओह!" वह वेदना से तड़प उठी।

"पश्चात्ताप कर रही हो?" एक विचित्र प्रश्न-सा किया।

"नहीं खुशियां मनाऊंगी!" वह चीखकर बोली।

"अवश्य मनानी चाहिए। आज तुम्हारे पति का उस लोक का कर्ज चुकता हो गया है।" उसने अपने मन की दुष्टता बाहर नहीं आने दी "मैं सच कहता हूं गीता कि मुझे उस दिन असीम शांति मिलती है जिस दिन मैं किसीका कर्ज चुकाता हूं।"

"मुझे तुमपर दया आ रही है। आदमी इतना दुष्ट और नीच नहीं हो सकता जितने तुम हो। तुम्हें जरा भी अपने-आपपर ग्लानि नहीं होती कि तुम उस मालिक का अहित कर रहे हो जिसने तुम्हें 'जिन्दगी क्या है' यह बताया है। ध्यान से सुनो कन्हैया कि विश्वासघाती और नमकहराम का अन्त अत्यन्त भयानक होता है।"

उसने खिड़की के बाहर खखार कर थूका। फिर उसने एक अंगड़ाई ली जैसे गीता की बातों का उसपर कोई असर नहीं हुआ है। वह अत्यन्त हल्के स्वर में चुटकी बजाता हुआ बोला "तुम्हें जो कहना था वह चुकीं। अब तुम जा सकती हो?"

"ठहरो ईश्वर से डरो। उसका अपना एक दरबार है।"

"ओह!" वह किंचित् आवेश-मिश्रित स्वर में बोला "मुझसे अधिक ईश्वर से तुम्हें डरना चाहिए। क्या तुम समझती हो कि ईश्वर के दरबार में तुम्हें क्षमा किया जाएगा? अपनी नीचता और कमीनापन नहीं देखती हो जो तुम मुझे उपदेश दे रही हो। कभी अपने-आपको देखा है? मैं कहता हूं ईश्वर तुम्हें मुझसे अधिक कठोर व भयानक दंड देगा। अब तुम जा सकती हो।"

गीता की आँखों में आँसू छलछला आए। वह भर्राए स्वर में बोली "जब आदमी की मति मारी जाती है तब फतह, ऐसा ही होता है। मेरी मति ही मारी गई थी। तुम मेरी दुर्बलताओं का स्पर्श करके मेरी भावनाओं को विद्रोह की ओर मोड़कर नहीं बिगाड़ते तो मैं पथभ्रष्ट नहीं होती। लेकिन कसूर मेरा ही है। पर एक शाप तुम्हें भी देती हूँ कि तुम्हें भी सुख नहीं मिलेगा।"

वह यह कहकर बाहर निकल गई। रास्ते में उसे पद्म मिल गई। पद्म ने उसे आँसू भरी आँखों से जाते देखकर रोका। गीता दारुण दुःख से चीख उठी "मुझे जाने दो। मुझे जाने दो। मुझे मत रोको बहिन मत रोको।"

"आखिर बात क्या है?"

"तुम्हें यह मालूम है न यह मिल हमारी है जिसकी स्थिति में हमने यह मिल तुम्हारे पति के नाम कर दी थी और अब वह उस मिल को सदा के लिए हड़प जाना चाहता है। यह कितनी बड़ी बेईमानी है।

पद्म सीधी-सरल नारी थी। कोमल स्वर में बोली "उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। किसीकी चीज को अनुचित तरह से दबाना महापाप है।"

"वह उसे परम धर्म समझ रहा है।"

"उनकी बात जाने दीजिए। वे रुपयों के लिए पागल हैं। उन्हें किसी भी वस्तु के बदले रुपया चाहिए। कल रात कहने लगे कि मैं एक बार देश का सबसे बड़ा धनी बनना चाहता हूँ। और इस शब्द के कहने के साथ ही उनके मुख पर विचित्र छायाएं तैरने लगी थीं तथा आँखों में जलते इरादे चमक उठे थे। मैं उनकी उस मुद्रा से डर जाती हूँ।

"संतोष की माँ!" फतह ने गरजकर कहा।

"क्या है?"

"भीतर क्यों नहीं आती? पति की निंदा करना महापाप कहलाता है। एक पत्नी के लिए पति की इच्छा पर चलना ही महाधर्म है।"

गीता चोट खाई नागिन-सी फुफकारती चली गई।

कुछ देर बाद पद्म फतह के कमरे में गई। फतह कुछ कागजात देख रहा था। पद्म ने कहा "आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए।"

पद्म की ओर उसने जलती दृष्टि से देखा और कहा "मुझे ऐसा लगता है तुम कभी न कभी इस घर से निकलोगी। मैंने तुम्हें हजार बार कह दिया कि मेरे काम में दखल न दिया करो। मैं हर कदम सोच-समझकर ही उठाता । धर्म अधर्म और आचार-विचार मैं तुमसे अधिक जानता हूं।

"मैं जानती हूं कि आप बहुत चतुर हैं।" उसने तेज स्वर में कहा।

"जानकर ऐसे प्रश्न करना तुम्हें शोभा नहीं देता।"

"मैं क्षमा चाहती हूं।" वह एकदम पीली पड़ गई।

'भविष्य में ' वह राक्षस की तरह पद्म को देखने लगा। पद्म कांप ठी। उसके समक्ष अतीत की एक घटना साकार हो उठी। जब भगत बाबू ने उसे बार-बार बदतमीजियां की थीं तब उसने शिकायत की थी। वह मौन हा था कुछ देर। बाद में बोला था "वे देवता हैं उनके बारे में तुम्हें ऐसी राय हीं बनानी चाहिए।"

जब उसने दूसरी बार कहा था 'आज उन्होंने मुझ अकेली को देखकर चूम लिया।" तब फतह ने उसे बुरी तरह पीटा था। उसपर इलजाम लगाया था क वह ऐसे महान पुरुष को बदनाम करना चाहती है। भविष्य में वह उनकी शिकायत न करे।

पद्म ने इसका तात्पर्य यही लगाया था कि उसका पति भगत बाबू के लिए उसको बेच रहा है। क्योंकि भगत बाबू की सबसे बड़ी कमजोरी सुन्दर युवती । तब वह क्या करती? वह गुलाम की तरह पति की आज्ञा पर झुक गई। ाज उसे अपने पति से कोई लगाव नहीं आदर नहीं। वह उससे घृणा करती पर उसने अपनी घृणा को कभी भी प्रकट न किया। वह एक परवश नारी , जिसका जीवन इस समाज में पति-सेवा के सिवाय कुछ भी नहीं है। पति क लग होते ही लोग उसको पापिन दुराचारिणी व्यभिचारिणी और न जाने क्या या कहेंगे? भले ही ऐसा न हो और अगर वह सचमुच में कुलटा है फिर भी सके अपना पति है तो वह इन सम्बोधनों से बच जाती है। इस संसार में स्त्री ही दयनीय है।

उसे जीवन गुजारना है। बस यह वाक्य वह प्रायः मन ही मन दोहराया

गीता की आँखों में आँसू छलछला आए। वह भर्राए स्वर में बोली "जब ादमी की मति मारी जाती है तब फतह ऐसा ही होता है। मेरी मति ही मर ई थी। तुम मेरी दुर्बलताओं का स्पर्श करके मेरी भावनाओं को विद्रोह की ोर मोड़कर नहीं बिगाड़ते तो मैं पथभ्रष्ट नहीं होती। लेकिन कसूर मेरा ी है। पर एक शाप तुम्हें भी देती हूं कि तुम्हें भी सुख नहीं मिलेगा।

वह यह कहकर बाहर निकल गई। रास्ते में उसे पद्म मिल गई। पद्म ने से आंसू भरी आंखों से जाते देखकर रोका। गीता बरबस दुःख से चीख उठी 'मुझे जाने दो। मुझे जाने दो। मुझे मत रोको बहिन मत रोको।"

"आखिर बात क्या है ?"

"तुम्हें यह मालूम है न यह मिल हमारी है जिसकी स्थिति में हमने यह मिल तुम्हारे पति के नाम कर दी थी और अब वह उस मिल को सदा के लिए हप जाना चाहता है। यह कितनी बड़ी बेईमानी है।

पद्म सीधी-सरल नारी थी। कोमल स्वर में बोली "उन्हें ऐसा नहीं करना ाहिए। किसी की चीज को अनुचित तरह से दबाना महापाप है।"

"वह उसे परम धर्म समझ रहा है।

'उनकी बात जाने दीजिए। वे रुपयों के लिए पागल हैं। उन्हें किसी भी स्तु के बदले रुपया चाहिए। कल रात कहने लगे कि मैं एक बार देश का बसे बड़ा धनी बनना चाहता हूं। और इस शब्द के कहने के साथ ही नके मुख पर विचित्र छायाएं तैरने लगी थीं तथा आंखों में जलते इरादे चमक ठे थे। मैं उनकी उस मुद्रा से डर जाती हूं।"

"संतोष की मां!" फतह ने गरजकर कहा।

"क्या है ?"

"भीतर क्यों नहीं आती ? पति की निंदा करना महापाप कहलाता है। क पत्नी के लिए पति की इच्छा पर चलना ही महाधर्म है।"

गीता चोट खाई नागिन-सी फुफकारती चली गई।

कुछ देर बाद पद्म फतह के कमरे में गई। फतह कुछ कागजात देख रहा ा। पद्म ने कहा "आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए।"

पद्म की ओर उसने चमकती दृष्टि से देखा और कहा "मुझे ऐसा लगता है कि तुम कभी न कभी इस घर से निकलोगी। मैंने तुम्हें हजार बार कह दिया है कि मेरे काम में दखल न दिया करो। मैं हर कदम सोच-समझकर ही उठाता हूं। धर्म अधर्म और आचार-विचार मैं तुमसे अधिक जानता हूं।"

"मैं जानती हूं कि आप बहुत चतुर हैं।" उसने तेज स्वर में कहा।

"जानकर ऐसे प्रश्न करना तुम्हें शोभा नहीं देता।"

"मैं क्षमा चाहती हूं।" वह एकदम पीली पड़ गई।

"भविष्य में..." वह राक्षस की तरह पद्म को देखने लगा। पद्म कांप उठी। उसके समक्ष अतीत की एक घटना साकार हो उठी। जब भगत बाबू ने उससे बार-बार बदतमीजियां की थीं तब उसने शिकायत की थी। वह मौन रहा था कुछ देर। बाद में बोला था, 'वे देवता हैं, उनके बारे में तुम्हें ऐसी राय नहीं बनानी चाहिए।'"

जब उसने दूसरी बार कहा था 'आज उन्होंने मुझ अकेली को देखकर चूम लिया।' तब पशु ने उसे बुरी तरह पीटा था। उसपर इलजाम लगाया था कि वह ऐसे महान पुरुष को बदनाम करना चाहती है। भविष्य में वह उनकी शिकायत न करे।

पद्म ने इसका तात्पर्य यही लगाया था कि उसका पति भगत बाबू के लिए उसको बेच रहा है। क्योंकि भगत बाबू की सबसे बड़ी कमजोरी सुन्दर युवती है। तब वह क्या करती? वह गुलाम की तरह पति की आज्ञा पर जुट गई। आज उसे अपने पति से कोई लगाव नहीं। आदर नहीं। वह उससे घृणा करती है पर उसने अपनी घृणा को कभी भी प्रकट न किया। वह एक परवश नारी है, जिसका जीवन उस समाज में पति-सेवा के सिवाय कुछ भी नहीं है। पति के अलग होते ही लोग उसको पापिन दुराचारिणी व्यभिचारिणी और न जाने क्या-क्या कहेंगे? भले ही ऐसा न हो और अगर वह सचमुच में कुलटा है फिर भी उसका अपना पति है तो वह इन सम्बोधनों से बच जाती है। इस संसार में स्त्री बड़ी दयनीय है।

उसे जीवन गुजारना है। बस यह वाक्य वह प्रायः मन ही मन दोहराया

गीता की आंखों में आंसू छलछला आए। वह मर्राए स्वर में बोली, "जब आदमी की मति मारी जाती है तब फ़तह, ऐसा ही होता है। मेरी मति ही मारी गई थी। तुम मेरी दुर्बलताओं का स्पर्श करके मेरी भावनाओं को विद्रोह की ओर मोड़कर नहीं दिखाते तो मैं पथभ्रष्ट नहीं होती। लेकिन कसूर मेरा ही है। पर एक शाप तुम्हें भी देती हूं कि तुम्हें भी सुख नहीं मिलेगा।"

वह यह कहकर बाहर निकल गई। रास्ते में उसे पद्म मिल गई। पद्म ने उसे आंसू भरी आंखों से जाते देखकर रोका। गीता दारुण दुःख से चीख उठी, "मुझे जाने दो। मुझे जाने दो। मुझे मत रोको बहिन मत रोको।"

"आखिर बात क्या है ?"

"तुम्हें यह मालूम है न यह मिल हमारी है, जिसकी स्थिति में हमने या मिल तुम्हारे पति के नाम कर दी थी और अब वह उस मिल को सदा के लिए हड़प जाना चाहता है। यह कितनी बड़ी बेईमानी है।"

पद्म सीधी-सरल नारी थी। कोमल स्वर में बोली "उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। किसीकी चीज़ को अनुचित तरह से दबाना महापाप है।

"वह उसे परम धर्म समझ रहा है।"

'उनकी बात जाने दीजिए। वे रुपयों के लिए पागल हैं। उन्हें किसी भी वस्तु के बदले रुपया चाहिए। कल रात कहने लगे कि मैं एक बार देश का सबसे बड़ा धनी बनना चाहता हूं। और इस धन के कहने के साथ ही उनके मुख पर विचित्र आभाएं तैरने लगी थीं तथा आंखों में जलते इरादे चमक उठे थे। मैं उनकी उस मुद्रा से डर जाती हूं।

"संतोष की मां !" फ़तह ने गरजकर कहा।

"क्या है ?'

"भीतर क्यों नहीं आती ? पति की निंदा करना महापाप कहलाता है। एक पत्नी के लिए पति की इच्छा पर चलना ही महाधर्म है।"

गीता चोट खाई नागिन-सी फुफकारती चली गई।

कुछ देर बाद पद्म फ़तह के कमरे में गई। फ़तह कुछ कागज़ात देख रहा था। पद्म ने कहा "आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए।"

पद्म की ओर उसने चलती दृष्टि से देखा और कहा, 'मुझे ऐसा लगता है कि तुम कभी न कभी इस घर से निकलोगी। मैंने तुम्हें हजार बार कह दिया है कि मेरे काम में दखल न दिया करो। मैं हर कदम सोच-समझकर ही उठाता हूं। धर्म-अधर्म और आचार-विचार मैं तुमसे अधिक जानता हूं।"

"मैं जानती हूं कि आप बहुत चतुर हैं।" उसने तेज स्वर में कहा।

"जानकर ऐसे प्रश्न करना तुम्हें शोभा नहीं देता।"

"मैं क्षमा चाहती हूं।" वह एकदम पीली पड़ गई।

'भविष्य में वह राक्षस की तरह पद्म को देखने लगा। पद्म कांप उठी। उसके समक्ष अतीत की एक घटना साकार हो उठी। जब भगत बाबू ने उससे बार-बार बदतमीजियां की थीं तब उसने शिकायत की थी। वह मौन रहा था कुछ देर। बाद में बोला था 'वे देवता हैं, उनके बारे में तुम्हें ऐसी राय नहीं बनानी चाहिए।"

जब उसने दूसरी बार कहा था, 'आज उन्होंने मुझ अकेली को देखकर चूम लिया।" तब पशु ने उसे बुरी तरह पीटा था। उसपर इलजाम लगाया था कि वह ऐसे महान पुरुष को बदनाम करना चाहती है। भविष्य में वह उनकी शिकायत न करे।

पद्म ने इसका तात्पर्य यही लगाया था कि उसका पति भगत बाबू के लिए उसको बेच रहा है। क्योंकि भगत बाबू की सबसे बड़ी कमजोरी सुन्दर युवती है। तब वह क्या करती? वह गुलाम की तरह पति की आज्ञा पर लुट गई। आज उसे अपने पति से कोई लगाव नहीं आदर नहीं। वह उससे घृणा करती है पर उसने अपनी घृणा को कभी भी प्रकट न किया। वह एक परवश नारी है, जिसका जीवन इस समाज में पति-सेवा के सिवाय कुछ भी नहीं है। पति के अलग होते ही लोग उसको पापिन दुराचारिणी व्यभिचारिणी और न जाने क्या क्या कहेंगे? भले ही ऐसा न हो और अगर वह सचमुच में कुलटा है फिर भी उसका अपना पति है तो वह इन सम्बोधनों से बच जाती है। इस संसार में स्त्री बड़ी दयनीय है।

उसे जीवन गुजारना है। बस यह वाक्य वह प्रायः मन ही मन दोहराया

गीता की आंखों में आंसू छलछला आए। वह भर्राए स्वर में बोली, "जब आदमी की मति मारी जाती है तब फतह ऐसा ही होता है। मेरी मति ही मर गई थी। तुम मेरी दुर्बलताओं का स्पर्श करके मेरी भावनाओं को विद्रोह की ओर मोड़कर नहीं बिगाड़ते तो मैं पथभ्रष्ट नहीं होती। लेकिन कसूर मेरा ही है। पर एक शाप तुम्हें भी देती हूं कि तुम्हें भी सुख नहीं मिलेगा।"

वह यह कहकर बाहर निकल गई। रास्ते में उसे पद्म मिल गई। पद्म ने उसे आंसू भरी आंखों से जाते देखकर रोका। गीता दारुण दुःख से चीख उठी "मुझे जाने दो। मुझे जाने दो। मुझे मत रोको बहिन मत रोको।"

"आखिर बात क्या है ?"

"तुम्हें यह मालूम है न वह मिल हमारी है जिसकी स्थिति में हमने यह मिल तुम्हारे पति के नाम कर दी थी और अब वह उस मिल को सदा के लिए हड़प जाना चाहता है। यह कितनी बड़ी बेईमानी है।"

पद्म सीधी-सरल नारी थी। कोमल स्वर में बोली "उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। किसीकी चीज को अनुचित तरह से दबाना महापाप है।

"वह उसे परम धर्म समझ रहा है।"

"उनकी बात जाने दीजिए। वे रुपयों के लिए पागल हैं। उन्हें किसी भी वस्तु के बदले रुपया चाहिए। कल रात कहने लगे कि मैं एक बार देश का सबसे बड़ा धनी बनना चाहता हूं। और इस शब्द के कहने के साथ ही उनके मुख पर विचित्र छायाएं तैरने लगी थीं तथा आंखों में जलते इरादे चमक उठे थे। मैं उनकी उस मुद्रा से डर जाती हूं।'

"संतोष की मां !" फतह ने गरजकर कहा।

"क्या है ?

'भीतर क्यों नहीं आती ? पति की निंदा करना महापाप कहलाता है। एक पत्नी के लिए पति की इच्छा पर चलना ही महाधर्म है।"

गीता चोट खाई नागिन-सी फुफकारती चली गई।

कुछ देर बाद पद्म फतह के कमरे में गई। फतह कुछ कागजात देख रहा था। पद्म ने कहा "आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए।"

पद्म की ओर उसने चलती दृष्टि से देखा और कहा "मुझे ऐसा लगता है कि तुम कभी न कभी इस घर से निकलोगी। मैंने तुम्हें हजार बार कह दिया है कि मेरे काम में दखल न दिया करो। मैं हर कदम सोच-समझकर ही उठाता हूं। धर्म-अधर्म और आचार-विचार में तुमसे अधिक जानता हूं।"

"मैं जानती हूं कि आप बहुत चतुर हैं।" उसने तेज स्वर में कहा।

"जानकर ऐसे प्रश्न करना तुम्हें शोभा नहीं देता।"

"मैं क्षमा चाहती हूं।" वह एकदम पीली पड़ गई।

"भविष्य में " वह राक्षस की तरह पद्म को देखने लगा। पद्म कांप उठी। उसके समक्ष अतीत की एक घटना साकार हो उठी। जब भगत बाबू ने उससे बार-बार बदतमीजियां की थीं तब उसने शिकायत की थी। वह मौन रहा था कुछ देर। बाद मे बोला था "वे देवता हैं, उनके बारे में तुम्हें ऐसी राय नहीं बनानी चाहिए।"

जब उसने दूसरी बार कहा था "आज उन्होंने मुझ अकेली को देखकर चूम लिया।" तब फतह ने उसे बुरी तरह पीटा था। उसपर इल्जाम लगाया था कि वह ऐसे महान पुरुष को बदनाम करना चाहती है। भविष्य में वह उनकी शिकायत न करे।

पद्म ने इसका तात्पर्य यही लगाया था कि उसका पति भगत बाबू के लिए उसको बेच रहा है। क्योंकि भगत बाबू की सबसे बड़ी कमजोरी सुन्दर युवती है। तब वह क्या करती? वह गुलाम की तरह पति की आज्ञा पर झुक गई। आज उसे अपने पति से कोई लगाव नहीं आदर नहीं। वह उससे घृणा करती है पर उसने अपनी घृणा को कभी भी प्रकट न किया। वह एक परवश नारी है, जिसका जीवन उस समाज में पति-सेवा के सिवाय कुछ भी नहीं है। पति से अलग होते ही लोग उसको पापिन दुराचारिणी व्यभिचारिणी और न जाने क्या क्या कहेंगे? भले ही ऐसा न हो और अगर वह सचमुच में कुलटा है फिर भी उसका अपना पति है तो वह इन सम्बोधनों से बच जाती है। इस संसार में स्त्री बड़ी दयनीय है।

उसे जीवन गुजारना है। जब यह वाक्य वह प्रायः मन ही मन दोहराया

गीता की आँखों में आँसू छलछला आए। वह आर्द्र स्वर में बोली "जब आदमी की मति मारी जाती है तब फतह, ऐसा ही होता है। मेरी मति ही मर गई थी। तुम मेरी दुर्बलताओं का स्पर्श करके मेरी भावनाओं को विद्रोह की ओर मोड़कर नहीं बिगाड़ते तो मैं पथभ्रष्ट नहीं होती। लेकिन कसूर मेरा ही है। पर एक शाप तुम्हें भी देती हूं कि तुम्हें भी सुख नहीं मिलेगा।"

वह यह कहकर बाहर निकल गई। रास्ते में उसे पद्म मिल गई। पद्म ने उसे आँसू भरी आँखों से जाते देखकर रोका। गीता दारुण दुःख से चीख उठी "मुझे जाने दो। मुझे जाने दो। मुझे मत रोको बहिन मत रोको।"

"आखिर बात क्या है?"

"तुम्हें यह मालूम है न यह मिल हमारी है जिसकी स्थिति में हमने यह मिल तुम्हारे पति के नाम कर दी थी और अब वह उस मिल को सदा के लिए हड़प जाना चाहता है। यह कितनी बड़ी बेईमानी है।"

पद्म सीधी-सरल नारी थी। कोमल स्वर में बोली "उन्हें ऐसा नहीं करना चाहिए। किसीकी चीज को अनुचित तरह से दबाना महापाप है।"

"वह उसे परम धर्म समझ रहा है।"

"उनकी बात जाने दीजिए। वे रुपयों के लिए पागल हैं। उन्हें किसी भी वस्तु के बदले रुपया चाहिए। कल रात कहने लगे कि मैं एक बार देश का सबसे बड़ा धनी बनना चाहता हूं। और इस शब्द के कहने के साथ ही उनके मुख पर विचित्र छायाएं तैरने लगी थीं तथा आँखों में जलते इरादे चमक उठे थे। मैं उनकी उस मुद्रा से डर जाती हूं।"

"संतोष की मां!" फतह ने गरजकर कहा।

"क्या है?"

"भीतर क्यों नहीं जाती? पति की निंदा करना महापाप कहलाता है। एक पत्नी के लिए पति की इच्छा पर चलना ही महाधर्म है।"

गीता चोट खाई नागिन-सी फुफकारती चली गई।

कुछ देर बाद पद्म फतह के कमरे में गई। फतह कुछ कागज़ात देख रहा था। पद्म ने कहा "आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए।"

पद्म की ओर उसने जलती दृष्टि से देखा और कहा "मुझे ऐसा लगता है कि तुम कभी न कभी इस घर से निकलोगी। मैंने तुम्हें हजार बार कह दिया है कि मेरे काम में दखल न दिया करो। मैं हर कदम सोच-समझकर ही उठाता हूं। धर्म-अधर्म और आचार-विचार मैं तुमसे अधिक जानता हूं।"

"मैं मानती हूं कि आप बहुत चतुर हैं।" उसने तेज स्वर में कहा।

"जानकर ऐसे प्रश्न करना तुम्हें शोभा नहीं देता।"

"मैं क्षमा चाहती हूं।" वह एकदम पीली पड़ गई।

"भविष्य में" " वह राक्षस की तरह पद्म को देखने लगा। पद्म कांप उठी। उसके समक्ष अतीत की एक घटना साकार हो उठी। जब भगत बाबू ने उससे बार-बार बदतमीज़ियां की थीं तब उसने शिकायत की थी। वह मौन रहा था कुछ देर। बाद म बोला था "मैं देखता हूँ, उनके बारे में तुम्हें ऐसी राय नहीं बनानी चाहिए।"

जब उसने दूसरी बार कहा था "आज उन्होंने मुझ अकेली को देखकर चूम लिया।" तब पत्नह ने उसे बुरी तरह पीटा था। उसपर इलजाम लगाया था कि वह ऐसे महान पुरुष को बदनाम करना चाहती है। भविष्य में वह उनकी शिकायत न करे।

पद्म ने इसका तात्पर्य यही लगाया था कि उसका पति भगत बाबू के लिए उसको बेच रहा है। क्योंकि भगत बाबू की सबसे बड़ी कमजोरी सुन्दर युवती है। तब वह क्या करती? वह गुलाम की तरह पति की आज्ञा पर झुट गई। आज उसे अपने पति से कोई लगाव नहीं आदर नहीं। वह उससे घृणा करती है पर उसने अपनी घृणा को कभी भी प्रकट न किया। वह एक परवश नारी है, जिसका जीवन उस समाज में पति-सेवा के सिवाय कुछ भी नहीं है। पति के अलग होते ही लोग उसको पापिन दुराचारिणी व्यभिचारिणी और न जाने क्या-क्या कहेंगे? भले ही ऐसा न हो और अगर वह सचमुच में कुलटा है फिर भी उसके अपना पति है तो वह इन सम्बोधनों से बच जाती है। इस संसार में स्त्री बड़ी दयनीय है।

उसे जीवन गुजारना है। बस यह वाक्य वह प्राय मन ही मन दोहराया

करती थी और जब कभी वाद-विवादग्रस्त और आवेशपूर्ण होती तब वह इस वाक्य को थोड़ी देर के लिए विस्मृत कर देती थी फलस्वरूप वह फटकार और अन्य नौकर चाकरों को उपदेश दे देती थी। तब उसकी भाषा में व्यावहारिक व शाश्वत सत्य के प्रचलित वाक्य व बातें सम्मिलित हो जाती थीं। पर बोलती जाती थी। तब अप्रत्याशित ही उसे यह वाक्य याद आ जाता था 'उसे जीवन गुजारना है।" और वह बात के चरमोत्कर्ष के मध्य ही क्षमा माँग लेती थी जैसी अभी उसने फटकार से मांगी थी।

वह अपने कमरे में जाकर रो पड़ी। क्योंकि वह पूंजीवादी समाज की अन्य सेठानियों की तरह अपनी मनःस्थिति को इस तरह नहीं बना पाई थी जिससे वह सतीत्व-हरण की बात को साधारण बात की तरह अपने मानस-पटल से मिटा दे। उसे वह महापाप-सा लगता था और इस पाप से आक्रांत उसके संस्कार उसे नारीत्व से भी वंचित कर रहे थे। वह रात-दिन उस पीड़ा में और उससे उत्पन्न कुंठाओं में जलती रहती थी और इसी कारण उसने अपने बेटे को एक आया को संभलवा दिया था। क्योंकि वह अन्तिम रूप से यह निर्णय नहीं कर पा रही थी कि यह बच्चा किसके बीज से उत्पन्न हुआ है। वह बस रोगिणी की तरह पड़ी रहती थी। वह जीवन में वीतराग-सी हो रही थी। कभी-कभी उसके पास-पड़ोस की स्त्रियां आ जाती थीं और उसकी झूठी प्रशंसा करती रहती थीं।

आज के युग का यह दस्तूर है कि जैसे ही व्यक्ति के पास रुपया आता है वैसे ही उसके चारों ओर सच्चे झूठे संबंधी मधुमक्खियों की तरह आ जुटते हैं।

वे आगुन्तक स्त्रियां उसके स्वभाव मीठी वाणी और दयालु वृत्ति की प्रशंसा करती थीं जबकि सत्य यह था कि वह नितांत एकांतप्रिय और अंतर्मुख थी। उसकी वाणी सदा आक्रोशजनित कर्कशता लिए होती थी और वह कभी किसीकी बात को प्रोत्साहन नहीं देती थी। उन स्त्रियों की लगातार झूठी बातें वह भी अप्रमाणित रूप में सुनकर उसे पुराने जमाने की रानियों की दासियों का ध्यान आ जाता था। जब कभी ऐसी स्त्रियां आतीं तो वह इस प्रयास में रहती कि वह उनसे

जल्दी-जल्दी कैसे छुटकारा पाए ? वह उन स्त्रियों की किसी भी दर्पोक्तिमयी बातों की प्रशंसा नहीं करती थी। कभी-कभी वह प्रवीण बातूनी ब्राह्मण बुढ़िया को जिसका पेशा यजमानी का होता था तुरंत कुछ दान-दक्षिणा देकर रवाना कर देती थी। इसमें उसकी दान की भावना किंचित् भी नहीं होती थी बल्कि वह यह सब पिंड छुड़ाने के लिए ही देती थी। पर वह बुढ़िया उसकी इतनी प्रशंसा करती थी कि चंद गरीब स्त्रियां उसके द्वारे और आ जाती थीं और इस तरह उसे व्यर्थ की कीर्ति दिन प्रतिदिन मिल रही थी कि वह दयालु है।

फतह यदाकदा उसके पास सोने आता था। तब वह उन रानियों की तरह हर्षोन्माद में नहीं भरती थी जिनका राजा साल में एक-दो बार आता था। वह मरणासन्न-सी पड़ी रहती थी। उसमें किसी तरह की चंचलता और उत्सुकता दृष्टिगोचर नहीं होती थी। एक विरक्ति-सी उसमें रहती थी जो गृहस्थ साधु की आंखों में चमका करती थी। फतह उससे बड़ी-बड़ी बातें करता। पूछता 'तुम्हें किसी वस्तु की चाह नहीं होती ?

"नहीं।"

"तुम कभी और सेठानियों की तरह जेवर भी नहीं बनाती ?"

'मैं पति द्वारा कई बार जेवर पहन चुकी हूं।" इस वाक्य के अर्थ को फतह समझ जाता था। जेवर का मतलब पिटाई से था। इस विचार से वह मर्माहत सा हो उठता था।

"तुम मुझे परेशान करती हो !" हालांकि उन्हें पत्नी का यह स्वभाव अच्छा लगता था। क्योंकि पत्नी के पास धन आते ही वह पति से प्रतिस्पर्धा करने लगती है ऐसा उनका विचार था।

'मैं ?"वह चकित-सी फतह को देखती पर फतह उससे नजर नहीं मिला सकता। उसकी आंखों में वेदना का ऐसा प्रभाव रहता था जो फतह को अपने जुल्मों की संक्षिप्त कहानी एक क्षण में याद दिला देती थी। वह कांप जाता था और वह अपनी नजर को इधर-उधर दौड़ाता हुआ कहता "तुम कभी हंसकर नहीं बोलती हो। तुम कभी अच्छा खाती-पहनती नहीं हो। तुम कभी घूमने फिरने नहीं जाती हो।"

करती थी और जब कभी वाद-विवादग्रस्त और भावनाशील होती तब वह इस वाक्य को थोड़ी देर के लिए विस्मृत कर देती थी फलस्वरूप वह कलह और अन्य नौकर चाकरों को उपदेश दे देती थी। तब उसकी भाषा में व्यावहारिक व शाश्वत सत्य के प्रचलित वाक्य व बातें सम्मिलित हो जाती थीं। पर बोलती जाती थी। तब अप्रत्याशित ही उसे यह वाक्य याद आ जाता था "उसे जीवन गुजारना है।" और वह बात के चरमोत्कर्ष के मध्य ही क्षमा मांग लेती थी जैसी अभी उसने कलह से मांगी थी।

वह अपने कमरे में जाकर रो पड़ी। क्योंकि वह पूंजीवादी समाज की अन्य सेठानियों की तरह अपनी मनःस्थिति को इस तरह नहीं बना पाई थी जिससे वह सतीत्व-हरण की बात को साधारण बात की तरह अपने मानस-पटल से मिटा दे। उसे वह महापाप-सा लगता था और इस पाप से आक्रांत उसके संस्कार उसे नारीत्व से भी वंचित कर रहे थे। वह रात-दिन उस पीड़ा में और उससे उत्पन्न कुंठाओं में जलती रहती थी और इसी कारण उसने अपने बेटे को एक बाय को समर्पित किया था। क्योंकि वह अन्तिम रूप से यह निर्णय नहीं कर पा रही थी कि यह बच्चा किसके बीज से उत्पन्न हुआ है। वह बस रोगिणी की तरह पड़ी रहती थी। वह जीवन में वीतराग-सी हो रही थी। कभी-कभी उसके पास-पड़ोस की स्त्रियां आ जाती थीं और उसकी झूठी प्रशंसा करती रहती थीं।

आज के युग का यह दस्तूर है कि जैसे ही व्यक्ति के पास पैसा आता है वैसे ही उसके चारों ओर सम्बन्धी झूठे संबंधी मधुमक्खियों की तरह आ जुटते हैं।

वे आगन्तुक स्त्रियां उसके स्वभाव मीठी वाणी और दयालु वृत्ति की प्रशंसा करती थीं जबकि सत्य यह था कि वह नितांत एकांतप्रिय और अंतर्मुख थी। उसकी वाणी सदा पापोपार्जित कर्कशता लिए होती थी और वह कभी किसीकी बात को प्रोत्साहन नहीं देती थी। उन स्त्रियों की लगातार झूठी बातें वह भी प्रमाणित रूप में सुनकर उसे पुराने जमाने की रानियों की दासियों का ख्याल आ जाता था। जब कभी ऐसी स्त्रियां आतीं तो वह इस प्रयास में रहती कि वह उनसे

जल्दी-जल्दी कैसे छुटकारा पाए? वह उन स्त्रियों की किसी भी दुःखमयी बातों को प्रश्रय नहीं करती थी। कभी-कभी वह मलीन बातूनी ब्राह्मण बुढ़िया को जिसका पेशा यजमानी का होता था तुरंत कुछ दान-दक्षिणा देकर रवाना कर देती थी। इसमें उसकी दान की भावना किंचित् भी नहीं होती थी बल्कि वह यह सब पिंड छुड़ाने के लिए ही देती थी। पर वह बुढ़िया उसकी इतनी प्रशंसा करती थी कि चंद गरीब स्त्रियां उसके द्वारे और आ जाती थीं और इस तरह उसे व्यर्थ की कीर्ति दिन प्रतिदिन मिल रही थी कि वह दयालु है।

फतह यदाकदा उसके पास सोने आता था। तब वह उन रानियों की तरह हर्षोन्माद में नहीं भरती थी जिनका राजा साल में एक-दो बार आता था। वह मरणासन्न-सी पड़ी रहती थी। उसमें किसी तरह की चंचलता और उत्सुकता दृष्टिगोचर नहीं होती थी। एक विरक्ति-सी उसमें रहती थी जो गृहस्थ साधु की आंखों में चमका करती थी। फतह उससे बड़ी-बड़ी बातें करता। पूछता "तुम्हें किसी वस्तु की चाह नहीं होती?"

"नहीं।"

"तुम कभी और सेठानियों की तरह जेवर भी नहीं बनातीं?"

"मैं पति द्वारा कई बार जेवर पहन चुकी हूं।" इस वाक्य के अर्थ को फतह समझ जाता था। जेवर का मतलब पिटाई से था। इस विचार से वह मर्माहत-सा हो उठता था।

"तुम मुझे परेशान करती हो!" हालांकि उन्हें पत्नी का यह स्वभाव अच्छा लगता था। क्योंकि पत्नी के पास धन आते ही वह पति से प्रतिस्पर्धा करने लगती है ऐसा उनका विचार था।

"मैं?" वह चकित-सी फतह को देखती पर फतह उससे नजर नहीं मिला सकता। उसकी आंखों में वेदना का ऐसा प्रभाव रहता था जो फतह को अपने पुरखों की संचित कहानी एक क्षण में याद दिला देती थी। वह कांप जाता था और वह अपनी नजर को इधर-उधर दौड़ाता हुआ कहता "तुम कभी हंसकर नहीं बोलती हो। तुम कभी अच्छा खाती-पहनती नहीं हो। तुम कभी घूमने फिरने नहीं जाती हो।"

करती थी और जब कभी वाद-विवादग्रस्त और भावनाधीन होती तब वह इस वाक्य को थोड़ी देर के लिए विस्मृत कर देती थी फलस्वरूप वह फ़ज़ह और अन्य नौकर चाकरों को उपदेश दे देती थी। तब उसकी भाषा में व्यावहारिक व शाश्वत सत्य के प्रचलित वाक्य व बातें सम्मिलित हो जाती थीं। पर बोलती जाती थी। तब अप्रत्याशित ही उसे यह वाक्य याद आ जाता था, "उसे जीवन पुकारता है।" और वह बात के चरमोत्कर्ष के मध्य ही क्षमा मांग लेती थी जैसी अभी उसने फ़ज़ह से मांगी थी।

वह अपने कमरे में जाकर रो पड़ी। क्योंकि वह पूंजीवादी समाज की अन्य सेठानियों की तरह अपनी मनःस्थिति को इस तरह नहीं बना पाई थी जिससे वह सतीत्व-हरण की बात को साधारण बात की तरह अपने मानस-पटल से मिटा दे। उसे वह महापाप-सा लगता था और इस पाप से आक्रांत उसके संस्कार उसे नारीत्व से भी वंचित कर रहे थे। वह रात-दिन उस पीड़ा में और उससे उत्पन्न कुंठाओं में जलती रहती थी और इसी कारण उसने अपने बेटे को एक आया को सौंप दिया था। क्योंकि वह अन्तिम रूप से यह निर्णय नहीं कर पा रही थी कि यह बच्चा किसके बीज से उत्पन्न हुआ है! वह बस रोगिणी की तरह पड़ी रहती थी। वह जीवन में वीतराग-सी हो रही थी। कभी-कभी उसके पास-पड़ोस की स्त्रियां आ जाती थीं और उसकी झूठी प्रशंसा करती रहती थी।

आज के युग का यह दस्तूर है कि जैसे ही व्यक्ति के पास रुपया आता है, वैसे ही उसके चारों ओर लम्बे-चौड़े संबंधी मधुमक्खियों की तरह आ जुटते हैं।

वे आगन्तुक स्त्रियां उसके स्वभाव मीठी वाणी और दयालु वृत्ति की प्रशंसा करती थीं जबकि सत्य यह था कि वह नितांत एकांतप्रिय और अंतर्मुख थी। उसकी वाणी सदा आत्मग्लानिजनित कटुता लिए होती थी और वह कभी किसीकी बात को प्रोत्साहन नहीं देती थी। उन स्त्रियों की लगातार झूठी बातें वह भी अप्रभावित रूप में सुनकर उसे पुराने जमाने की रानियों की दासियों का ख्याल आ जाता था। जब कभी ऐसी स्त्रियां आती तो वह इस प्रयास में रहती कि वह उनसे

करती थी और जब कभी वाद-विवादग्रस्त और भावनाशील होती तब वह इस वाक्य को थोड़ी देर के लिए विस्मृत कर देती थी फलस्वरूप वह फ़्लड़ और अन्य नौकर-चाकरों को उपदेश दे देती थी। तब उसकी भाषा में व्यावहारिक व शाश्वत सत्य के प्रचलित वाक्य व बातें सम्मिलित हो जाती थीं। वह बोलती जाती थी। तब अनायास ही उसे यह वाक्य याद आ जाता था, "उसे जीवन गुज़ारना है।" और वह बात के चरमोत्कर्ष के मध्य ही क्षमा मांग लेती थी जैसी अभी उसने फ़्लड़ से मांगी थी।

वह अपने कमरे में जाकर रो पड़ी। क्योंकि वह पूंजीवादी समाज की अन्य सेठानियों की तरह अपनी मनःस्थिति को इस तरह नहीं बना पाई थी जिससे वह सतीत्व-हरण की बात को साधारण बात की तरह अपने मानस-पटल से मिटा दे। उसे वह महापाप-सा लगता था और इस पाप से आक्रांत उसके संस्कार उसे मातृत्व से भी वंचित कर रहे थे। वह रात-दिन इस पीड़ा में और उससे उत्पन्न कुंठाओं में जलती रहती थी और इसी कारण उसने अपने बेटे को एक भार-सा समझ लिया था। क्योंकि वह अन्तिम रूप से यह निर्णय नहीं कर पा रही थी कि यह बच्चा किसके बीज से उत्पन्न हुआ है। वह बस रोगिणी की तरह पड़ी रहती थी। वह जीवन में वीतराग-सी हो रही थी। कभी-कभी उसके पास-पड़ोस की स्त्रियां आ जाती थीं और उसकी झूठी प्रशंसा करती रहती थीं।

आज के युग का यह दस्तूर है कि जैसे ही व्यक्ति के पास पैसा आता है, वैसे ही उसके चारों ओर सच्चे-झूठे संबंधी मधुमक्खियों की तरह आ जुटते हैं।

वे चापलूसक स्त्रियां उसके स्वभाव मीठी वाणी और दयालु वृत्ति की प्रशंसा करती थीं जबकि सत्य यह था कि वह नितान्त एकान्तप्रिय और अंतर्मुख थी। उनकी बातें सदा चापलूसीजनित कर्कशता लिए होती थीं और वह कभी किसी की बात को प्रोत्साहन नहीं देती थी। उन स्त्रियों की लगातार झूठी बातें वह भी अबाधित रूप में सुनकर उसे पुराने ज़माने की रानियों की दासियों का ख़्याल आ जाता था। जब कभी ऐसी स्त्रियां आतीं तो वह इस प्रयास में रहती कि वह उनसे

कई नौकरानियाँ उसे ही सेठानियों के छोटे-छोटे आदमियों के साथ हुए नाजायज सम्बन्धों की कहानियाँ सुनाती हैं और वे सेठानियाँ समाज की अति प्रतिष्ठित महिलाएँ कहलाती हैं किन्तु वह उनका जरा भी सम्मान नहीं करती है। वह उन्हें ढोंगी पापिनें और बदजात जैसे सुन्दर विशेषणों से अलंकृत कर सकती है। उसे ऐसी स्त्रियों से घृणा है और उसका अनुमान है कि उन्हें भयंकर नरक मिलेगा क्योंकि वे पाप करके भी साध्वी का ढोंग करती हैं। छिनालों के आचरण करके भी सतियों-सी महान पवित्रता का प्रदर्शन करती हैं जो सरासर संसार वालों व अपने-आपसे धोखा है। उसे भी नरक मिलेगा इस बारे में उसकी अपनी दृढ़ धारणा है। पति की आज्ञा को सर्वोपरि मानकर सतीत्व बेचना भी उसे पाप-सा ही लगा। वैसे कभी-कभी वह सोचती थी कि लोग प्राचीनकाल में अतिथियों को अपनी पत्नियाँ तक कैसे अर्पण कर देते थे। तत्क्षण उसे लगता था कि यह सब बकवास है। कोई भी ऐसा नहीं कर सकता। यह असंभव है। केवल उसके पति जैसा पामर व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है! 'पति पामर' इस शब्द के साथ ही उसके अन्तस् की कोई शक्ति उसे धिक्कारती थी। वैसे उसे अपने पति को ऐसा नहीं कहना चाहिए।

इसी तरह वह उद्विग्न और तारतम्यहीन विचारों में पड़ी रहती थी।

रात के चार बजे थे।

फतह के कमरे में प्रकाश था।

वह अपने कमरे में बहुत पहले उठ गया था।

पद्म ने उसके कमरे की ओर देखा। वह उस ओर गई। पीछे से अपना मुँह सटाकर देखा—वे कागजात में तन्मय हैं। हाय रे पैसा!

वह वापस लौटकर आ गई और श्रीनाथजी के चित्र के सम्मुख बैठ गई। वह प्रभु से अपने अपराधों के लिए क्षमा माँग रही थी। उसके अधर उसके नामोच्चारण के लिए तड़प उठे।

कदाचित् फतह ने रात की नीरवता में पद्म के पाँवों की आहट सुन ली हो। वह धीरे-धीरे आकर बोला "संतोष की माँ!"

वह चौंक पड़ी। घूमकर देखा—फतह खड़ा है। उसने कमरे में प्रकाश किया।

"इन सब बातों का संबंध आदमी के स्वभाव से होता है। कुछ आदमी घूमने-फिरने में खूब आनंद लेते हैं और कुछ आदमी घर से बाहर निकलना भी नहीं चाहते।

"लेकिन ।"

"आप मेरे पति हैं। मैं आपका हुक्म मान सकती हूं। आप कहिए—दू सोलह शृंगार करूं, मैं कर लूंगी। आप कहिए, उस आदमी के संग भी मैं सो जाऊंगी। मुझे केवल आपका हुक्म मानना है।" वह घृणा से उत्तेजित हो गई।

"तुम मुझपर फब्तियां कस रही हो?"

"नहीं। मैं केवल अपना धर्म बता रही हूं।"

"जो हो गया है उसे भूलने की कोशिश क्यों नहीं करती!"

"जो अविस्मृत है उसे भुलाया नहीं जाता।"

"अब कहो तुम मुझे परेशान करती हो या नहीं?"

"नहीं।"

फतह क्रोधित होकर चला गया।

रूप अकेली रह गई। कमरा और सन्नाटा। उसने कमरे में अंधेरा कर लिया। अन्धकार में उसे अपने पति की लालसा चमकते घड़ी के पेंडुलम की टिकटिक में जान पड़ी। घड़ी का पेंडुलम एक वृत्त में निरन्तर टिकटिक कर रहा था और उसे महसूस हुआ कि उसके पति की लालसा भी एक ही वृत्त में नाच रही है। वह वृत्त है मन का।

जीवन के प्रति रूप में कोई उल्लास नहीं है। कोई लगाव और आकर्षण नहीं है। केवल जीवन गुजारना है इसके लिए सांसों के धागों को जलाना उसे नहीं भाता। वह कभी-कभी मर जाना चाहती है। पर वह कभी इस विचार को कार्यान्वित करने में सफल नहीं हुई।

उसका पति उसे कहता है कि वह अतीत को भूल जाए। वह अन्य सेठानियों की तरह अनेकानेक सुकर्म करके भी गर्व से सिर ऊंचा रखे। प्रभु के मंदिरों में जाकर भजन-पूजा करे और दान देकर दानी कहलाए। लेकिन उसे उन सेठानियों से अपने धर्म की उन स्त्रियों से भिन्न है। उसे मालूम है कि

कई नौकरानियाँ उसे ही सेठानियों के छोटे-छोटे आदमियों के साथ हुए नाजायज सम्बन्धों की कहानियाँ सुनाती हैं और वे सेठानियाँ समाज की अति प्रतिष्ठित महिलाएं कहलाती हैं किन्तु वह उनका जरा भी सम्मान नहीं करती है। वह उन्हें ढोंगी पापिनें और बदजात जैसे सुन्दर विशेषणों से अलंकृत कर सकती है। उसे ऐसी स्त्रियों से घृणा है और उसका अनुमान है कि उन्हें भयंकर नरक मिलेगा क्योंकि वे पाप करके भी साध्वी का ढोंग करती हैं। छिनालों के आचरण करके भी सतियों-सी महान पवित्रता का प्रदर्शन करती हैं जो सरासर संसार वालों व अपने-आपसे धोखा है। उसे भी नरक मिलेगा इस बारे में उसकी अपनी दृढ़ धारणा है। पति की आज्ञा को सर्वोपरि मानकर सतीत्व बेचना भी उसे पाप-सा ही लगा। जैसे कभी-कभी वह सोचती थी कि लोग प्राचीनकाल में अतिथियों को अपनी पत्नियाँ तक कैसे अर्पण कर देते थे। तत्क्षण उसे लगता था कि यह सब बकवास है। कोई भी ऐसा नहीं कर सकता। यह असंभव है। केवल उसके पति जैसा पामर व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है! 'पति पामर' इस शब्द के साथ ही उसके अन्तस् की कोई शक्ति उसे धिक्कारती थी। जैसे उसे अपने पति को ऐसा नहीं कहना चाहिए।

इसी तरह वह उद्विग्न और तारतम्यहीन विचारों में पड़ी रहती थी।

रात के चार बजे थे।

फ़तह के कमरे में प्रकाश था।

वह अपने कमरे में बहुत पहले उठ गया था।

पद्म ने उसके कमरे की ओर देखा। वह उस ओर गई। पीछे से अपना मुंह सटाकर देखा—वे कामकाज में तन्मय हैं। हाय रे पैसा!

वह वापस लौटकर आ गई और श्रीनाथजी के चित्र के सम्मुख बैठ गई। वह प्रभु से अपने अपराधों के लिए क्षमा मांग रही थी। उसके अधर उसके नामोच्चारण के लिए तड़प उठे।

कदाचित् फ़तह ने रात की नीरवता में पद्म के पांवों की आहट सुन ली हो। वह पीछे-पीछे आकर बोला "संतोष की माँ!"

वह चौंक पड़ी। घूमकर देखा—फ़तह खड़ा है। उसने कमरे में प्रकाश किया।

"इन सब बातों का संबंध आदमी के स्वभाव से होता है। कुछ आदमी घूमने-फिरने में खूब आनन्द लेते हैं और कुछ आदमी घर से बाहर निकलना भी नहीं चाहते।

"लेकिन… ।"

"आप मेरे पति हैं। मैं आपका हुक्म मान सकती हूं। आप कहिए—सोलह शृंगार कर, मैं कर लूंगी। आप कहिए, उस आदमी के संग सो, मैं सो जाऊंगी। मुझे केवल आपका हुक्म मानना है।" वह घृणा से उत्तेजित हो गई।

"तुम मुझपर फब्तियां कस रही हो?"

"नहीं। मैं केवल अपना धर्म बता रही हूं।"

"जो हो गया है, उसे भूलने की कोशिश क्यों नहीं करतीं!"

"जो अविस्मृत है उसे भुलाया नहीं जाता।"

"अब कहो तुम मुझे परेशान करती हो या नहीं?"

"नहीं।"

छगह क्रोधित होकर चला गया।

वह अकेली रह गई। अन्धेरा और सन्नाटा। उसने कमरे में अंधेरा कर लिया। अन्धकार में उसे अपने पति की लालसा चमकते घड़ी के पेंडुलम की टिकटिक में जान पड़ी। घड़ी का पेंडुलम एक वृत्त में निरन्तर टिकटिक कर रहा था और उसे महसूस हुआ कि उसके पति की लालसा भी एक ही वृत्त में नाच रही है। वह वृत्त है धन का।

जीवन के प्रति उसमें कोई उल्लास नहीं है। कोई लगाव और आकर्षण नहीं है। केवल जीवन गुजारना है, इसके लिए सांसों के कारवां को चलाना उसे नहीं भाता। वह कभी-कभी मर जाना चाहती है। पर वह कभी इस विचार को कार्यान्वित करने में सफल नहीं हुई।

उसका पति उसे कहता है कि वह अतीत को भूल जाए। वह अन्य सेठानियों की तरह अनेकानेक कुकर्म करके भी गर्व से सिर ऊंचा रखे। प्रभु के मंदिरों में जाकर भजन-पूजा करे और दान देकर दानी कहलाए। लेकिन उसे उन सेठानियों से अपने वर्ग की उन स्त्रियों से चिढ़ है। उसे मालूम है कि

"इन सब बातों का संबंध आदमी के स्वभाव से होता है। कुछ आदमी घूमने-फिरने में खूब आनंद लेते हैं और कुछ आदमी घर से बाहर निकलना भी नहीं चाहते।"

"लेकिन ...!"

"आप मेरे पति हैं! मैं आपका हुक्म मान सकती हूं। आप कहिए—सोलह शृंगार करूं, मैं कर लूंगी। आप कहिए, उस आदमी के संग सो मैं सो जाऊंगी। मुझे केवल आपका हुक्म मानना है।" वह घृणा से उत्तेजित हो गई।

"तुम मुझपर फब्तियां कस रही हो?"

"नहीं। मैं केवल अपना धर्म बता रही हूं।"

"जो हो गया है, उसे भूलने की कोशिश क्यों नहीं करतीं!"

"जो अविस्मृत है उसे भुलाया नहीं जाता।"

"अब कहो तुम मुझे परेशान करती हो या नहीं?"

"नहीं।"

वह क्रोधित होकर चला गया।

पद्म अकेली रह गई। कमरा और सन्नाटा। उसने कमरे में अंधेरा कर लिया। अन्धकार में उसे अपने पति की लालसा चमकते घड़ी के पेंडुलम की टिकटिक में जान पड़ी। घड़ी का पेंडुलम एक वृत्त में निरन्तर टिकटिक कर रहा था और उसे महसूस हुआ कि उसके पति की लालसा भी एक ही वृत्त में नाच रही है। वह वृत्त है धन का।

जीवन के प्रति पद्म में कोई उत्साह नहीं है। कोई लगाव और आकर्षण नहीं है। केवल जीवन गुजारना है, इसके लिए सांसों के भारवाह को निभाना उसे नहीं भाता। वह कभी-कभी मर जाना चाहती है। पर वह कभी इस विचार को कार्यान्वित करने में सफल नहीं हुई।

उसका पति उसे कहता है कि वह अतीत को भूल जाए। वह अन्य सेठानियों की तरह अनेकानेक कुकर्म करके भी गर्व से सिर ऊंचा रखे। प्रभु के मंदिरों में जाकर भजन-पूजा करे और दान देकर धर्मी कहलाए। लेकिन उसे उन सेठानियों से अपने वर्ग की उन स्त्रियों से चिढ़ है। उसे मालूम है कि

कई नौकरानियां उसे ही सेठानियों के छोटे-मोटे आदमियों के साथ हुए नाजायज सम्बन्धों की कहानियां सुनाती हैं और वे सेठानियां समाज की अति प्रतिष्ठित महिलाएं कहलाती हैं किन्तु वह उनका जरा भी सम्मान नहीं करती है। वह उन्हें ढोंगी पापिनें और बदजात जैसे सुन्दर विशेषणों से अलंकृत कर सकती है। उसे ऐसी स्त्रियों से घृणा है और उसका अनुमान है कि उन्हें भयंकर नरक मिलेगा क्योंकि वे पाप करके भी साध्वी का ढोंग करती हैं। छिनालों के आचरण करके भी सतियों-सी महान पवित्रता का प्रदर्शन करती हैं जो सरासर संसार वालों व अपने-आपसे धोखा है। उसे भी नरक मिलेगा इस बारे में उसकी अपनी दृढ़ धारणा है। पति की आज्ञा को सर्वोपरि मानकर सतीत्व बेचना भी उसे पाप-सा ही लगा। वैसे कभी-कभी वह सोचती थी कि लोग प्राचीनकाल में अतिथियों को अपनी पत्नियां तक भेंट अर्पण कर देते थे। तत्क्षण उसे लगता था कि यह सब बकवास है। कोई भी ऐसा नहीं कर सकता। यह असंभव है। केवल उसके पति जैसा पामर व्यक्ति ही ऐसा कर सकता है! 'पति पामर' इस शब्द के साथ ही उसके अन्तस् की कोई शक्ति उसे धिक्कारती थी। जैसे उसे अपने पति को ऐसा नहीं कहना चाहिए।

इसी तरह वह उद्विग्न और तारतम्यहीन विचारों में पड़ी रहती थी।

रात के चार बजे थे।

शरद् के कमरे में प्रकाश था।

वह अपने कमरे में बहुत पहले उठ गया था।

पद्म ने उसके कमरे की ओर देखा। वह उस ओर गई। धीरे से अपना मुंह सटाकर देखा—वे जपजाप में तन्मय हैं। हाय रे दैवा!

वह वापस लौटकर आ गई और मीनाक्षी के चित्र के सम्मुख बैठ गई। वह प्रभु से अपने अपराधों के लिए क्षमा मांग रही थी। उसके अधर उसके नामोच्चारण के लिए तड़प उठे।

कदाचित् शरद् ने रात की नीरवता में पद्म के पांवों की आहट सुन ली हो। वह पीछे-पीछे आकर बोला "संतोष की मां!"

वह चौंक पड़ी। घूमकर देखा—शरद् खड़ा है। उसने कमरे में प्रकाश किया।

"तुम रात-रात-भर सोती नहीं हो। क्या बात है ? क्यों अपने-आपको मार रही हो ?"

"मुझे नींद नहीं आती।

"अर्थहीन चिंताओं में तड़पने से क्या होगा ?" फतह थोड़ा गंभीर हो गया "मैं जानता हूं तुम्हें दुःख है। तुम्हारे सीने पर आग भी हो सकती है। किन्तु किसी घटना को सदा स्मरण रखकर सम्पूर्ण जीवन का विनाश करना कोई बुद्धिमानी नहीं है। यह मूर्खता है। मैं तुम्हें कहता हूं—अतीत को विस्मृत कर दो। नवीन को आधार बनाओ। परिवर्तन शब्द की रचना ही इसीलिए की गई है।"

"क्या एक स्त्री यह भूल सकती है कि वह पतित है ?" वह एकदम तेज स्वर में बोली "जब उसका सारा जीवन धार्मिक रीति-रिवाजों में व्यतीत हुआ है। अब उसे रात-दिन पाप की आहुतियां काटती रहती हैं।

'उसे भूलना ही चाहिए। मुख्यतः तुम्हें क्योंकि तुम्हारे सुख के दिन अभी ही आए हैं।"

"आप जिसे सुख कहते हैं वह मेरे लिए चरम दुःख है।"

"ओह ! मैं तुम्हें समझाकर क्या पाता हूं ? केवल अपने समय को ही बर्बाद करता हूं। तुम अपनी मनोवृत्ति का किंचित् भी परित्याग नहीं कर सकतीं। तुम इस कलिकाल में सतियों के आदर्शों का मूल्य लेकर जीवित रहना चाहती हो यह सर्वथा मूर्खता है मूर्खता।"

कमरे में सन्नाटा छा गया।

फतह वहीं पलंग पर लेट गया। वह अपने-आप बड़बड़ाने लगा "एक लाख का सौदा कर लिया है। ईश्वर मुझे इस सौदे में सफल कर दे। मैं उसे पोशाक पहनाऊंगा। सचमुच इस सौदे ने मुझे रात-भर सोने नहीं दिया है। एक लाख का मुनाफा हो सकता है। [यह चांदी का सट्टा भी क्या बना है, आदमी का भाग्य उसका साथ दे तो वह एक दिन में लाखों रुपया कमा सकता है।"

"वह आदमी का चैन और आराम भी छीन लेता है।" रूप बोली।

"यह सही है।" वह कुछ रुककर बोला, "मेरे सिर में दर्द है।"

पद्मा उसके समीप आ गई। उसने फत्तह का सिर दबाना शुरू कर दिया। फत्तह ने एक बार प्यास-भरी आँखों से पद्मा के मुख की ओर देखा। उसका मन करुणा से भर आया किन्तु उसने मन ही मन कहा, "बेवकूफ!"

और उसने पद्मा को अपनी ओर खींच लिया।

"ठहरो, मुझे बत्ती बुझाने दो!"

बाहर गिर्जे की घड़ी टन-टन करके पाँच बजा रही थी।

फत्तह ने चाँदी की जो तेजी लगाई थी, उस तेजी का शुभ समाचार सवेरे-सवेरे जैसे ही बाजार खुला, वैसे ही सम्पत ले आया। यह सम्पत वही सम्पत है जो आज सेठ की कोठी में पागलों की तरह प्रलाप करता है और अफीमची होने के कारण अधिक बोलने की उसकी आदत बन गई है। वह चाँदी-बाजार का दलाल है। अपने फन में लोगों में वह उस्ताद के नाम से ही पहचाना जाता है।

सट्टे का लेकर उसकी भेंट फत्तह से कई बार हो गई थी और जब फत्तह ने उसे अपना सौदा दे दिया था, जिसके फलस्वरूप फत्तह को लगभग एक लाख रुपये का लाभ हुआ था।

फत्तह (जिसे अब बड़े बाबू कहना ही उत्तम होगा क्योंकि आजकल उसकी प्रसिद्धि इसी नाम से अधिक हो रही है) ने मधुर मुस्कान से उसका स्वागत किया।

"बड़े बाबू, आपका ही अनुमान ठीक निकला। चाँदी तेज हो गई!"

बड़े बाबू की आँखें चमक उठीं। उनकी इच्छा हुई कि वे पद्मा को जाकर कहें कि आज तीन लाख रुपये कमाए हैं, पर उनका मन का उत्साह मन में ही रह गया। पद्मा निर्जीव मछली है, उसे किसी बात से कोई दिलचस्पी नहीं। मूर्ख गधे की तरह उसकी काया नीरस है। उन्होंने मन में सोचा और कृत्रिम मुस्कान के साथ बोले, "अगर तुम मेरा काम सम्भाल लो तो मैं तुम्हें अपने

की आदत थी जिसके कारण उसके दांतों पर पीला-पीला मैल जम गया था। उसका रंग गुलाबी था और उसकी आंखों में एक नशा रहता था जिसके बारे में लोगों की धारणा थी कि वह अफीम का नशा करता है। लोगों का यह अनुमान भी है कि उसके पास काफी पैसा है पर वह कंजूसीवृत्ति के कारण ही मटमैले कपड़ों में रहता है और शादी नहीं करता है। क्योंकि शादी करके वह अपनी जमापूंजी को बरबाद करना नहीं चाहता। उसे डर है कि कहीं वह बुरी बीबी के कारण कंगाल न हो जाए।

दोपहर को जब वह 'लक्ष्मी मिल्स' में बड़े बाबू से मिला तब वह कुछ अच्छी पोशाक में था। उसने दो घोड़ा बोस्की का चमकदार कुर्ता पहन रखा था और उसकी धोती भी नई थी।

बड़े बाबू ने उसे कुछ देर तक बाहर बिठाकर रखा क्योंकि वे अपने वकील से बातचीत कर रहे थे। वैसे बड़े बाबू ने अपनी ओर से मिल का नाम बदल दिया था और उन्होंने सबको हिदायत भी दे दी थी कि वे इस मिल को लक्ष्मी मिल्स के नाम से ही पुकारें। हालांकि कानूनन स्वीकृति आने में दो-चार दिन की अभी और देर थी।

वकील के जाते ही सम्पत ने कमरे में प्रवेश किया।

ऊंची गद्दी पर स्फटिक-सी चादर चमक रही थी। बड़े बाबू कुछ कागजातों को एक लाल कपड़े के बस्ते में बांध रहे थे।

सम्पत हाथ जोड़कर बैठ गया।

"क्यों, तुमने क्या निर्णय किया ?

"मैं आपके हुक्म को कैसे टाल सकता हूं ?" उसने विनीत स्वर में कहा, उसके चेहरे पर कोमलता नाचने लगी।

"ठीक है। तुम चांदी बाजार जाओ। मैं घंटे-दो घंटे में आऊंगा। वैसे तुम अपनी मर्जी से सौ-पचास पेटी का सौदा कर सकते हो।"

सम्पत उठकर जाने लगा।

"सुनो। बड़े बाबू ने उसे बैठने का इंगित किया "मैंने सुना है कि तुम्हारे कोई लड़का नहीं है।"

यहां रख सकता हूं।"

"पर ?

"पर क्या ?"

"केवल नौकरी से पार नहीं पड़ता।"

"केवल नौकरी से पार नहीं पड़ता।" तुम्हें केवल मेरा ही सौदा करना

दलाली तुम्हारी प्रलग से रहेगी पर तुम्हें केवल मेरा ही सौदा करना पड़ेगा। तुम यह अच्छी तरह जानते हो कि मैं एक बार इस बाजार को हिला कर रख सकता हूं।" उन्होंने एक पल के लिए नेत्र बंद किए जैसे वे ईश्वर की प्रार्थना कर रहे हों फिर मेथोग्मीसन करके बोले "मैं इसे ईश्वर की कृपा समझता हूं। बन्दा उसके बिना क्या कर सकता है। यह सही है कि आजकल मेरा अनुमान खूब ठीक रहता है। मैं चाहता हूं तुम मेरा काम संभाल लो। मैं तुम्हें घाटे में नहीं रहने दूंगा।

"जैसी आपकी मर्जी।"

"तनखा के बारे में चिंता न करना।

"नहीं जब आपने कह दिया है तब चिंता की बात रह ही नहीं जाती।"

"अच्छा तुम जाओ मुझे पूजा आर्चि करनी है।"

सम्पत चला गया।

सम्पत भी जाति का वैश्य था। बर्षों से वह सट्टा बाजार में काम करता था। परिवार में उसकी एक बेटी थी जिसका वह विवाह कर चुका था। पत्नी का चार वर्ष पहले देहान्त हो गया था। पर उसने दूसरा विवाह नहीं किया। हालांकि उसके सामने कई दलाल आए थे जिन्होंने चार-पांच हजार में बेटियां बेचनेवालों से सौदा तय कराने का आश्वासन दिया था। किंतु उसने स्वीकार नहीं किया। क्योंकि वह जानता था कि इस उम्र में विवाह करना उचित नहीं है। पर निःसन्तान होने की वजह से कभी-कभी उसका मन एकांत से घबरा जाता था और तब उसके मन के एक वीराने कोने-से विवाह करने की इच्छा जागरित हो जाती थी।

उसकी पोशाक साधारण होती थी। सिर पर पगड़ी, कुर्ता धोती। सर्दी के मौसम में बन्द गले का कोट। वह अत्यन्त मितव्ययी था। पर उसे पाप लाने

की आदत थी जिसके कारण उसके दाँतों पर पीला-पीला मैल जम गया था। उसका रंग मुश्की था और उसकी आँखों में एक नशा रहता था जिसके बारे में लोगों की धारणा थी कि वह अफ़ीम का नशा करता है। लोगों का यह अनुमान भी है कि उसके पास काफ़ी पैसा है पर वह कंजूसीवृत्ति के कारण भी मटमैले कपड़ों में रहता है और शादी नहीं करता है। क्योंकि शादी करके वह अपनी जमापूँजी को बरबाद करना नहीं चाहता। उसे डर है कि कहीं वह पूरी बीवी कारण कंगाल न हो जाए।

दोपहर को जब वह 'लक्ष्मी मिल्स' में बड़े बाबू से मिला तब वह कुछ अच्छी पोशाक में था। उसने दो घोड़ा बोसकी का चमकदार कुर्ता पहन रखा था और उसकी धोती भी नई थी।

बड़े बाबू ने उसे कुछ देर तक बाहर बिठाकर रखा क्योंकि वे अपने वकील से बातचीत कर रहे थे। वैसे बड़े बाबू ने अपनी ओर से मिल का नाम बदल दिया था और उन्होंने सबको हिदायत भी दे दी थी कि वे इस मिल कं लक्ष्मी मिल्स के नाम से ही पुकारें। हालाँकि कानूनन स्वीकृति पाने में दो चा दिन की अभी और देर थी।

वकील के जाते ही सम्पत ने कमरे में प्रवेश किया।

ऊँची गद्दी पर स्फटिक-सी चादर चमक रही थी। बड़े बाबू कुछ कागज़ातों को एक लाल कपड़े के बस्ते में बाँध रहे थे।

सम्पत हाथ जोड़कर बैठ गया।

"क्यों तुमने क्या निर्णय किया?"

"मैं आपके हुक्म को कैसे टाल सकता हूँ?" उसने विनीत स्वर में कहा।

उसके चेहरे पर कोमलता झलकने लगी।

"ठीक है। तुम चोरी बाज़ार जाओ। मैं घंटे-दो घंटे में आऊँगा। वैसे तु अपनी मर्ज़ी से सौ-पचास पेटी का सौदा कर सकते हो।"

सम्पत उठकर जाने लगा।

"सुनो।" बड़े बाबू ने उसे बैठने का संकेत किया "मैंने सुना है कि तु कोई सहारा नहीं है।"

"आपने ठीक सुना है।"

"बीवी भी तुम्हारी मर चुकी है।"

"जी।"

"फिर दूसरा विवाह क्यों नहीं करते ?"

"अब इस उम्र में ··· ?"

बड़े बाबू खिलखिलाकर हँस पड़े "अरे मर्द कैसा बूढ़ा ? साठा सो पाठा। साठ वर्ष तक बूढ़ा नहीं होता। सम्पत ! मुझे तुम्हारी यह आदत पसंद नहीं। घर में लक्ष्मी न हो वहाँ लक्ष्मी कैसे आएगी ? घर में एक भी लड़का न हो आदमी का परलोक कैसे सुधरेगा ? मेरी सलाह मानो तो विवाह कर लो।"

"लेकिन लड़की ?

"लड़कियों की हमारे समाज में कौन-सी कमी है ? कोई न कोई दे ही देगा। अगर यह संभव न हो तो रुपये देकर विवाह कर लो। इस देश में बेटियाँ बेचने-वालों की कमी नहीं है ? रुपया फेंको और सुन्दर लड़की पाओ।"

"इसपर मैं सोचूंगा।"

कहकर वह चला गया।

बड़े बाबू अपने काम में व्यस्त हो गए। अभी एक घंटा नहीं बीता था कि जमादार ने आकर बताया "सम्पत बाबू आपसे मिलना चाहते हैं।"

"उन्हें भेज दो।"

सम्पत ने कमरे में प्रवेश किया। बड़े बाबू ने ऊपरी शिष्टाचार से पूछा, "आज तुमने मुझपर कैसे कृपा की ?"

सम्पत बाबू ने विचलित स्वर में कहा "मैं तुमसे अंतिम बार यह पूछने आया हूँ कि मुझे मेरी मिल वापस करोगे या नहीं ?

"ठंडा पानी मंगवाऊं ?"

"मुझे प्यास नहीं है।"

"प्यास के लिए नहीं। मिजाज को ठंडा करने के लिए।"

"इतनी बड़ी ठोकर खाने के बाद मिजाज में गर्मी नहीं रहती।"

"तुम्हारे स्वभाव से ऐसा ही लगता है।"

"तुमने मेरा स्वभाव देखा था। फतह ! अगर मुझे पूरी मिल नहीं देना चाहते तो मत दो पर उसमें मेरा आधा हिस्सा ही रख लो।"

"तुम जा सकते हो। अभी मैं आवश्यक काम में व्यस्त हूं। इन फजूल बातों के लिए मेरे पास वक्त नहीं है।"

भगत ने होंठों को काटते हुए कहा "तुम आदमी हो या शैतान ? किसीकी चीज को हड़पकर तुम उसके साथ इस तरह का व्यवहार करते हो ? मैं कहता हूं कि मैं तुम्हारे सारे भेद सबको बता दूंगा।"

"मेरे भेद ?" उसने चौंककर पूछा।

"हां हां ! मैं लोगों को कहूंगा कि यह बड़ा कमीना है। इसने छल से यह मिल मुझसे हड़प ली। इसने अपनी पत्नी को मुझे मोहने के लिए भेजा।"

"भगत ! वह चीखकर बोला "मैं तुम्हें यहां से धक्के मारकर निकाल दूंगा। यह मत भूलो कि इस मिल का मालिक अब मैं हूं मैं !"

बड़े बाबू की आंखों में आग-सी दहक उठी।

'मालिक !" भगत ने इस शब्द को घृणा से दोहराया और उसके भावों से लग रहा था कि वह बड़े बाबू के चेहरे पर थूकनेवाला है। बड़े बाबू उसकी आंखों की तपन नहीं सह सके। वस्तुतः ईमानदारी का अपना एक पृथक तेज होता है। उस तेज को चोर नहीं सह सकता।

"मालिक ! मालिक !" उसने मुट्ठियां बांधते हुए कहा "तुम कुत्ते हो, कुत्ते !"

"भगत !"

"तुम मुझे धक्के मारकर निकाल सकते हो। धक्के नहीं जूते मारकर जलील भी कर सकते हो पर मैं अब चुप नहीं रहूंगा। मैं सब कुछ हारकर अपनी जबान बन्द नहीं करूंगा। मैं हरएक से कहूंगा कि इसने मेरे साथ कितना कमीना और कपटी व्यवहार किया है।" भगत ने दीवार का सहारा ले लिया। उसकी आंखें भर आईं। वह इतना उत्तेजित हो गया था कि उसे सारा कमरा घूमता हुआ लगा।

"तुमने अगर यहां से जलील होकर जाने की ठान ली है तो मैं कुछ भी नहीं

कर सकता। मैं अभी नौकरों को बुलाऊंगा और तुम्हें यहां से धक्के मारकर बाहर निकलवा दूंगा।" बड़े बाबू ने द्वेषपूर्ण भारी स्वर में कहा।

'आज मैं धक्के खाकर ही जाऊंगा। यह बच्चे की तरह मचककर धम् से बैठ गया। उसकी भंगिमा उस आदमी से मिलती थी जो अत्यन्त दुर्बल होने की वजह से मार खाता है और आसपास की भीड़ से सहानुभूति की अपेक्षा करता है। वह जानता था कि दफ्तर के कुछ लोग इकट्ठे होंगे और यह तमाशा देखेंगे और मैं जोर-जोर से चिल्लाऊंगा कि यह धोखेबाज है धोखेबाज! नीच और कमीना है।

कुछ देर तक शांति रही।

भगत दीवार के सहारे सिर लगाकर बैठ गया। तेल का हल्का-सा दाग तुरन्त दीवार पर चमक उठा।

बड़े बाबू पुन: अपने कागजों पर नजर जमाकर इस तरह अपने कार्य में व्यस्त हो गए जैसे कुछ हुआ ही न हो। हालांकि उसका मन किंचित् भी अपने काम में नहीं लग रहा था पर उनका अभिनय अत्यन्त कौशलपूर्ण था। कुछ क्षण तक उन्होंने भगत के बैठे रहने की कुछ परवाह नहीं की। भगत बैठा रहा। उसकी आंखों के आंसू सूखकर गालों पर हल्की लकीरें बना गए थे।

अप्रत्याशित बड़े बाबू ने नौकर को पुकारा और उसपर वक्र दृष्टिपात करके कहा "जब यह यहां से चला जाए तब तुम कमरे को बन्द कर देना। हां, इतना याद रखना कि यह इस मिल का अब कुछ भी नहीं है। यहां एक पत्ते की चीज पर भी इसका कोई अधिकार नहीं है। बस बेचारा घड़ी-दो घड़ी यहां की दीवारों को देखकर सुख पाना चाहता है।"

बड़े बाबू बाहर चले गए।

उनके जाते ही भगत की भंगिमा एकदम कठोर हो गई और उसके दोनों नेत्रों में रक्त की लालिमा चमक उठी।

"ओह! यह कितना दुष्ट है!" भगत ने मन ही मन कहा।

बड़े बाबू वापस भीतर आए और बोले 'अम्पत आए तो कहना कि मैं उसे बाजार में ही मिलूंगा।" और तभी उन्होंने एक उड़ती नजर भगत पर

डाली और दुष्टता से मुस्करा पड़े ।

भगत की काया में आग-सी लग गई ।

वह उठा और बड़े बाबू के पास आया । बड़े बाबू ने मधुर स्वर में कहा "अगर तुम चाहो तो मैं तुम्हें रास्ता दिखा सकता हूं ।"

"मैं इस मिल का रास्ता तुमसे अधिक जानता हूं ।" कहकर वह वहां से चला गया । मिल के मुख्य दरवाजे के आगे वह क्षण-भर के लिए खड़ा रहा । उसने एक बार तमाम मिल को प्यासी-प्यासी नजर से देखा जैसे वह अभी-अभी गांव से लौटा हो और इतनी विशाल इमारत व मशीनों को जीवन में पहली बार देख रहा हो । एक पल उसकी आंखों में विस्मय मिश्रित औत्सुक्य जागा जो शीघ्र ही उन्हीं आंखों में घोर घृणा में बदल गया । उसने कई बार जोर से थूक दिया—थू—थू—थू !

"भगवान ! इस मिल को जलाकर राख कर दे ।" उसने जलते हृदय से ईश्वर से प्रार्थना की जिसमें उसके हृदय की गहरी घृणा ही थी ।

तभी उसे सुनाई पड़ा, "बेचारा सब कुछ हारकर हृदय की शांति खो बैठा है ।" यह बड़े बाबू का कथन था जिसपर भगत ने एक बार और थूका ।

बड़े बाबू ने अपने कमरे से ही परेशानी के स्वर में कहा "अरे सब मर गए क्या ? बच्चा क्यों रो रहा है ?"

नौकर आकर खड़ा हो गया ।

"जाकर देख तो गोपू, वह आया सोना मर गई क्या ? बच्चा इस तरह रो रहा है मानो उसे किसीने तपती रेत पर सुला दिया हो ।" बड़े बाबू का स्वर अन्त में थोड़ा व्यग्र हो गया ।

"आया स्नान करने गई है बड़े बाबू ।"

"बहूजी को जाकर कहो कि वह अपने बेटे को संभाले । मुझे बच्चे का रोना पसन्द नहीं है ।

किधर से और कैसे आता है ? "ये व्यापारिक बातें हैं जो स्त्रियों की समझ में जल्दी नहीं आतीं। स्त्रियों को केवल सुख व समृद्धि का जीवन बिताना चाहिए। उसकी कामना करनी चाहिए। फिर उनके स्नेह, प्यार और ममता में केवल कृत्रिमता है। उनमें स्वाभाविक प्रेम और अपनत्व नहीं। ओह ! वे कितने स्वार्थी और चालाक हैं !

पद्म ने एक करवट बदली।

धाय संतोष को लेकर कमरे में आ गई।

संतोष सिसकियां भर रहा था। उसके निरन्तर अश्रुपात से आंसू भीग गए थे। वह बहुत उदास-उदास-सा नज़र आ रहा था।

"पता नहीं यह बहुत रो रहा है।" धाय ने संतोष को उसके पास बिठाते हुए कहा "घड़ी-भर के लिए यह चुप नहीं रहता।"

पद्म ने करवट बदलते हुए कहा "इसे थोड़ी देर के लिए बाहर घुमा ला, मुझे अभी बुखार है।"

"मां !" उस बच्चे ने कहा जो अब दो-ढाई वर्ष का होने जा रहा था। जब उस बच्चे ने मां कहा तब कमरे के अंधेरे में ममता का अलौकिक वातावरण मालूम हो गया जिसे माधुर्य कह सकते हैं।

"मां ! मैं तुम्हारे पास सोऊंगा।"

पद्म के अन्तस् के तार-तार झनझना दिए हों ऐसा उसे लगा। आखिर यह निर्दोष बच्चा मां की ममता से क्यों वंचित हो रहा है ? इसका क्या कसूर है ? इसने कौन-सा अपराध किया है ? वह अधीर हो उठी और उसने चाहा कि वह इस बच्चे को अपने सीने से लगा ले। पर वह ऐसा सोचती ही रही। वह उसे कार्यान्वित नहीं कर पाई हालांकि अभी वह क्षणिक भावावेश में सम्पूर्ण रूप से यह भूल बैठी थी कि यह बच्चा जगत का है। पर तत्क्षण पीड़ा का एक गहरा धक्का उसे लगा और उसके आगे अन्धेरे के बादल छा गए।

धाय बच्चे को लेकर चलती बनी।

कमरे में गहरा मौन छा गया।

दूसरी नौकरानी रखड़ी जल्दी-जल्दी कमरे में आई और कुर्सी रखने लगी

क्योंकि डाक्टर साहब आ रहे थे।

डाक्टर साहब ने जैसे ही कमरे में प्रवेश किया वैसे ही वधू जोर से खाँसने लगी। खाँसी की खू खू से कमरे का वातावरण अप्रिय और असह्य हो उठा क्योंकि खाँसी के साथ वधू के चेहरे पर दारुण दुःख छा गया। उसकी आँखें लाल हो उठीं और उनमें जबरदस्ती के आँसू भर आए। लगता था—उसके प्राण इस खाँसी के साथ निकल रहे हैं जिससे उसकी आकृति और हँसता हुआ यौवन विकृत हो गया। उसका व्यथा-विकृत मुख सबके लिए असह्य हो गया।

छोटे बाबू आगे और डाक्टर एक कुर्सी पर बैठ गए। कुर्सी पर महीन कारीगरी की हुई थी जो नवाबों की याद दिला रही थी।

छोटे बाबू ने मुआयना किया और कफ को देखा जो एक पीकदान में इकट्ठा था। खून सफेद-पीले कफ में अपना अस्तित्व पृथक रूप से बता रहा था।

डाक्टर भयभीत हो गया।

उसने वधू से पूछा, "शरीर इस तरह हर समय जलता रहता है?"

"हाँ।

"खाँसी कितने रोज से आ रही है?"

वह कुछ कहने के लिए आतुर दीखी पर उसकी भंगिमा से लगा कि उसने उसे बन्द कर लिया है। वह मन ही मन आखिर कह ही उठी 'जब मेरे पति ने मुझे चरित्रहीन होने के लिए विवश किया। मुझे पर-पुरुष के साथ सोने के लिए बहुत ही कलात्मक ढंग से बाध्य किया।' पर प्रकट रूप में वह बोली "बहुत वर्षों से आती है। लगभग दो वर्ष से।"

'और मुझे आपने आज बताया है।'

"मैंने कहाँ बताया है इन लोगों ने आपको बता दिया। मैं किसीको बताना नहीं चाहती थी।" उसने निर्भीकता से कहा।

"इसका मतलब यह है कि आप मुझे अभी भी बताना नहीं चाहती थीं? आप क्या अपने-आपको जानबूझकर मारना चाहती हैं?"

उसकी आँखों में उन्मादित भावनाओं का उल्लास चमक उठा, "काश यह सब आदमी के अपने वश में होता! क्या डाक्टर साहब! आदमी इतना समर्थ

है कि वह अपने-आपको इस तरह मार सकता है कि लोगों को यह पता ही नहीं चले कि उसने आत्महत्या की है ?

डाक्टर हतप्रभ-सा उसे देखने लगा।

रखड़ी ने दो खिड़कियां खोल दी थीं। डाक्टर ने क्षण-भर के लिए पद्म के अद्भुत रूप को देखा। हीमे नयन और शुक-नासिका। क्षण-भर के लिए डाक्टर का मन स्नेहप्लावित करुणा से भर आया और वह उस रूप का इस तरह पान करता रहा जैसे हम मूर्तिकार बालमीर की अनिद्य सुन्दर नारी कलाकृति की अलौकिकता का रसपान करते हैं।

"मुझे प्रकाश भी अच्छा नहीं लगता।" निर्निमेष देखते हुए डाक्टर का ध्यान पद्म ने भंग कर दिया अन्धेरा मुझे असीम शांति देता है। मेरा मन करता है कि मैं इस अन्धेरे में पड़ी रहूं—सोई रहूं। मेरे पास कोई न आए और कोई मुझे तंग न करे। पर यहां हर कोई यह कोशिश करता है कि मुझसे अधिक पूछताछ करके यह साबित करे कि वह मेरी कितनी चिंता-फिक्र रखता है। उन लोगों में थोड़ी भी सहानुभूति नहीं होती है केवल दिखावा होता है। मैं चाहती हूं कि ये सब बिना आवश्यक बात के मेरे पास कभी न आएं !"

डाक्टर एक बार विस्मित हो गया।

"मुझे चैन नहीं है। वह पुन बोली पलभर के लिए भी मुझे गहरी नींद नहीं आती।

'आप जरूरत से ज्यादा सोचने लगी हैं। मैं आपको सलाह दूंगा कि आप अपने मन और तन दोनों को विश्राम दें।"

"लेकिन "

"मैं आपको ठीक कर दूंगा।" डाक्टर के स्वर में सारी सहानुभूति उमड़ पड़ी "यह जरा-सी खांसी है।

डाक्टर चला गया था। जाते-जाते डाक्टर ने कहा था "बड़े बाबू को कहिएगा कि वे मुझसे एक बार चलकर कल मिल लें।"

पद्म कुछ देर तक रखड़ी को देखती रही और फिर यह तेज स्वर में बोली, "खिड़कियां बन्द कर दो।"

कमरे में अन्धेरा छा गया ।

बड़े बाबू रात को बड़ी देर से लौटे । उन्हें एक नई मिल और खरीदनी थी, उसके लिए उन्हें लाखों रुपयों की आवश्यकता थी । इस आवश्यकता की पूर्ति के लिए वे अपनी कई पार्टियों से प्रारंभिक बातचीत कर चुके थे ।

सम्पत के लगातार साथ रहने के कारण वे समझ गए थे कि सम्पत के पास हो न हो दो लाख रुपये नकद अवश्य हैं । उसकी कंजूसी से यह स्पष्ट पता चलता था कि वह एक चतुर व्यापारी है जो पैसों को इस तरह हजम करता है जिस तरह आग की लपलपाती लपटें आहुतियों को । इसलिए बड़े बाबू ने उसे अब पूरे दिन अपने साथ रखा और उसकी भेंट एक ऐसे आदमी से कराई जो अत्यन्त *गरीब था और निर्धनता के वशीभूत होकर वह अपनी बेटियों को बेचता रहता* था । वह आदमी उसीकी जाति का था और समाज से एकदम बहिष्कृत था । उसके साथ न कोई खाना खाता था और न कोई उसके हाथ का पानी पीता था । उस आदमी ने सम्पत की बड़ी तारीफ की थी । तारीफ में उसने यहां तक कहा कि आप राजकुमार-से लगते हैं ।

सम्पत बड़े बाबू से आयु में पांच वर्ष छोटा था । उसका मुख भी आकर्षक नहीं था । इसपर तेल से भीगे हुए पगड़ी के निकले पेंच बड़े ही हास्यास्पद लगते थे ।

बड़े बाबू ने उसका पीछा नहीं छोड़ा और अन्त में उसने शादी के लिए हां भर ली ।

इसके बाद दिन-भर उसे इधर-उधर के बड़े-बड़े सेठों से वे मिलाते रहे । और रात को उसे इस तरह का अहसास कराया जैसे वह बहुत बड़ा आदमी है और बड़े बाबू उसे अपना सगा भाई ही समझते हैं । उसे अपना ही खून मानकर चलते हैं । उसे उन्होंने अपने साथ खाना भी खिलाया । वह गर्व से फूल उठा । इस बड़प्पन में उसने इस राज को प्रकट कर दिया कि उसके पास एक

साल साठ हजार रुपये हैं। बड़े बाबू ने तब उसकी सामंतीकाल के चारणों की तरह बड़ाई की और उसे अपना हेड मुनीम बनाया क्योंकि उन्होंने अपने मामा को कोई भी ऐसी लिफ्ट नहीं दी जिससे उसका सिर सातवें आसमान पर चढ़ जाए। वे जानते थे कि घर के किसी भी आदमी को थोड़ा भी सिर चढ़ाने से वह स्वयं निरंकुश होकर हुक्म करने लगता है।

बड़े बाबू के द्वारा इतनी प्रतिष्ठा पाकर वह फूला नहीं समाया और उसने तुरन्त डेढ़ लाख रुपये बड़े बाबू को दे दिए।

उस रात बड़े बाबू बड़े ही आराम से सोए।

सुबह हो गई।

मिसेज ने सात का घंटा बजाया। सूर्य की नाचती हुई किरणें ऊंची-ऊंची बाड़ियों के ऊपरी मंजिलों को चूम रही थीं। बड़े बाबू के निकटवर्ती बंगाली राजा की बाड़ी से सितार की मादक ध्वनि आने लगी थी।

वह सितार की अमृतमयी ध्वनि-लहरें पद्म के आत्मलोक में असीम शांति प्रदान करती थीं। वह दत्तचित्त होकर उसे सुना करती थी। वह कुछ क्षण के लिए यह भूल जाती थी कि वह पूजा कर रही है। वही सर्वत्र शाश्वत संगीत लहरी और उसकी तन्मयता।

तभी बड़े बाबू ने कमरे में प्रवेश किया। उनके साथ रखड़ी थी। रखड़ी सिर झुकाए खड़ी थी।

"तुमने फिर स्नान कर लिया ?" बड़े बाबू ने पूछा।

"स्नान किए बिना मुझे कुछ भी अच्छा नहीं लगता।"

"लेकिन तुम्हें बुखार आ रहा है।"

"बुखार आया है तो चला भी जाएगा।"

"लेकिन तुम्हें ?" बड़े बाबू चुप हो गए, "तुम आखिर चाहती क्या हो ? इस तरह अपने को सताने से तुम्हें क्या मिलेगा ?"

वह अपने पूजा के मीनाबाजी के चित्र पर दृष्टि जमाकर बोली "मैं किसीको भी नहीं सताती। हर कोई मुझे सताता है। मैं इस एक कोने में शांति और संतोष से पड़ी रहती हूं और तुम सभी लोग मुझे परेशान करते रहते हो। बरा-

सी खांसी आ गई तो तूफान, ज़रा-सा शरीर जला तो तूफान। मैं आप लोगों को पूछती हूं कि छोटी-छोटी बातों को आप इतना महत्त्व क्यों देते हैं ?" वह उत्तेजित हो गई और उसका अंग-अंग कांपने लगा।

बड़े बाबू किसी तरह को छुपाकर क्रोध-भरे स्वर में बोले "तुम अपनी आत्मपीड़ा में औरों को क्यों भागी बनाती हो। प्राणी को इस तरह रिस-रिसकर मरने से अच्छा है कि वह एकदम मर जाए।"

"आप जहर लाकर दे दीजिए। मैं उसे खुशी-खुशी खा लूंगी।"

"संतोष की मां! बड़े बाबू चीख पड़े। रजनी के मन में उस डांट से सन्नाटा छा गया।

"मुझे अपनी हालत पर छोड़ दीजिए। मैं बहुत सुखी हूं। मुझे किसी तरह की तकलीफ नहीं है। मैं आनन्दित हूं, आनन्दित।" कहते-कहते उसकी आंखें भर आईं।

"फिर मरती रहो।" कहकर बड़े बाबू बाहर चले गए।

वे अभी गुसलखाने में पहुंचे भी नहीं थे कि नौकर ने आकर कहा "तार आया है।"

"किसका है ?"

"मां—।"

"ओह! मैं भी कैसा आदमी हूं।" कहकर उन्होंने तार खोलकर पढ़ा। "मां आ रही है—कल सुबह। बड़े बाबू का मुंह उतर गया। उन्होंने तार नौकर को संभलवा दिया। वे अत्यन्त निरुत्साहित हो उठे थे।

मां आएगी। उनसे दस-बीस हजार रुपये मांगेगी। उनकी बातें जानना चाहेगी। तब उन्हें अमृत की मां की याद आ गई। सचमुच जब पैसों का सवाल आता है तब अपने से अपने आदमी पराए हो जाते हैं। पर वे अपनी मां को दो-चार हजार से अधिक रुपये नहीं देंगे।

स्नान वे कर चुके थे। बाहर आए। वे किसी मंत्र का जप कर रहे थे।

सम्पत बाहर बैठा ही था। उसे देखते ही बड़े बाबू विहंसकर बोले "क्या आप गगन से मिले थे ?" बड़े बाबू अब उसे आदर से सम्बोधित करते थे।

एक सम्पूर्ण रात्रि में बड़े बाबू के व्यवहार में बहुत अन्तर आ गया।

"मुझे पचीस हजार रुपये वापस चाहिएं।" उसने इस तरह कहा जैसे वह देर से ऐसा सोच रहा हो। जैसे वह प्राथमिक कक्षा में पढ़नेवाले छात्र की तरह इस वाक्य को बहुत देर से मन ही मन दुहरा रहा हो ताकि वह परीक्षक के समक्ष एकाएक भूल न जाए।

"क्यों?" बड़े बाबू की भृकुटी तन गई।

"मुझे अपनी बेटी को देना है। मैंने उसे वचन दे रखा है।"

उसका इतना कहना था कि बड़े बाबू एकदम घूमकर बोले, "तो क्या तुम मेरी प्रतिष्ठा भरे बाजार समाप्त करना चाहते हो? मैं वे सारे रुपये अभी-अभी सेठ धिखारचंद को देकर आया हूं। अभी वे रुपये किसी शर्त में भी वापस नहीं आ सकते।"

"आप अपने पास..."

बीच में ही बड़े बाबू बात छोड़कर बोले, "तुम्हें कदाचित् पता नहीं है कि मैं अभी कितनी तंगी में गुजर रहा हूं। मैं तुम्हें..." एकदम रुककर, "मैं आपसे क्या कहूं मेरे भाई, मैंने अभी दो-तीन दलालों को दो रुपये सैकड़े ब्याज पर रुपये लाने के लिए भेजा है। आप निश्चिन्त रहिए। रुपये आते ही मैं आपको दे दूंगा।"

सम्पत ने मन ही मन कहा, "भड़कने से कुछ भी लाभ नहीं होगा। वह रुपयों को छोटी-छोटी मछलियों की तरह खानेवाला विशाल मगरमच्छ है।" अतः वह मुस्कराकर बोला, "कोई बात नहीं है, जब आपके पास आ जाएं तो मुझे दे दीजिए। मैंने अपनी बेटी को पचीस हजार देने का वचन दे रखा है। कल रात मैं यह बताना आपको भूल गया था।"

"कह दिया न, आप निश्चिंत रहिए।" बड़े बाबू ने गम्भीर होकर कहा, "अगर मेरी इज्जत का प्रश्न नहीं होता तो मैं आपके रुपये अभी लौटा देता पर मुझे विश्वास है कि आप ऐसा कदापि नहीं चाहेंगे। हर मनुष्य अपने से ही पनाह पाता है।"

"अरे नहीं, नहीं, आप इतनी चिंता न करिए।" आखिर सम्पत भी इन्सान

था। उसकी वकालत की बुद्धि तुरन्त स्थिति को समझ गई।

पर उसकी अन्तरात्मा में कांटे-से चुभे जैसे वह धीमे-धीमे कह रही हो कि तुम्हारे रुपयों को खतरा हो गया है। इस विचार-मात्र से उसकी रग-रग कांप उठी। मन में शून्यता-सी छा गई। वह कुछ क्षण निश्चल-सा बैठा रहा।

"मैं अभी पूजन करके आता हूं।" कहकर बड़े बाबू मन्दिर की ओर चले गए।

सम्पत टूटे हुए प्राणी की तरह बाहर चला गया। उसके भीतर का वकील दंभ में अपने विवेक को खोकर चोट खा चुका था।

वे अभी पूजन कर ही रहे थे कि रमली हांफती-हांफती आई, "बड़े बाबू, बड़े बाबू!"

"क्या है?"

"बहूजी को उल्टी (कै) हो गई है।"

"अमृतधारा की खुराक दे दो। नीचे से पान लाकर खिला दो।"

"खून की ।

"खून की उल्टी? क्या कहती हो? जल्दी से डाक्टर को बुलाओ।" बड़े बाबू ने माला को फेंका और घबराए हुए से वे पद्म के कमरे में आए। लाल खून बिस्तरे के पास बिखरा पड़ा था। पद्म निढाल-सी पड़ी थी। वह एकदम मुरझा गई थी।

रमली ने उस बिखरे खून पर मिट्टी डाल दी।

बड़े बाबू ने आत्मीयता से पद्म के सिर पर हाथ फेरते हुए कहा "कैसी तबियत है?"

उसने कोई उत्तर नहीं दिया। थोड़ी देर में उसने सूनी-सूनी नजर से बड़े बाबू को देखा।

"कैसी हो संतोष की मां?"

उसकी आंखों में घृणा की हल्की छाया तैर उठी। वह मन ही मन बोली, "मैं दुखिया हूं। मुझे अपने-आपसे घृणा है। मैं पतिता हूं।

"मैंने तुम्हें पहले ही कहा था न अपने-आपपर जुल्म न करो। अपने-

आपको मत सताओ। देखो, तुम्हारा चेहरा कितना पीला पड़ गया है? इस तरह के चेहरे को देखकर मुझे भय लगता है।"

डाक्टर आ गया था।

उसने आते ही एक इन्जेक्शन पद्म को लगाया। फिर उसने बड़े बाबू से गुफ्तगू की।

"वे एक बार एक्सरे करा लेती तो अच्छा रहता।" डाक्टर ने कहा।

"वह नहीं कराएगी। बड़ी जिद्दी है।"

"जैसी इनकी मर्जी।"

और डाक्टर चल पड़ा।

दिन भर पद्म पड़ी रही। शाम तक उसमें शक्ति आ गई थी। हालांकि डाक्टर ने उसे सम्पूर्ण रूप से विश्राम करने के लिए कहा था पर बड़े बाबू की अनुपस्थिति ने उसे एकदम स्वतन्त्र कर दिया और वह पुनः इधर-उधर के कामों में व्यस्त हो गई।

डाक्टर फिर आया। उसने पद्म को काम में व्यस्त देखा तो स्नेहिल क्रोध से बोला "यह आप क्या कर रही हैं? आपको कुछ भी काम नहीं करना चाहिए।

वह सूखी मुस्कान के साथ बोली "काम करने से आदमी थोड़े ही मरता है। प्रायः निकम्मे आदमी जल्दी मरते हैं।"

सौंदर्य के प्रति मनुष्य में स्वाभाविक आसक्ति होती है।

डाक्टर ने उसे सहारा देकर सुलाया और उसके इन्जेक्शन लगाते हुए बोला "मैं नहीं चाहता कि आप-अपनेको इस तरह सताएं। आत्महत्या भी महापाप होता है।"

"पर उस महापाप का फल इहलोक में नहीं भोगना पड़ेगा। मैं क्या करूँ डाक्टर साहब मैं दुख-दर्द की घटनाओं को भूल नहीं सकती। मैं एक दुर्बल और धार्मिक विचारों की स्त्री हूं। मुझे किसीपर भी क्रोध सहन नहीं होती। मैं किसी भी तरह के पाप को नहीं सह सकती।"

"लेकिन पाप के प्रायश्चित्त और पर-दुःख-हरण के लिए शारीरिक शक्ति

ो अत्यन्त आवश्यकता है।"

"तो क्या मैं आपको कमजोर दिख रही हूं ?"

"इसके लिए मेरा मौन रहना ही उत्तम है।"

"आज मैंने अपने-आपको दर्पण में देखा था। मुझे लगा कि मैं बिलकुल दुरुस्त हूं। केवल मेरे चेहरे पर काली छायाएं मालूम हैं।"

"नहीं-नहीं आपका चेहरा अत्यन्त सुन्दर है।" कहते-कहते डाक्टर की निगाहें झुक गईं। संकोच उसके चेहरे पर तैर उठा।

"छोटे बाबू! आप डाक्टर हैं। आपको जीवन के उन पहलुओं पर तनिक भी दिलचस्पी नहीं है जो अन्तर्मन से सम्बन्ध रखते हैं जैसे मनुष्य के मन की ग्लानि की भावना। क्या ग्लानि की भावना इतनी सहजता से मिटाई जा सकती है? मैं समझती हूं—यह असंभव है। एक धार्मिक और ईश्वर में अगाध श्रद्धा और विश्वास रखनेवाली स्त्री अपने अपराधों को कदापि नहीं भूल सकती। वह उनको याद कर-करके ग्लानि के मारे मर जाएगी।" कहकर वह बहुत जोर से खांसने लगी।

डाक्टर ने उसकी पीठ पर हाथ फेरा। वह मन ही मन सोचता रहा "इसे तन के रोग से अधिक मन का रोग है। मन के ही रोग ने इसके तन को अस्वस्थ बना दिया। आह! इसका अभी भी कैसा अपूर्व सौन्दर्य है? इस तरह की बीमारी के बाद भी इसका रूप सूर्य की भांति चमक रहा है और—?" वासना के आवेग में उसने रूप के रूप की अधिक प्रशंसा कर दी।

डाक्टर ने अपने-आपको झटका दिया जैसे वह कर्तव्यच्युत हो रहा हो। उसने जल्दी से अपना बैग संभाला और चल पड़ा।

रूप शांति से कुछ देर तक पड़ी रही। उसने अपने पास से सबको हटा दिया और कमरे की खिड़कियां और बत्तियां बन्द करवा दीं। उस मौन तिमिर में वह अकेली पड़ी रही। वह ईश्वर से प्रार्थना करती रही कि वह आस्तिक है और चाहती है कि उसे इसी जन्म में अपने पापों का कठोर से कठोर दंड दे दिया जाए ताकि उसे ईश्वर के समक्ष लज्जित नहीं होना पड़े। वह ईश्वर के समक्ष बड़े सम्मान से जाना चाहती है। ताकि ईश्वर उसके समस्त अपराधों को भूल

जाए और उसे अपने चरणों में स्थान दे दे। उसने सब कुछ पति की आज्ञा से किया है। पत्नी के लिए पति की आज्ञा ही सर्वोपरि है। यह ? पर किसी भी पत्नी को पति के गलत इरादों को सम्पूर्ण करने में सहयोग नहीं करना चाहिए। उसे प्राण दे देने चाहिएं पर अपना धर्म नहीं देना चाहिए। इस विचार से वह पुनः अपनी आत्मा के संताप में जलने लगी और उसके नेत्र अच्छी तरह आंसुओं में भीग गए।

वह एकदम उठी। उसने अपनी माला निकाली और आसन बिछाकर भजन करने बैठी—'प्रभु के भजन के कारण ही मुझे मुक्ति मिलेगी।' वह माला जपती रही, जपती रही।

मां आ गई।

बड़े बाबू स्टेशन पर उसकी अगवानी करने नहीं जा सके। सवेरे-सवेरे ही दो व्यापारी आ गए थे। राजस्थान के एक महन्त का भी ट्रक आया था। महन्तजी भी उनसे मिलना चाहते थे।

मां को यह बुरा लगा। उसके अहम् पर आघात लगा और वह आते ही व्यथित स्वर में भाषण दे बैठी "तुम बड़े आदमी बन गए हो। बड़े आदमी छोटों को क्या अपनों को भी भूल जाते हैं। अपनों को ही नहीं अपनी मां को भी भूल जाते हैं। उस मां को जिसने तुझे नौ माह पेट में रखकर उसका पोषण किया। तुमको सूखे बिस्तर पर सुलाकर खुद गीले पर सोई। जिसे अनेकानेक कष्ट झेलकर खिलाया-पढ़ाया। उस मां को तुम स्टेशन लेने नहीं आ सकते?"

"मांजी!" वे दुःख-मिश्रित व्यग्रता से बोले "आप समझतीं क्यों नहीं? इतने बड़े व्यापार को संभालने के लिए मैं अकेला आदमी ठहरा। दिन भर क्या कभी-कभी रात-भर उसको संभालने की चिंता में व्यस्त रहता हूं। आप मेरी कठिनाइयों को समझने की चेष्टा कीजिए।"

"भगवान तुम्हें दिन दूनी रात चौगुनी माया दे पर उस माया के पर्दे में

अपने कर्तव्य भूलना ठीक नहीं है। मां चौंककर बोली "तुमने मेरी बहू का यह हाल कर दिया है ? मैं उसे स्टेशन पर पहचान भी न सकी। उसे बुखार भी था। जब उसने मेरे चरण-स्पर्श किए तब मुझे लगा—दो जलती हुई सलाखें मुझसे छू गई हैं। शायद तुम उसकी देखभाल नहीं करते हो।"

"लेकिन तुम्हारी बहू बड़ी जिद्दी है। अब तुम आ गई हो खुद देख लोगी। मैं अभी चलता हूं। तुम स्नान करके पाठ-पूजा करो।"

बड़े बाबू हठात् चले गए। मां उसे देखती रह गई। बरसों के बाद वह उनसे मिली थी। उसकी इच्छा थी कि वह कुछ देर तक अपने बेटे से बातचीत करे और यह मालूम करे कि वह क्या करता है। लोग उसे पचास लाख की आसामी समझते हैं। पर बड़े बाबू ने उसे मौका ही नहीं दिया। वे हवा के झोंके की तरह चलते बने। मां कहते से रह गई। पर वह एक चतुर सेठानी थी। उसने अदम्य संयम व दूरदर्शिता से काम लिया और नाटक की अभिनेत्री की तरह अपने अन्तस् के भावों को चतुराई से छुपाकर वह उल्लास-भरे स्वर में बोली "मेरा बेटा करोड़पति बनेगा।"

पद्म को इस वाक्य की कृत्रिमता का भान हो गया और वह मुस्करा पड़ी। मन ही मन बोली "अब तुम्हारा वह कल्लू नहीं है जिसका गला मां-मां कहते सूखता था। अब वह बड़ा आदमी बन गया है।'

मां पद्म के पास गई। कोमल स्वर में चिन्ता करती हुई वह बोली "तुम क्या थी और क्या बन गई हो ? सूरज का दीया बन गई हो। दिन के उजाले से रात की कालिमा बन गई हो और हां तुम स्टेशन क्यों आई थी ? तुम बुखार में अब भी जल रही हो।"

पद्म ने खिसियाकर कहा "नहीं मांजी मुझे बुखार नहीं है। शरीर की कुछ ऐसी तासीर बन गई है कि वह हर घड़ी जलता रहता है।"

रानी ने अपनी जानकारी का परिचय दिया "मांजी इन्हें खांसी भी आती है।

"खांसी भी आती है ?" मां की आंखें विस्फारित हो गई।

"और खांसी के साथ खून भी आता है।"

माँ स्तब्ध ।

"खून ही नहीं मुझे टी० बी० है टी० बी ।" वह जैसे अपने-आपसे विद्रोह करती हुई बोली ।

वहराके पहाड़ टूट पड़ा हो—ऐसा जोर का धमाका हुआ माँ के मन में । वह विमूढ़ बन गई ।

थोड़ी देर बाद वह बड़ी कठिनता से बोली "तुम्हें टी०बी० है ?

"हाँ मांजी ! मुझे टी०बी० है । खांसी के साथ खून और खून के साथ छीने में दर्द । हर घड़ी बुखार । मांजी ! आपको चाहिए कि आप मुझसे दूर रहें । मैं नहीं चाहती कि यह रोग आप सबको परेशान करे और आपका खानदान इस रोग में तबाह हो जाए ।"

मांजी को विश्वास नहीं हुआ । वह जलती हुई दृष्टि से देखकर बोली, "यह नहीं हो सकता । ऐसी गुणवती और सती बहू को यह रोग नहीं हो सकता । तुम मुझे भयभीत करना चाहती हो । तुम झूठी बातों से मुझे आतंकित करके थोड़ी देर के लिए परेशान करना चाहती हो । बहू ! तुम्हें मेरी सौगंध है । कहो मुझे टी० बी० नहीं है । बोलो बोलो ।"

"आप अपने बेटे से पूछ सकती हैं । कहकर पद्म स्नान करने के लिए चल पड़ी । मांजी ने उसे रोका "तुम्हें बुखार आ रहा है ।"

"नहीं मांजी यह मेरे शरीर की तासीर है ।"

"लेकिन मैं तुम्हें स्नान नहीं करने दूंगी । तुम्हें मेरी सौगंध है ।"

पद्म वापस बिस्तरे पर आकर सो गई ।

"आपकी आज्ञा सिर-आंखों पर है । उसने आंखें बंद करके कहा, "अब आप सब जा सकती हैं । मांजी ! आप मेरे ठाकुरजी की सेवा कर लीजिएगा । स्नान के साथ ही मेरा सेवाव्रत चलता है स्नान नहीं तो प्रभु की सेवा भी नहीं ।"

टी बी० का नाम सुनकर सारे परवाल आतंकित हो गए । बेचारी रमकी का बुरा हाल था । उसने तुरंत यह निर्णय कर लिया कि वह नहीं और जगह नौकरी कर लेगी । वह यहां अब एक क्षण-भर के लिए भी नहीं रहेगी । बाप रे !

टी० बी० जैसा मरीज आज तक नहीं बचा है।

वह अत्यंत क्षुब्ध हो उठी जिसकी वजह से उसके हाथ से चीनी का एक बर्तन टूट गया। उसने दवा में जरूरत से ज्यादा पानी मिला दिया और जब वह मंदिर दर्शन करने गई तब उसने न चाहते हुए भी इस रोग की बात अपनी कई सहेलियों को कह दी।

उसकी सहेलियों की आकृति पर किसी तरह के असाधारण भाव नहीं आए।

"तुम लोगों को मेरी बात से अचरज नहीं होता?"

"नहीं।"

"क्यों?"

"क्यों क्या? जो जैसा करेगा वह वैसा ही पाएगा।

"मैं तुम लोगों का मतलब नहीं समझी।"

"तुम भोली हो।" एक ने कहा।

दूसरी ने उसकी बात को बीच में ही काट दिया "यह भोली नहीं मजाक की गोली है पर इस बेचारी के इतना काम रहता है कि इसे काम के अतिरिक्त अन्य बातों के लिए सोचने का समय ही नहीं मिलता।"

"यह बात एक हद तक ठीक है।" रसड़ी ने उसकी बात की पुष्टि की "पर मैं उस रहस्य को जानना चाहती हूं।"

"बात यह है बहिन! हमने सुना है।" उस स्त्री ने अपना बचाव किया "ईश्वर जाने यह सही है या झूठ। पर होगी सही ही क्योंकि बिना कुछ किए हुए किसी की कोई बात नहीं बनती।" उसने एक लंबी सांस ली "हमने सुना है, पहले यह सेठ अमृत से फंसी हुई थी। यह भी सुनने में आया है कि वह लक्ष्मी मिल पद में ही सेठ से धोखे से लिखवा ली थी।"

"नहीं। ऐसा नहीं हो सकता।" रसड़ी ने विश्वास के साथ कहा "तुम बकवास करती हो। मैं इसे नहीं मानती। वह बहू ऐसा कभी नहीं करती। वह सचमुच देवी है। उसके चेहरे पर छिनालों जैसी धृष्टता और निर्लज्जता का चिह्न भी नहीं है।" उसकी सांस फूल गई। वह कुछ उत्तेजित भी हो गई।

"तुम्हें इन सब बातों के लिए सोचने का समय ही नहीं मिलता। हम तुम्हें सच्ची बातें ही बता रही हैं। पहले-पहल भवतबाबू ने उसे अपने ही बंगले में रखा था। क्या तुम्हें यह मालूम नहीं है ?"

"नहीं।"

"फिर तुम्हें कुछ भी मालूम नहीं है।"

"लेकिन तुम सभी तो सदा उसकी प्रशंसा करती रही हो।"

"प्रशंसा करना दूसरी बात है। हर पैसेवाले की निंदा उसके मुंह पर नहीं होती। उसके मातहत प्रायः गरीब और स्वार्थी लोग प्रायः सेठों की तारीफ ही किया करते हैं। क्योंकि हम जैसी स्त्रियों का जीवन-निर्वाह का आधार सेठिया-परिवार ही है।"

"राम राम! तुम लोग कितनी हेठी मनोवृत्ति की हो!"

उसकी सहेली विद्रूप हंसी हंसकर बोली, "तुम मेरी मालकिन हो तुम्हें सब कुछ कहने का अधिकार है। पर मेरे कहने के मर्म की सत्यता से तुम इंकार नहीं कर सकती। क्या एक गरीब स्वार्थी नौकर अपने सेठ की, चाहे वह महा नीच क्यों न हो, निंदा कर सकता है ?"

" ।" रजनी उसे देखती रही।

"अब तुम्हें ही ले लें क्या तुम अपनी बहूजी से पूछ सकती हो कि आपके बारे में इतनी बड़ी बातें लोग क्यों करते हैं ?"

"मैं उन्हें जाकर पूछूंगी।" उसने अपनी गर्दन को हिलाकर गंभीर स्वर में कहा।

वे सब सहेलियां एक साथ हंस पड़ीं।

"तुम्हें विश्वास नहीं होता ?"

"तुम दुनिया से न्यारी नहीं हो रजनी।"

"यदि यह इस तरह की चालिन है तो मैं यहां एक घड़ी भी नहीं रहूंगी। मैं अधर्म का साया अपने पर क्यों पड़ने दूं ? कहीं और नौकरी कर लूंगी।" कहकर वह तत्परता से गरदन उठाती हुई चल पड़ी।

बड़े बाबू लौट आए थे। वे भाभी से बड़े चित्त-मन से बातचीत कर रहे

ते। रज्जी इस बार पद्म के कमरे में गई तब उसके नाक के आगे पल्ला लगा हुआ था।

पद्म ने उसे कुछ नहीं कहा। वह नेत्र मूंदे पड़ी रही।

वह उसे सोई जानकर वापस चली आई।

बड़े बाबू के कमरे के आगे खड़ी हो गई।

बड़े बाबू कह रहे थे "मैं चाहता हूं कि तुम उसे देश में लाओ। देश में उसे शांति ही मिलेगी और मुझे भी।

'तुम्हें मेरी सौगंध है अगर तुम झूठ बोले तो क्या इसे टी० बी० है?"

'हां।

"हे राम!" उसकी आंखें फट गईं।

"इसमें घबराने की क्या बात है? मैं चाहता हूं यहां तुम उसे किसी शहर के बाहर रख देना। डाक्टर कहता था कि यह ठीक होना नहीं चाहती है। दंभ से न इलाज कराती है और न दवा लेती है। और हां मैं आज आसाम जा रहा हूं।"

मैं यहां आई हूं और तुम आसाम जा रहे हो? विस्मित-सी मां बोली।

"काम सर्वप्रथम है मां क्या तुम चाहती हो कि तुम्हारे बेटे के किए कराए कामों पर पानी फिर जाए। जहां तक मैं जानता हूं वहां तक कोई भी समझदार मां ऐसा नहीं चाहेगी। सच्ची मां वही है जो अपने बेटे के लिए ज्यादा से ज्यादा सहूलियतें पैदा करे।

मां चुप हो गई। बेटे ने उसे चतुराई से पराजय दे दी। इसके अतिरिक्त बड़े बाबू मां के चरण-स्पर्श करके परिहास से बोले 'मां! मैं चाहूंगा कि तुम बुरा नहीं मानोगी। मुझे एक मिल और खरीदनी है और उसके लिए मुझे लगभग बीस लाख रुपये चाहिएं। मैं चाहता हूं अपने दबदबे का लाभ उठाकर ये बीस लाख रुपये बाजार से खींच लूं।"

"मेरा तुम्हें आशीर्वाद है कि तुम खूब उन्नति करो।"

मां का उत्तर सुन बिना ही वे हवा की तरह अपने कमरे की ओर चले। तभी रज्जी ने कहा, "सम्पत बाबू आए हैं।"

बड़े बाबू सीधे बैठक में गए और मुस्कराकर बोले "आप मुझसे फिर मिल लें। अभी मैं ज़रा बाहर जा रहा हूं। और उसका उत्तर सुने बिना ही वे भीतर आ गए।

'मेरे रुपये गए।' उसने हठात् अपने-आपसे कहा 'अरे इसका व्यवहार ही बदल गया है। पहले यह मुझसे बिना काम के दो चार मिनट बातें करता था। कोई विषय नहीं होता तो वह बनाने की चेष्टा करता था पर अब"' ?

सम्पत का मुंह उतर गया। वह बेचारा अपना-सा मुंह लेकर चलने लगा। उसे लग रहा था कि उसका अंग-अंग निर्जीव हो रहा है।

'मैं दलाल हूं। सबसे रुपये ऐंठता हूं पर इसने मुझे' ? नहीं मैं इसको ठीक कर दूंगा। कभी किसी सौदे मे सारे के सारे रुपये लेकर उड़ जाऊंगा। उसकी आंखों में प्रतिहिंसा चमक उठी। निर्जीव होते हुए अंगों में पुनः प्राणों का संचार हुआ।

बड़े बाबू बाहर जा रहे थे। जाने के पहले वे एक बार मां से फिर मिले। उससे प्रार्थना की कि तुम्हें जितने रुपयों की आवश्यकता हो उतने तुम मामाजी से ले लेना और बहू को ले जाने की कोशिश करना।

"पर मैं मथुरा जाऊंगी।

'तुम अपनी बहू को तीर्थ-यात्रा क्यों नहीं करा देतीं ? मैंने सुना है कि पुण्य और तीर्थों के दर्शनों से जन्म-जन्म के रोग छूट जाते हैं।"

"मैं उसे कहूंगी।"

वे भावुकता से बोले "मां ! मैं समझता हूं कि मां की सेवा से बढ़कर कोई दूसरी सेवा नहीं है। श्रवणकुमार मां-बाप की सेवा करके भव-बन्धनों से तर गया। मैं ईश्वर से प्रार्थना करूंगा कि मुझे शीघ्र ही ऐसा मौका दे ताकि मैं भी कुछ ऐसा ही पुण्य अर्जित कर सकूं। मैं आपकी कसम के साथ कहता हूं कि मैं पैसों के खर्च के भय से या किसी दुर्भावना की वजह से ऐसा नहीं कर रहा हूं, इसमें मेरी विवशता है परवशता है। मुझे आशा है मां तुम मुझे क्षमा कर दोगी।"

मां विह्वल हो उठी। वह गद्गद स्वर में बोली "मुझे तुम इतनी स्वार्थी

और बुरी नीयत की समझ रहे हो कि मैं तुम्हारा अहित चाहूंगी ? मैं ऐसी मां नहीं हूं। मैं बर्षों के बाद यहां आई हूं और अगर तुम मेरी परीक्षा लेना चाहो तो मैं तुम्हारा इन्तजार भी कर सकती हूं। मैं दस-पन्द्रह दिन के बाद भी जा सकती हूं।

"नहीं नहीं तुम अभी जा सकती हो। मैं इधर एक-दो माह अत्यन्त व्यस्त रहूंगा। मुझे जरा भी फुर्सत नहीं रहेगी। और फिर मैं अगले महीने देश भी आऊंगा।"

"सच कहते हो ? खाओ मेरी सौगन्ध कि मैं देश आऊंगा।"

"अच्छा सौगन्ध खाता हूं।" बड़े बाबू ने अत्यन्त सहज ढंग से कहा।

बड़े बाबू पद्म के पास गए।

"अन्धेरा ! तुम उजाला क्यों नहीं करतीं ?" बड़े बाबू नवाबी खाट की कुर्सी पर बैठते हुए बोले।

"मुझे अन्धेरा पसंद है।"

"जैसी तुम्हारी मर्जी।" उन्होंने हाथ का संकेत करते कहा "मैं किसीको किसीके लिए विवश नहीं करता। और हां मैं आज आसाम जा रहा हूं। मेरी इच्छा है कि तुम मां के साथ देश चली जाओ। वहां तुम्हें आराम रहेगा।"

वह खोखली हंसी हंस पड़ी "मैं नहीं रहना चाहती हूं। मैं जानती हूं कि मुझे भयानक रोग लग गया है। मुझसे सब डरते और कतराते हैं। मैं खुश हूं कि मुझे यह रोग लग गया जो मेरे स्वभाव के अनुकूल है। मैं ईश्वर को धन्यवाद देती हूं कि इस रोग के कारण मुझे आप लोग अधिक तंग नहीं करेंगे।"

"सचमुच तुम मुझे परेशान करने लगी हो।"

"मैं किसीको परेशान नहीं करती हूं।"

"फिर तुम हरदम ऊटपटांग बातें क्यों सोचती हो ?" बड़े बाबू थोड़े चकित हो उठे, "मैं चाहता हूं कि तुम खुश रहो। इस रोग की मुक्ति का सम्बन्ध व्यक्ति के मन की प्रसन्नता से अधिक है।"

"अब आपको कैसे समझाऊं कि मैं प्रसन्न नहीं हूं ? मुझे टी॰ बी॰ है। यह

भी ठीक है कि इस रोग का रोगी निश्चित रूप से मरता है। मृत्यु के अत्यन्त करीब पहुंचकर कौन-सा ऐसा प्राणी होगा जो कुछ रहना नहीं चाहेगा ?"

"मैं तुमसे प्रार्थना करता हूं कि तुम बाहर घूमा-फिरा करो।"

नहीं। मुझे अपना घर ही पसंद है। उसने आंखें मिचमिचाकर कहा, "जब अपने घर से मैंने विदाई ली थी तब पता नहीं किसने कहा था 'बेटी की डोली घर से विदा होती है और अर्थी ससुराल से निकलती है।' यह भावना-भरी बातें हैं। आज के कुछ लोग इस प्रलाप से अधिक कुछ भी महत्त्व नहीं देते हैं। पर इसमें दुखियारी दुल्हन के लिए एक कटु आदेश है वह आदेश है—जब तुमपर कोई जुल्म करे तब तुम अपनी ही पीड़ा में स्वयं को भस्म कर देना ताकि तुम्हारी मृत्यु अपयश और अपकीर्ति के गंदे वातावरण से दूषित न हो। तुम्हारा यह समाज एकदम दकियानूसी है। यह नारी के हर नये विद्रोह और सत्य को उसकी नीच प्रवृत्ति की संज्ञा देकर उसे सार्वजनिक रूप से अपमानित करता है और उसे लोक-निंदा का शिकार बना देता है। उसकी आकांक्षाओं एवं इच्छाओं को अपने पांवों से रौंदकर उसे एक गुमनाम का जीवन बिताने के लिए विवश करता है। ऐसी स्थिति में स्त्री का ससुराल के घर में मरना ही श्रेष्ठ रहता है।"

"मैं तुम्हारी बातें नहीं समझ सकता। उन्होंने उपेक्षा से कहा।

"आप अभिनय-प्रवीण हैं। आप सिर्फ अपने ही मतलब की बातें समझते हैं। अगर मैं रुपयों की बातें करती तो आप तुरन्त चौकन्ने होकर मुझसे बातचीत करते पर इसके अतिरिक्त न आपको कुछ पसंद है और न कुछ आपकी समझ में आता है।"

"क्या तुम मां के साथ देश जाओगी ? उसने खिड़की खोलकर बाहर पूछा 'वहां तुम्हें आराम मिलेगा।"

"मैं यहीं रहना चाहती हूं। जब आप हुक्म देंगे तब मुझे जाना ही पड़ेगा। पति-आज्ञा सर्वोपरि। पर मैं यहीं पर रहना अधिक पसंद करूंगी।"

"जैसी तुम्हारी मर्जी।"—"और हां मैं आज आसाम जा रहा हूं। तुम दवा बराबर लेती रहना। तुम्हें मेरी कसम है।

पद्म को जोर की खांसी आ गई थी। इतनी भयानक खांसी थी कि वह अपने पति की सौगन्ध भी नहीं सुन सकी। बड़े बाबू कांप उठे। उन्हें लगा कि किसी क्षण इस भयानक खांसी के साथ इसके प्राणों की शाश्वत लड़ टूट जाएगी। वे जल्दी से बाहर आये और उन्होंने छोटे बाबू के यहां आदमी भेजा।

डाक्टर तुरन्त आया और दवा देकर कहा "इन्हें आप आराम करने दीजिए।"

पद्म उस समय डाक्टर से बातचीत नहीं कर सकी। वह सोती रही। उसकी आंखें बन्द थीं। डाक्टर मन ही मन कह उठा "इसे आखिर कौन-सी पीड़ा है? कौन-सा दुख है? यह सही है कि इसके पीछे कोई रहस्य छिपा हुआ है। यह अपने अन्तस् का मर्म किसीको कह नहीं पाती है जिससे यह मन ही मन घुल रही है अपने को गला रही है।"

वह इसी तरह के अनेक विचारों में उलझता हुआ बाहर चला गया। बड़े बाबू को उसने कहा "आप इनके लिए एक विशेष नर्स की नियुक्ति करवा दें तो उत्तम रहेगा। सर्व साधारण में इस रोग के बारे में एक भयपूर्ण पूर्वाग्रह है। आपकी कोई भी दासी इसका ढंग से उपचार नहीं कर पाएगी।"

"जैसा आप उचित समझें कर लीजिएगा।"

डाक्टर चला गया।

रखड़ी का पता नहीं था। दो बार मांजी उसे पूछ चुकी थी और दो बार ही पद्म भी।

और उधर रखड़ी सीधे मीता के पास गई।

मीता 'सुख सागर' नामक धार्मिक ग्रंथ पढ़ रही थी।

रखड़ी ने जाकर उसे राम-राम की।

मीता ने चश्मा उतारकर पूछा "क्या है रखड़ी आज तू कैसे आ गई?"

"बहूजी ने पूछा है कि आप देश कब जाएंगी?" वह झूठ बोली।

"मैं अभी नहीं जाऊंगी।"

"पता नहीं उन्हें किसने कहा कि आप देश जानेवाली हैं।"

"मैं जाऊंगी भी तो तेरी बहूजी से मिलकर नहीं जाऊंगी।" मीता के चेहरे

पर धार्मिक ग्रंथ सुखसागर पढ़ते हुए जो सौम्यता और सौजन्यता थी वह लुप्त हो गई। वह जलन से कुढ़कर बोली "मैं उस रांड (वेश्या) का मुंह भी देखना पसंद नहीं करती। उसने अपने रंग-रूप से हमें लूट लिया। रज्जो! तुझे क्या बताऊं, नारी को नागिन के रूप में मैंने उसे ही देखा है। बाप रे बाप चेहरा संगमरमर सतवंतियों से कम भोला नहीं है पर मन कोयले से भी काला है। मेरे पति पर जादू कर दिया था उस रंडी ने। सब ले गई पर मुझे कोई परवाह नहीं। अभी भी भगवान का दिया सब कुछ है। पेट-भर रोटी आनंद से खा ही लेते हैं। दिन बदलते कितनी देर लगती है? जब वे दिन नहीं रहे तब ये दिन भी क्या रहेंगे?"

रज्जो ने अपने-आपसे कहा 'वस्तुतः' वह अधिक व्यस्तता के कारण इन सभी रहस्य-भरी बातों से सदा अनजान रह जाती है।

"अब मैंने सुना है कि उसे टी० बी० का रोग हो गया है। सच मानो, ईश्वर का यह दंड भयंकर पाप करनेवालों के लिए है। मैं कहती हूं कि वह सड़-सड़ कर मरे।"

वह मन ही मन बोली 'हे राम! क्या यह खुद इतनी अच्छी है? इसके बारे में भी कई कहानियां प्रचलित हैं कि ये नौकर चाकरों, साधु-महात्माओं और पंडितों से प्रियतम की तरह प्रेम करती है क्योंकि यह चाहती है कि इसके पुत्र हो।' रज्जो के चेहरे पर पसीने की बूंदें उभर आईं। वह अपने अन्तर्द्वन्द्व को बड़ी मुश्किल से बन्द कर पाई।

"वह जरूर मरेगी। उसे मरना पड़ेगा। वह उस धन का उपभोग नहीं कर सकती। उसका आनंद नहीं ले सकती क्योंकि उसने एक वेश्या की तरह किसी शरीफ आदमी को लूटकर यह धन इकट्ठा किया है।" घृणा से पुकार उठी गीता।

"अच्छा मैं चलती हूं। राम-राम!" रज्जो बड़ी तेज गति से घर की ओर चली। रास्ते में उसने एक सब्जीवाले से कुछ धनिया खरीदा ताकि वह इतनी देर गायब होने का बहाना बना सके।

जब वह घर पहुंची तब भाभी ने उसे डांटते हुए पूछा "कहां मरी थी इतनी देर?"

वह अपने निचले होंठ पर तर्जनी रखती हुई बोली "मैं कोई अपने काम थोड़े ही गई थी ? मैं बाजार बनिया लेने गई थी ।

"ठीक है ठीक । जा बहुजी को पूछकर आ कि वे मौसमी का रस पीएंगी ?"

रखडी वहां से सीधी गई ।

'इन्हें टी० बी है । ये कुलटा हैं । अवश्य इन्हें यह ईश्वर का कठोर दंड है । मैं अब यहां नहीं रहूंगी । यहां रहना खतरे से खाली नहीं है । टी० बी० जैसा रोग ठीक नहीं हो सकता । दूसरों को भी लग जाता है । वह बुत की तरह यह सब सोचती रही । पद्म प्रगाढ़ निद्रा में मग्न थी । उसका चेहरा दिन प्रतिदिन मुरझा रहा था । रखडी उसे देखती रही देखती रही और सोचती रही ।

पद्म ने करवट बदली ।

"बहुजी ! आप रस पीएंगी ?"

"नहीं !"

"थोड़ा-सा पी लीजिए न ।"

"नहीं-नहीं ।" उसने थोड़ा तेज स्वर में कहा । आवाज पर जैसे ही जोर डाला वैसे ही उसे खांसी शुरू हो गई और खून का कफ बाहर आ गिरा । उसने नेत्र मूंदकर अपने को आश्वस्त किया ।

रखडी का मन घृणा से भर उठा । उसकी आंखों में भय नाच उठा । उसके मन में आया कि वह भाग चले यहां एक पल भी न रुके । उसका चेहरा आन्तरिक घृणा से विकृत हो गया ।

पर उसने यंत्रवत् कपड़े से उस खून को उठाया और उसे कफवाले बर्तन में डाल दिया । उसने मांजी को पुकारा । उसका मन अरुचि से भर उठा ।

'यह कैसी नौकरी है ? इससे मेरा जीवन भी खराब हो जाएगा । उसने तुरन्त सोचा 'वह आज ही यहां से भाग जाएगी और दूसरी जगह रोटी-कपड़े के बदले ही काम कर लेगी । यहां तनख्वाह बढ़ाने पर भी वह नहीं रहेगी । यहां उसके जीवन को खतरा है धर्म को खतरा है । क्या एक

के स्पर्श से उसका परलोक नहीं बिगड़ सकता ? छि: छि: !"

"क्या है ?" मांजी ने कमरे के बाहर से ही पुकारा "क्या बात है ?"

"मुझे लग रहा है कि बहूजी बेहोश हो गई हैं।

"बेहोश ! रमली तू यहां ठहर मैं अभी डाक्टर को बुलवाती हूं।' कह कर वह बाहर गई और पुनः कुछ सोचकर बोली 'रमली तू उसे गोली दे दे। डाक्टर साहब ने ऐसा कहा था न ?

रमली वहां खड़ी रही।

"खड़ी-खड़ी देखती क्या है ? जाकर गोली क्यों नहीं देती ?

वह चिढ़ गई 'ये सभी लोग यह रोग मुझे लगवाना चाहते हैं। खुद कोई भी इसके पास नहीं फटकता सभी मुझे ही इस आग में धकेलते हैं। छि ! मैं आज ही यहां से चली जाऊंगी।'

वह यह सब सोचती हुई पद्म को गोली देने लगी। उसने गिलास में पानी भरा। अचानक उसे वहम हुआ कि कांच के गिलास पर क्षय के कीटाणु रेंग रहे हैं। वह नख से सिर तक कांप उठी। उसने बड़ी कठिनता से उस गिलास को पकड़े रखा। उसने पद्म को गोली दी पर उस समय भी उसे यही भ्रम था कि कीटाणु उसकी ओर आगे-पीछे चले आ रहे हैं। क्योंकि मूर्खों में टी० बी० का रोग असाध्य और अत्यन्त भयानक माना जाता है।

पद्म ने धीमे से पुकारा "मांजी हैं ?"

"हां।"

"उन्हें बुला।"

रमली मांजी को बुला लाई।

पद्म ने अपनी बुखार से तेज व लाल आंखें उठाकर कहा "मांजी ! आप जा सकती हैं। मैं देख नहीं सकूंगी।"

"नहीं, नहीं। तुम्हें यहां संभालेगा कौन ?"

'मुझे, यहां ईश्वर संभालेगा। ईश्वर से बड़ा कौन रखवाला हो सकता है ? आप आज जाना चाहती हैं न ?"

'नहीं मैं दो रोज बाद जाऊंगी।

"यह आपकी अपनी मर्जी है। पर आप मेरे लिए न रुकें।

दो रोज के बाद भाभी चली गई। दरअसल वह पद्म को अपने साथ ले जाना नहीं चाहती थी पर उसने चलते-चलते लोक-व्यवहार का लिहाज रखते हुए उसकी कई बार मिन्नतें कीं। उसने अपने भाई से दस हजार रुपये माँगे पर उसने चार हजार ही दिए। उसने यह नहीं बताया कि पद्म उसे मना कर गया है कि इससे अधिक माँ को न देना और न ही इस रहस्य से परिचित कराना माँ को।

रज्जी तीसरे दिन यहाँ से काम छोड़कर चली गई। धाय माँ ने जो स्वभाव से दयालु थी उसका उपचार संभाला। वह बड़ी निर्भीक थी और सेवा को श्रेष्ठ मानकर पद्म की देखभाल करने लगी। पर वह संतोष को उससे एकदम दूर रखती थी क्योंकि वह नहीं चाहती थी कि माँ के इस भयानक रोग का उसके बेटे पर प्रभाव पड़े और उसकी भी सारी उम्र खाँसी की खूं-खूं करते बीते।

पद्म डाक्टर के अतिरिक्त सभी को अपने पास आने के लिए मना करती रहती थी। वह उन्हें टी० बी० की भयानकता के किस्से सुनाया करती थी। बड़े बाबू का एक और पत्र आया था कि वे अभी दस दिन और नहीं आ सकेंगे। वे रुपयों के चक्कर में हैं।

धाय ने पद्म को यह समाचार सुनाया "बड़े बाबू अभी नहीं आएँगे। वे अभी तक रुपये इकट्ठे नहीं कर पाए हैं।"

"फिर मैं बड़ी शांति से मरूँगी।"

"आपको ऐसे बोल नहीं बोलने चाहिएँ।

"कल मैंने एक सपना देखा था—मैं एक ऊँचे वृक्ष की एक डाल पर हूँ। वृक्ष बहुत ऊँचा है और नीचे पत्थर की पहाड़ियाँ। मैं डर गई। बहुत देर तक उस वृक्ष पर बैठी रही और अंत में मैं गिर पड़ी। मैं भयभीत हो ग०। पर प्रभु की कृपा समझो कि वह सपना ही था वर्ना मेरा कितना भयंकर अन्त होता।"

"भगवान आपको चिरायु रखे।

"भगवान से ऐसी प्रार्थना न करो। क्या तुम चाहती हो कि मैं एक पापिन

स्त्री की तरह कष्ट भोग भेलकर मरूं ?" उसने तुरन्त आय का उत्तर सुने बिना ही शान्त स्वर में कहा "हालांकि मैं पापिन हूं और मैं इसी तरह ही मरूंगी।

वह प्रकट में बोली "तुमने क्या कहा आय मां ?"

"मैंने यह कहा था कि आप मरने का नाम न लें। बड़े बाबू को दूसरी बहू मिल जाएगी पर आपके बेटे को अपनी मां नहीं मिलेगी।"

"यह सच है। पर तुम मुझे बच्चे के मोह में इस रोग की भयानक पीड़ा में आजीवन तड़पाना चाहती हो ?" वह तरल भरी हंसी हंसकर सोचने लगी "फिर मैंने इसे हृदय से अपना बेटा कहां समझा है ? मैं इसे प्यार नहीं दे सकी। मैं इसे अपनी छाती का दूध नहीं पिला सकी। दूध के बिना पुत्र कैसा ?

आय मां ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह बाहर चली गई।

कमरे में पूर्ववत् एकान्त छा गया।

तीसरी रात को खांसी पल-भर के लिए नहीं रुक रही थी।

आसमान साफ था और चन्द्रिका में बंगाली राजा की विशाल बाड़ी दिख लाई पड़ रही थी। आज अचानक मधुमय सितार का वही दिल की गहराइयों में उतरनेवाला संगीत सुनाई पड़ा।

पद्म अकेली थी।

उसने खिड़की खोली। राजा की बाड़ी स्पष्ट नजर आने लगी। चांदनी में स्नान करती हुई सुन्दर युवती सितार-वादन कर रही थी। वह श्वेतवस्त्रों में वरदा मां लग रही थी। वह उसे भक्तप्राण की तरह देखती रही। देखते-देखते उसके नेत्र भर आए।

न मालूम वह कब तक विमुग्ध-सी वहां खड़ी रही। उसे मालूम ही नहीं हुआ कि वह अप्सरा-सी युवती कब चली गई। कब अमृतमय संगीत रुक गया और कब महानगरी के कोलाहलमय वातावरण में अनपेक्षित एवं अलौकिक शून्यता छा गई।

वह उठकर आई। उसका जी मिचलाने लगा। वह भागकर स्नानघर में गई। उसे कै हुई। लाल कै। उसे लगा कि वह बेहोश होनेवाली है पर उसने

अपने-आपको संभाला और कै को पानी से बहाकर वह अपने कमरे तक लड़खड़ाती हुई आई और उसने बाद में आया को पुकारा।

आया आई।

"क्या बात है ? वह उसे देखते ही घबरा उठी।

"तुम मामीजी को बुला लाओ।"

"क्यों ?"

"मैं थोड़ी देर में मर जाऊंगी।" पद्म के चेहरे पर साधुओं जैसा मोक्ष का और की शांति।

"यह क्या कह रही हो ?" आया घबरा उठी।

"देर न करो।" उसके चेहरे पर गहरी ऐंठन-सी दौड़ी।

अच्छा।" कहकर उसने नौकर को भेजा।

आया ने उसे सम्हाल देकर बिस्तरे पर लेटाया।

सन्नाटा।

"आया ! संतोष सो रहा है ?

"जी।

"आया मां ! उसकी देखभाल तुम्हें सौंप रही हूं। मृत्यु-पर्यन्त उसे अपनी ममता से विलग मत करना। सचमुच बिना मां का बच्चा बड़ा अभागा होता है। किन्तु मुझे विश्वास है कि तुम उसे अपनी नजर से नहीं गिराओगी। गिराओगी से मेरा मतलब यह है कि वह एक अभागी (उसने मन में कहा पापिन) का बेटा (मन में पाप) है। क्या पता बड़े बाबू दूसरी बहू ले आएं और वह उसे कष्ट और प्रताड़ना दे। हम तीन किसीको के पाप से कोई भी पाप नहीं छिपा सकते। वह हमारी आत्मा में सत्य का उद्बोध करता रहता है। हमें अपने पापों की याद दिलाता रहता है। उसने मुझे कुछ कहा और मैंने अपने को अपराधी मान लिया। मैं अपने साथ अपने बच्चे को भी दंड दे बैठी। उसे कभी सम्पूर्ण मातृत्व के साथ प्यार नहीं किया।"

"लेकिन आप जैसी दयावती धार्मिक वृत्ति की स्त्री और दंड, मैं नहीं समझी ?"

"आह मां! तुम मुझसे पवित्र हो। तुम किराये की मां हो पर तुम्हारी ममता किराये की नहीं है। ममता किराये पर कभी नहीं मिलती। उसका कर्तव्य अवश्य बेचा जा सकता है। पर तुमने संतोष को ममता दी सच्ची ममता। तुम यहां नौकरी करने आई थीं और बच्चे की किलकारियों और अठखेलियों में अपने आपको इतना तादात्म्य कर लिया कि तुम सहज स्वाभाविक मां बन गई हो। तुम्हारे मन में किसी तरह का भेद और कलुष नहीं है। तुम अमृतमयी और वात्सल्यमयी हो। प्रभु तुम्हें चिरायु रखे । पर कुछ सगी माताएं भी ऐसी होती हैं जो द्वेषवश अपने बच्चों को अपने से दूर रखती हैं।"

"नहीं बहूजी आजकल पैसेवाली लड़कियां बच्चों को दूध इसलिए नहीं पिलाती हैं कि उन्हें अपने यौवन से हाथ धोने का वहम बना हुआ है। वे कहती हैं, बच्चे के निरन्तर दुग्धपान से उनकी । राम-राम मुझे कहते हुए भी शर्म आती है।"

"पर मैं सचमुच अपने बच्चे से प्यार नहीं कर सकी। पता नहीं क्यों? मैं समझती हूं कि यह मेरा दुर्भाग्य ही है, या ईश्वर का अभिशाप। कदाचित् परलोक के देने-पावने यहां पूरे हो रहे हों।

"मैं कुछ भी नहीं जानती।"

गहरा मौन।

कुछ समय बीत गया।

मामा-मामीजी आ गए। वे बहुत घबराए हुए थे।

उन्होंने आकर पद्म को देखा—पद्म की आंखें लग गई थीं। उसके चेहरे पर प्रगाढ़ शांति थी प्रचंड निशा के कुछ क्षण पूर्व की शांति।

मामाजी ने उसका हाथ पकड़कर नाड़ी देखी और वह बोलीं "नाड़ी ठीक से चल रही है।"

मामा ने स्नेहिल स्वर में कहा "मैं एकदम घबरा गया था। कुछ भी कहे पतू पर अब मैं उसे तार दे ही दूंगा।"

वे लगभग आधा घंटा बैठे रहे और अन्त में वे उठकर बाहर के कमरे में सो गए।

सुबह धूप निकलने तक वह सोई रही। लगता था कि उसे जो गोली बाद में दी गई थी वह नींद की गोली थी। इस लम्बी नींद ने उसे काफी स्वस्थ कर दिया। वह अपने-आपको दुर्बल नहीं समझ रही थी।

जब डाक्टर आया तब वह बड़ी प्रसन्न थी। उसने डाक्टर से हंस-हंसकर बातें कीं। डाक्टर को उसने बताया "आज उसने रात को एक सपना देखा उस सपने में उसने अपने-आपको मरा हुआ पाया।" उसको ऐसा विश्वास था कि सपनों का अर्थ सदा उल्टा होता है। डाक्टर उसके एकाएक प्रसन्न होने के कारण विस्मित था। सोच रहा था 'यह स्वस्थ है या उन्माद में है?

मामा-मामी चले गए थे। एक तार बड़े बाबू को दे दिया गया था कि वे तुरन्त आ जाएं।

डाक्टर ने वेदना भरे स्वर में कहा "आप ठीक से उपचार नहीं कराती हैं। मेरा वश चलता तो मैं आपका जबर्दस्ती ।"

पद्म ने बीच में ही हंसकर कहा "मैं बहुत अच्छी हूं आज।"

बड़े बाबू आसाम में सेठ गुलजमल से कुछ रुपया ऐंठने गए थे। ऐंठना शब्द का प्रयोग इसलिए किया गया है कि उनकी भावना नितान्त अपवित्र थी। पर अगर वे रुपये ही लेने जाते तो उन्हें ऐसे कौन रुपये देता? इसलिए उन्होंने यह हवा फैलाई कि वे कुछ चाय के बागान खरीदना चाहते हैं। उन्होंने आसाम के अंचलों में खूब घूम-घूमकर अपने विचार की पुष्टि भी की। उनकी योजनाओं तथा कार्यक्रमों से सभी लोग प्रभावित हुए।

इसी बीच उनकी भेंट बसंतलाल से और हो गई। बसंतलाल भी चाय के बागानों का मालिक था और उसके पास खूब रुपये थे। इसका कारण एक यह भी था कि उसका बड़ा बेटा रंगून में जौहरी था और उसने वहां अनाप-शनाप धन कमाया था।

बसंतलाल ने बड़े बाबू को एक दिन भोजन पर बुलाया। इधर-उधर की

बातें होती रहीं। बातचीत में बसंतलाल ने पूछा "आप चाय बागान क्यों खरीदना चाहते हैं ?

"आपको क्या बताऊं सेठजी ?" बड़े बाबू गंभीर होकर बोले।

बसंतलाल सदा से सीधी प्रकृति का था। उसे धन के अतिरिक्त भी प्रत्येक वस्तु को संग्रह करने की आदत थी। उसमें एक और खूबी थी कि उसके पास कितना धन है उसका लोग अनुमान नहीं लगा सकते थे। एक मैली-कुचैली पगड़ी एक बगलबंदी और घुटनों तक मोटी धोती। रोटी-पानी के व्यसन के अतिरिक्त कोई दूसरा व्यसन नहीं।

मुझे बताना ही पड़ेगा।" बसंतलाल की आंखों में सांप की आंखों-सी चमक थी।

"एक विलायत के साहब मेरे दोस्त हैं। बड़े ही भले और दयालु हैं। उन्होंने मुझे कहा है कि वे हमारी चाय का सौदा अधिक दाम में एक बाहरी कम्पनी से करा देंगे।"

"मेरे भी चाय के बागान हैं।"

"मुझे पहले कुन्दनमलजी से सौदा तय करना है। मैंने उन्हें वचन भी दे दिया है और व्यापार में वचन भंग करना निहायत ही अनैतिकता है।"

"लेकिन वह बुड्ढ बड़ा लोभी है।"

"मुझे उनसे कुछ छीनना नहीं है। अगर उनसे सौदा नहीं पटा तब मैं आपकी चाय खरीद लूंगा।" और मुझे एक नई मिल भी खिलनी है। मैं आपको बता रहा हूं—उस मिल में प्रत्येक साल दो लाख रुपयों का मुनाफा होगा।" बड़े बाबू पल-भर के लिए चुप रहकर बोले "आपको क्या बताऊं ? लारेन्स मैकेनिकल वर्क्स के लारेन्स साहब मुझे बड़ा चाहते हैं। उनके बड़े भाई रिचर्ड साहब यहां कोई बड़े आफिसर बनकर आ रहे हैं। वे आफिसर बनकर जैसे ही आएंगे वैसे ही मुझे जंगलात के ठेके मिल जाएंगे। आप यकीन रखें, मैंने ऐसी योजना बना रखी है कि मुझे आगामी चार वर्ष में लगभग हर वर्ष में एक करोड़ की बचत होगी।

बसंतलाल उनकी ओर देखता रहा।

बड़े बाबू बोले "मैं आपको अपनी पूरी योजना नहीं बता सकता। यह

बिजनेस-सीक्रेट है। पर यह सोलह आने सत्य है कि बिना उद्योग के भविष्य में जीना दूभर हो जाएगा। रुपया पड़ा-पड़ा स्वतः थोड़े ही बढ़ता है। रुपयों को बढ़ाता है व्यापार। लक्ष्मी मिल्स में मैं साधारण नौकर था। उसे मैंने इधर उधर से रुपये इकट्ठे करके खरीदा आपकी और ईश्वर की कृपा से आज उससे लाखों कमाता हूं।"

"लाखों!"

"जी। पर सरकार के डर से आपको सही रकम नहीं बताऊंगा। यह भी बिजनेस-सीक्रेट है।

बड़े बाबू खाना खा चुके थे। वे उठते हुए बोले "और मेरे योग्य कोई सेवा?"

सोमी का मन ललचा। वह खिंहसकर बोला "मेरी विधवा बहिन के मेरे पास लगभग दो लाख रुपये जमा हैं। मेरा कोई लम्बा-चौड़ा व्यापार है नहीं इसलिए मैं अपनी बहिन को ब्याज देने में सर्वथा असमर्थ हूं। अतः आपसे मेरी प्रार्थना है कि आपको रुपयों की जरूरत हो तो वे रुपया आप अपने खाते में जमा कर लें।"

"देखिए मुझे रुपयों की जरूरत नहीं है। यदि आप कहें मेरा मतलब है कि सिर्फ आपके लिहाज से---।"

"यह मेरी आपसे प्रार्थना ही समझिए।"

"मैं आपकी प्रार्थना कैसे टाल सकता हूं? पर मैं ब्याज चार आना सैकड़ा ही दूंगा। यह सिर्फ आपके कारण वर्ना मुझे तो लोग रुपये ऐसे ही दे जाते हैं। सोचते हैं कि डूबेंगे तो नहीं।

"कोई बात नहीं।"

"तब आप ऐसे कीजिए, रुपया मुझे दे दीजिए।"

"आप कब जाएंगे?"

"मैं कल सुबह जाऊंगा।"

"क्या इतनी रकम ?"

"आप चिंता न करें। मैं झुम्मनलालजी की गद्दी में जमा करा दूंगा और

कलकत्ता में उनकी गद्दी से मैं लूंगा।"

"ठीक है।"

वहां से सीधे वे कुन्दनमलजी के यहां आए।

जब कुन्दनमल ने उनके पास दो लाख रुपये देखे तो उसकी आंखें भूखे शेर जैसी दहक उठीं। वह इन रुपयों को प्रेम भरी दृष्टि से देखता रहा।

बड़े बाबू उसके मन का भेद समझ गए। वे अंगड़ाई लेकर बोले, "आप इन रुपयों को देखकर चकित क्यों हो रहे हैं? ये बहुत अधिक रुपये नहीं हैं। ये मेरे जैसे आदमी के लिए बहुत कम हैं। फिर मैं जो नया व्यापार शुरू करने जा रहा हूं, उसमें लाख का एक लाख का लाभ है।"

"क्या करने जा रहे हैं?"

"यह मेरी गुप्त बातें हैं। क्या आप इसे ठीक समझते हैं कि अपने व्यापार की गुप्त बातें दूसरों को बता दी जाएं?"

"नहीं।" उसने एक विद्यार्थी की तरह कहा।

"चतुर व्यापारी वही है जो अपनी योजनाओं को कार्यान्वित किए बिना अपनी पत्नी को भी न बताए। क्योंकि ये स्त्रियां सेठों के मद में मर्दों की बातें खूब रस ले-लेकर दूसरों को सुनाती हैं। ऐसा करने में उन्हें आनन्द के साथ-साथ गौरव भी होता है।"

"आप ठीक कहते हैं।"

"मैं आपको क्या बताऊं? पेन्सिल की सोल एजेन्सी की बात पक्की हो चुकी थी। भारत में जर्मनी पेन्सिलें केवल मैं ही मंगाता पर एक दिन बातों ही बातों में मैंने अपनी पत्नी को यह राज बता दिया। पत्नी ने अपनी एक भायली को कह दिया। नतीजा यह निकला कि वह एजेन्सी दूसरा व्यापारी मारकर ले गया। उसमें लाभ भी पचास हजार की नैट इन्कम थी।

"मैं आपकी बात को समझता हूं।"

"क्यों नहीं। आपने स्वयं इन धंधों को आबाद किया है। हाथ से पैसों का सीना चीर चीरकर सोना निकाला है। भगवान आपके व्यापार को बहुत समृद्ध करें।"

इतना कह उन्होंने खिड़की की राह अनंत आकाश को देखा। आकाश निर्मल था। कहीं-कहीं कोई पक्षी उड़ता हुआ दीख जाता था।

कुन्दनमल ने उनकी गंभीरता को तोड़ते हुए कहा "आप कुछ हमें भी काम बताइए न ?"

"अवश्य-अवश्य।"

फिर बहुत देर तक बातचीत होती रही। बातचीत का मुख्य विषय था व्यापार द्वारा पैसों की वृद्धि किन सुगम तरीकों से हो सकती है। बड़े बाबू अत्यन्त नाटकीयता से सफल योजनाओं पर विस्तारपूर्वक बताते थे उनकी योजनाओं को सुनकर ऐसा प्रतीत होता था कि वे किसी भी मुल्क के सफल योजना मंत्री बन सकते हैं। उनके बोलने का ढंग भी प्रभावशाली था जो ईश्वर प्रदत्त ही हो सकता है।

उनकी आसाम-यात्रा बड़ी सफल रही।

मना करने के बावजूद भी पद्म ने आज फिर स्नान कर लिया और वह मंदिर में पूजा करने चली गई। आज मां ने उसे बहुत रोका पर परिणाम कुछ भी नहीं निकला। वह अपने काम में दृढ़प्रतिज्ञ की तरह लगी रही और उसने आज की पूजा विधिवत् समाप्त कर ली। क्योंकि उसे पूरा विश्वास हो गया था कि वह अब दो-चार दिन की मेहमान है और इस अवधि में उसे पवित्र होकर ईश्वर से प्रार्थना करनी चाहिए ताकि उसके पापों को ईश्वर क्षमा कर दे। उसे उन्माद-सा छा गया था इसलिए वह एकदम कमज़ोर होते हुए भी जवान घोड़ी की तरह काम कर रही थी। उसकी पुर्ती और चुस्ती देखकर सारे नौकर-नौकरानियों को विस्मय हो रहा था।

पूजा से निवृत्त होकर वह गीता का पाठ करने बैठी।

तभी रमली आ गई।

"कैसी हो ?" पद्म ने प्रसन्न मुद्रा में पूछा।

"अच्छी हूं बहूजी।" उसने विनम्रता से उत्तर दिया "आपका क्या हाल है? मैंने सुना था कि आपकी तबियत बीच में बहुत खराब हो गई थी।"

"हां, हां! खराब क्या मरने जैसी थी पर मुझ जैसी स्त्री की सांस भी जल्दी से नहीं निकल सकती। कर्म के भोग भोगे बिना यहां से कोई नहीं जा सकता। मुझे दो-चार दिन और भोगने हैं।" वह इस मृत्यु की बात को इस सहज मुद्रा में कह रही थी जैसे वह कोई साधारण बात कह रही हो जैसे मरने को उसने दर्पपूर्ण उत्सव समझ रखा हो।

"भगवान आपको चिरायु रखे।"

"भगवान मुझे नहीं तुम्हें चिरायु रखे।" उसने चिढ़कर कहा। उसका स्वर तेज था जिससे वह सहम गई।

रजनी विचारमग्न खड़ी रही।

अब उसके समीप आकर बोली "मुझे मालूम है कि तुम यहां से क्यों चली गई? मुझे टी० बी० है न मैं पापिन हूं न?"

"अरे आप····?"

"खबरदार! झूठ बोलने की कोशिश की तो ठीक नहीं रहेगा। मैं सब जानती हूं। कल मीता यहां आई थी। मैंने उससे सब पूछ लिया है। वह बड़ी दुष्ट और दूसरों को पीड़ा देनेवाली औरत है। उसे दूसरों को पीड़ा देने में आनन्द आता है। युद्ध में उन्मत्त हुए सिपाही की तरह वह दूसरों की गन्दी गन्दी बातों को प्रकट करती है। वह बड़ी चतुर है। उसने तुम्हारी बहुत निन्दा की और मुझे बताया कि रजनी कह रही थी कि मैं एक कुलटा हूं मैंने उसके पति से मिल मिलाकर उसे बर्बाद कर दिया। क्या तुमने ऐसा कहा था?"

रजनी का मुख सफेद हो गया।

"नहीं मैंने ऐसा कुछ भी नहीं कहा।"

"वह बड़ी चतुर है। वह अपने मन की बात दूसरे के माध्यम से करती है जिससे वह निर्दोष कहलाती रहे।"

रजनी ने आंखों में आंसू भरकर रोते हुए कहा "मैंने कुछ भी नहीं कहा। मैं एकदम निर्दोष हूं। मैं आपकी सौगन्ध खाकर कहती हूं कि मैं आपके बारे में

कुछ भी नहीं जानती। यह सब उसीके लगाए हुए गस्से व रोष हैं।"

"उसने मुझे यह भी बताया कि तुम मुझसे घृणा करती हो। हर धार्मिक और सती स्त्री को कुलटा से घृणा करनी ही चाहिए। मगर उसके पास उसका कोई प्रमाण हो तो समाज व धर्म भी उसे अपने से अलग कर लेता है। तुम तो एक साधारण स्त्री हो। मैं इसे बुरा नहीं मानती हूं। अब मैं दो-चार दिन की मेहमान हूं। मेरी बदनामी भी हो गई तो मुझे कोई भय नहीं है। पर मुझे दुःख इस बात का है कि यह सब तुम्हारे कारण हुआ है। तुमने ही इसकी गहराई में पहुंचने की कोशिश की। मैं मरते-मरते तुम्हें शाप देकर दूंगी कि तुमने जिसका नमक खाया उसकी निन्दा की उसके घर के भेद को बाहर किया इसलिए तुम्हारी आत्मा को कभी शांति और सुख नहीं मिलेगा।"

रखड़ी घबरा उठी। वह शापित प्राणी की तरह निष्कंप हो गई।

"अब तुम जा सकती हो। मुझे तुम्हारे पर गुस्सा आ रहा है। मैं गुस्से में तुम्हें कुछ बुरा-भला कह दूंगी।"

रखड़ी चली गई।

'सच्ची बात है कि छोटों को मुंह नहीं लगाना चाहिए। इस रखड़ी की आंखों में लोमड़ी की सी धृष्टता चमक रही है।

वह थोड़ी देर शांत पड़ी रही।

उसकी कुछ परिचित स्त्रियां फिर आईं। इन स्त्रियों से उसे विशेष रूप से चिढ़ थी। क्योंकि वे सब प्रामाणिक रूप से जान चुकी थीं कि कभी पद्मा का अमृत बाबू से अनुचित सम्बन्ध रहा था फिर भी वे स्वार्थी स्त्रियां उसकी एक सती नारी से तुलना करती रहती थीं और ईश्वर से हाथ जोड़कर प्रार्थना करती थीं कि प्रभु हमारे दयालु सेठानी को चिरायु रखें। उनकी झूठी बातों से पद्म को प्राणांतिक पीड़ा होती थी। और वह उन्हें धक्के मारकर निकाल देना चाहती थी पर वह ऐसा सोचकर ही रह जाती थी। उसका साहस उसे ऐन मौके पर जवाब दे देता था कि ऐसा करना सर्वथा अशिष्टता है।

पर आज वह उनके आगमन पर आंखें मूंद कर सो गई। वे स्त्रियां जिनका पेशा चापलूसी करना था उसके चारों ओर बैठ गईं और आपस में बातचीत

करने लगीं। उनकी बातों में सत्य का जरा भी आभास नहीं था। वे बातें एकदम बनावटी लग रही थीं।

'भगवान ऐसी शुद्ध आत्मा को क्यों कष्ट देता है ?

"क्या दयालु हृदय पाया है। हरएक के प्रति ये दया से भरी रहती हैं।"

"हाथ का खुलकर उदार देती हैं। जब कभी कोई दुख मांगने इनके दरवाजे से वह खाली हाथ नहीं जाता है।

'कुछ स्त्रियां जन्म से ही दाता बनकर आती हैं।"

और पद्म इन सब बातों को सुन-सुनकर अवाक् हो रही थी। उसे लग रहा था कि वह इन झूठी स्त्रियों को घर से क्यों नहीं बाहर कर देती ? वह घृणा से भर उठी। उसने आंखें खोलकर चिढ़े हुए स्वर में कहा "अब आप जा सकती हैं।"

उन बैठी हुई स्त्रियों पर पहाड़ टूट पड़ा। उनमें चहलता आ गई और वे एक दूसरे का मुंह देखने लगीं।

"मैंने कहा कि आप सब जा सकती हैं। मेरे सिर में दर्द है और आपको चुप रहने की आदत नहीं है।"

स्त्रियां जिनके चेहरे बाहरी अपमान और उनके आन्तरिक क्षोभ से विकृत हो गए थे चुपचाप चली गईं। कमरे में सन्नाटा छा गया। दूसरे सभी लोग अपने-अपने कामों में व्यस्त थे। जोर-शोर से चर्चा थी कि बड़े बाबू आनेवाले हैं—कल सुबह की गाड़ी से।

पद्म की सूनी सी बस्ती फिर हुई। सारा फर्श धूप से भर गया। छितराए हुए धूप से अजीबो-गरीब चित्र बन गए।

धाय मां आ गई थी। एक नौकरानी ने मिट्टी से अंगीठी को ढक दिया। सबके चेहरे उदास-से लगने लगे। मामीजी भी आ गई थीं। पद्म ने अपने गले का हार धाय मां को देकर कहा, "भगवान की सौगन्ध खाकर कहो कि मैं इस बच्चे को पालूंगी। यह बच्चा मां के मिले हुए उसके प्यार से वंचित रहा। शायद बड़ा होकर इसे यह भी मालूम नहीं होगा कि मेरी मां कौन थी ? पर अब तुम इसे उस की अपेक्षा अधिक प्यार देना। इसकी सारी जिम्मेदारी तुम पर है।"

बाप मां की आंखों में आंसू आ गए।

"तुम सब बाहर चली जाओ। इस कमरे में अन्धेरा कर दो।"

सब उदास-उदास-सी चली गईं। अन्धेरे में उसने सीतामाता के चित्र के समक्ष हाथ जोड़कर कहा "मैं पतिता हूं। मैंने सतीत्व को कलंकित कर लिया। मैं उस पाप में सुलगती गीली लकड़ी की तरह जलती रही हूं। मुझे अपने स्पर्श से पवित्र करना मेरे प्रभु और मेरे पति की बुद्धि को ठीक रखना उन्हें क्षमा कर देना क्योंकि उनका मन उनके अपने वश में नहीं है।" और इसके बाद वह निरन्तर रोती रही रोती रही।

कब उसके प्राण निकले यह कोई नहीं जान सका। जब कमरे में सूर्य की पावन रश्मियों ने प्रवेश किया तब लोगों को यह पता चला कि पद्म के प्राण उसके शरीर से निकल चुके हैं।

फतह बाबू भारत के सबसे बड़े आदमी भले ही न बने हों पर अब उनकी गिनती भारत के प्रतिष्ठित करोड़पतियों में होने लग गई थी। गत उन्नीस वर्ष में उन्होंने हिस्टीरिया के रोगी की तरह येनकेन प्रकारेण रुपये कमाए। आज बड़े बाबू के पास दो काटन मिल्स चार गाड़ियां एक ऑयल मिल और कई छोटी कम्पनियां हैं। इसके अतिरिक्त अहमदाबाद की एक बड़ी मिल में उनके बड़ी तादाद में शेयर्स भी हैं।

संतोष अब तरुण हो चुका था।

पितृ स्नेह से वंचित संतोष का जीवन सूखे पत्ते की तरह हवा के झोंके के साथ इधर-उधर उड़ता रहा। मां की उसे स्मृति ही नहीं है। उसने बी॰ ए॰ पास कर लिया था और अब एम॰ ए॰ में पढ़ रहा था। घर में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं था जो उसे अपने प्यार में केन्द्रीभूत कर सके। वह प्यासे पंछी की तरह निरुपाय-सा अकेला रहता था। पिताजी यदा-कदा उसे एक अनजाने शिक्षक की तरह पूछ लेते थे 'पढ़ाई ठीक चल रही है? क्यों आगे पढ़ने की इच्छा है या नहीं? तुम्हें अधिक पढ़ने से कोई लाभ नहीं होगा क्योंकि आखिर तुम्हें व्यापार ही संभालना है।' इन वाक्यों के अतिरिक्त कुछ भी नहीं।

मैं उसका सहपाठी था लेकिन बी॰ ए॰ तक पहुंचते-पहुंचते दो वर्ष पीछे रह गया। क्योंकि मेरी जासूसीपने की प्रवृत्ति विशेष गहरी होती गई, फलस्वरूप मैं पढ़ाई से अधिक जासूसी करने लगा। आज वह फिफ्थइयर में था और मैं थर्ड इयर में। अस्तु।

इसके अतिरिक्त संतोष मुझसे हार्दिक स्नेह रखता था। अपने दिल के दुख दर्दों से वह मुझे सदा परिचित कराता रहता था और कहता था कि उसे हर क्षण कुछ शून्यता-सी महसूस होती रहती थी। संयोग समझिए कि इतनी सम्पन्नता के बाद वह किसी भी लड़की को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर

पाया। इसका कारण था—उसकी गम्भीरता और कम बोलना। लड़के-लड़कियों की राय थी कि वह अपने पैसे के मद में गर्वीला बना रहता है। कुछ आधुनिक युवतियां जिन्होंने उसे आकर्षित करना चाहा उन्हें उसने लिफ्ट नहीं दी क्योंकि वे प्यार की ऐसी रटी रटाई शब्दावली बोलती थीं जिसमें उनके हृदय की कृत्रिमता स्पष्ट रूप से झलक जाती थी और यह पता लगते किंचित् भी देर नहीं लगती थी कि वे प्यार जैसी भावात्मक संज्ञा से कोसों दूर हैं। वे चतुर व्यापारियों की तरह किसीसे मित्रता करके अपनी तमाम आवश्यकताओं की पूर्ति करना चाहती हैं ताकि आमोद प्रमोद का समय विलासी परम्पराओं के साथ व्यतीत हो। दूसरा संतोष को ऐसी लड़कियां अच्छी भी नहीं लगती थीं जो दूसरे लड़कों से खुलकर बोलती हों।

ऐसे वातावरण में संतोष का जीवन एक निश्चित परिधि मे घूमता रहा फलस्वरूप वह अन्तर्मुं ख होता गया।

धाय मां बूढ़ी हो गई थी। कुछ दिन पहले वह एक अपाहिज थी बड़े बाबू की पर संतोष ने उसे पुत्र-स्नेह दिया और उसे पांच हजार रुपये हठ करके पिताजी से दिलवाए और उसे अपने देश भेज दिया ताकि वह अपना शेष जीवन सुख से व्यतीत करे।

हालांकि बड़े बाबू को उसका यह हठ जरा भी पसन्द नहीं आया। उसमें उन्हें न्याय की प्रतीति नहीं हुई बल्कि वे कहते रहे "आदमी को अपने श्रम की कीमत मिलती है और जब वह श्रम के अयोग्य हो जाता है तो उसे छुट्टी दे दी जाती है। इसमें अधम का सवाल कैसे उठता है?"

"पर यह हमारी नौकरानी नहीं मेरी मां है। मैंने इसका दूध लिया है। धाय मां,का ओहदा असली मां से भी बड़ा होता है। मैं इसे पांच हजार रुपये दूंगा ही ताकि यह अपना शेष जीवन शांति से गुजार सके।"

बड़े बाबू ने आखिर संतोष की बात मान ली। उसी दिन उन्हें ऐसा प्रतीत हुआ कि बच्चा दूसरे वातावरण से प्रभावित हो रहा है उसे शीघ्र ही अपनी दुनिया में सम्मिलित कर लेना चाहिए। फिर वे अपने ही विचार पर हंसे। क्योंकि उन्हें तुरन्त ख्याल आया कि इस उम्र में प्रत्येक युवक अदारता और

विद्रोहात्मक दृष्टि से ही सोचता है।

सम्पत की चरित्र-कथा इस तरह बढ़ी कि बड़े बाबू ने उसकी तमाम सम्पत्ति हड़प ली और उसे अपमिमची बना दिया। अब वह उस बूढ़ी नौकरानी के साथ चुहलबाजियाँ करता हुआ अपना शेष जीवन गुजार रहा है। वह एकांत में बड़ी बाड़ी के एक कमरे में पड़ा रहता है। उसे देखकर किसान के उस बैल की याद आ जाती है जो उम्र भर खेत जोतता है और बाद में जब वह खेत जोतने के काबिल नहीं रहता तब उसे भूखा व प्यासा छोड़ दिया जाता है। वह रात-दिन अन्धकार से घिरे उस कमरे में पड़ा रहता है।

भोर का समय था।

बाल रवि की रश्मियाँ संसृति से अपना नाता-रिश्ता जोड़ चुकी थीं।

बड़े बाबू बैठकखाने में बैठे हुए किसी कांग्रेसी नेता से बातचीत कर रहे थे। स्वतन्त्रता के बाद कई व्यापारी गांधीजी के भाषण से अत्यन्त प्रभावित हुए और उनके आह्वान के फलस्वरूप वे देश-सेवा में उतर पड़े। या यों कहिए कि उनका हृदय-परिवर्तन हो गया। ऐसे तुरन्त बदले हुए हृदय के नेता थे श्री मोहनलाल। वे बड़े बाबू के पास चंदा मांगने आए थे। किसी गांधी पाठशाला का निर्माण होने जा रहा था।

बड़े बाबू उनकी बातें ध्यान से सुनते रहे और अन्त में बोले "आप जैसे व्यक्ति मेरे पास मांगने आ गए हैं। कांग्रेस के नेता हैं आप। बस आप हुक्म कीजिए मैं उतने का चैक दे दूंगा।"

"दस हजार।

"मिस्टर बोस!" बड़े बाबू ने जोर की आवाज लगाई। चश्मा लगाए श्रीधर बोस ने प्रवेश किया।

"बोस बाबू! आपको ग्यारह हजार का चैक दे दीजिए।"

बोस बाबू चल गए।

थोड़ी देर वे दोनों घुट-घुटकर बातें करते रहे और बाद में बड़े बाबू स्नानादि करने चले गए। जाने के पहले बड़े बाबू बोले "मेरा परमिट गड़बड़ी में नहीं पड़ना चाहिए।"

संतोष अपने कमरे में बादाम का हलुआ और पापड़ खा रहा था। बड़े बाबू को चाय से बड़ी चिढ़ थी और उनका कहना था कि चाय पीने से आदमी की सेहत और दिमाग दोनों खराब हो जाते हैं।

पूजा से निवृत्त होते ही बसंतलाल का बेटा हनुमंतलाल आया। उनके सारे रुपयों में से बड़े बाबू ने एक लाख ही लौटाया था और बाद में कुछ दिन उन्हें टालते रहे और अंत में वे एकदम मुकर गए। लेकिन हनुमन्त जब कभी भी आता था वह बड़े बाबू से तकाजा जरूर करता था।

"क्यों हनुमन्त कैसे आना हुआ ?" बड़े बाबू आते ही पूछते।

"सेठजी रुपये ?"

वे निर्दयी की तरह लापरवाही की मुस्कान बिखेरकर बोलते 'तुम लोग पागल हो गए हो ? तुम लोगों ने मुझे क्या समझ रखा है। क्या मैं रुपये बनाता हूं ? मैं किसी टकसाल का क्या मालिक हू ?

"हम गरीब हैं। आप ?

"सुनो हनुमन्त। बड़े बाबू गम्भीर होकर कहते। "यह कहने का बहुत पुराना ढंग हो गया है। गरीब हैं, भूखे हैं, मजबूर हैं जैसी शब्दावली का अब इस युग में कोई महत्त्व नहीं रहा। इसमें छिपे ब्लैकमेलिंग से सभी परिचित हो गए हैं। और व्यापार में इन शब्दों का उतना ही प्रभाव रहता है जितना जल्लाद के समक्ष क्षमा और जीवनदान जैसे शब्दों का। मैं तुम्हें अंतिम बार कह रहा हूं कि व्यर्थ में मेरा और अपना समय बर्बाद न करो। मैंने बता दिया है कि बैंक के फेल होने में मेरा कोई हाथ नहीं है। मैंने सिर्फ तुम्हारी विधवा बुआ का ख्याल करके एक लाख रुपये अपनी जेब से दिए हैं।"

हनुमंत सदा की तरह आज भी चला गया।

घटना इस तरह है कि आज से लगभग दस वर्ष पहले बड़े बाबू ने एक बैंक खोला था। उस बैंक में जब जनता के काफी रुपये जमा हो गए तब उसे फेल कर दिया। उसी बैंक में बसंतलाल को फुसलाकर बड़े बाबू ने बसंतलाल की बहिन के सारे रुपये जमा करा दिए थे। इस बैंक के फेल होने से बड़े बाबू को लगभग बीस-तीस लाख का लाभ हुआ क्योंकि उन्होंने कई झूठी कम्पनियों का

विद्रोहात्मक दृष्टि से ही सोचता है।

सम्पत की चरित्र-कथा इस तरह थी कि बड़े बाबू ने उसकी तमाम सम्पत्ति हड़प ली और उसे पराश्रयी बना लिया। अब वह उस बूढ़ी नौकरानी के साथ कुलबाजियां करता हुआ अपना शेष जीवन गुजार रहा है। वह एकांत में बड़ी बाड़ी के एक कमरे में पड़ा रहता है। उसे देखकर किसान के उस बैल की याद आ जाती है जो उम्र भर खेत जोतता है और बाद में जब वह खेत जोतने के काबिल नहीं रहता तब उसे भूखा व प्यासा छोड़ दिया जाता है। वह रात-दिन अन्धकार से घिरे उस कमरे में पड़ा रहता है।

भोर का समय था।

बाल रवि की रश्मियां संसृति से अपना नाता-रिश्ता जोड़ चुकी थीं।

बड़े बाबू बैठकखाने में बैठे हुए किसी कांग्रेसी नेता से बातचीत कर रहे थे। स्वतन्त्रता के बाद कई व्यापारी गांधीजी के भाषणों से अत्यन्त प्रभावित हुए और उनके भाषण के फलस्वरूप वे देश-सेवा में उतर पड़े। या यों कहिए कि उनका हृदय-परिवर्तन हो गया। ऐसे तुरन्त बदले हुए हृदय के नेता थे श्री मोहनलाल। वे बड़े बाबू के पास चन्दा मांगने आए थे। किसी गांधी पाठशाला का निर्माण होने जा रहा था।

बड़े बाबू उनकी बातें ध्यान से सुनते रहे और अन्त में बोले "आप जैसे व्यक्ति मेरे पास मांगने आ गए हैं। शासन के नेता हैं आप। बस आप हुक्म कीजिए मैं उतने का चैक दे दूंगा।"

"दस हजार।"

"मिस्टर घोष !" बड़े बाबू ने जोर की आवाज लगाई। चश्मा लगाए मैनेजर घोष ने प्रवेश किया।

"घोष बाबू ! आपको ग्यारह हजार का चैक दे दीजिए।"

घोष बाबू चले गए।

थोड़ी देर वे दोनों घुल-घुलकर बातें करते रहे और बाद में बड़े बाबू स्नानादि करने चले गए। चलने से पहले बड़े बाबू बोले "मेरा परिचय अखबारों में नहीं छपना चाहिए।"

संतोष अपने कमरे में बादाम का हलुवा और पापड़ खा रहा था। बड़े बाबू को चाय से बड़ी चिढ़ थी और उनका कहना था कि चाय पीने से आदमी की सेहत और दिमाग दोनों खराब हो जाते हैं।

पूजा से निवृत्त होते ही बसंतलाल का बेटा हनुमंतलाल आया। उनके सारे रुपयों में से बड़े बाबू ने एक लाख ही लौटाया था और बाद में कुछ दिन उन्हें टालते रहे और अंत में वे एकदम मुकर गए। लेकिन हनुमन्त जब कभी भी आता था वह बड़े बाबू से तकाजा जरूर करता था।

"क्यों हनुमन्त कैसे आना हुआ ?" बड़े बाबू आते ही पूछते।

"सेठजी रुपये ?"

वे निर्दयी की तरह लापरवाही की मुस्कान बिखेरकर बोलते, 'तुम लोग पागल हो गए हो ? तुम लोगों ने मुझे क्या समझ रखा है ! क्या मैं रुपये बनाता हूं ? मैं किसी टकसाल का क्या मालिक हूं ?

"हम गरीब हैं। आप" ?

"सुनो हनुमन्त ! बड़े बाबू गम्भीर होकर कहते। "यह कहने का बहुत पुराना ढंग हो गया है। गरीब हैं, भूखे हैं, मजबूर हैं जैसी शब्दावली का अब इस युग में कोई महत्व नहीं रहा। इसमें छिपे खोखलेपन से सभी परिचित हो गए हैं। और व्यापार में इन शब्दों का उतना ही प्रभाव रहता है जितना बलात्कार के समय क्षमा और जीवनदान जैसे शब्दों का। मैं तुम्हें अंतिम बार कह रहा हूं कि व्यर्थ में मेरा और अपना समय बर्बाद न करो। मैंने बता दिया है कि बैंक के फेल होने में मेरा कोई हाथ नहीं है। मैंने सिर्फ तुम्हारी विधवा बुआ का ख्याल करके एक लाख रुपये अपनी जेब से दिए हैं।

हनुमंत सदा की तरह आज भी चला गया।

घटना इस तरह है कि आज से लगभग दस वर्ष पहले बड़े बाबू ने एक बैंक खोला था। उस बैंक में जब जनता के काफी रुपये जमा हो गए तब उसे फेल कर दिया। उसी बैंक में बसंतलाल को फुसलाकर बड़े बाबू ने बसंतलाल की बहिन के सारे रुपये जमा करा दिए थे। इस बैंक के फेल होने से बड़े बाबू को लगभग बीस-तीस लाख का लाभ हुआ क्योंकि उन्होंने कई झूठी कम्पनियों का

निर्माण करके सारा रुपया हड़प लिया। बाद में उन्होंने दया करके एक लाख रुपये बसंतलाल को दिए। इसका एक कारण और भी था कि बसंतलाल ने अपनी बहिन को बड़े बाबू के घर के आगे अनशन पर बिठाने की धमकी दे दी थी। लेकिन धीरे-धीरे लोग उनकी चालबाज़ियों को समझ गए और उन्हें परमसन्त बेईमान भी कहा।

बड़े बाबू उस कांड में साफ बच गए। उनके मैनेजर को हथकड़ियाँ पड़ गईं। मध्यम वर्ग के लोग बैंक के आगे खूब रोए-चीखे पर परिणाम कुछ भी नहीं निकला। कहते हैं—गरीबों की आहों से तख्त के तख्त पलट गए हैं पर बड़े बाबू उन आहों से और फलीभूत हुए। उनका व्यापार दिन दूना और रात चौगुना बढ़ता गया।

बड़े बाबू वापस काम में व्यस्त हो गए।

यांत्रिक मानव की तरह हर घड़ी काम-काज।

मनुष्य की यौन भूख कभी भी शांत नहीं होती। पर बड़े बाबू इन वर्षों में यह भी भूल गए कि औरत क्यों होती है? जब पत्नी की मृत्यु हुई तब वे चीख चीखकर नहीं रोए और न ही वे पागलों की तरह गुमसुम बैठे रहे। केवल उन्होंने इतना ही कहा "कर्म की बात निराली होती है। हर व्यक्ति यहाँ अपना लेना-पावना चुकाकर चला जाता है। पश्चात्ताप व करुणा विलाप करने से मृतक की आत्मा कलपा करती है।"

और उसी रात उन्होंने फोन पर एक सौदे की पांच मिनट तक बातें की और उसमें भी उन्होंने हार नहीं हारा।

किन्तु अब तीन वर्षों से वे कभी-कभी अपने जीवन से घोर एकदम ऊब जाते हैं और उन्हें एक विचित्र शून्यता सताती है तब वे रात के समय बहू बाज़ार की एक तवायफ के यहां थोड़ी देर के लिए चले जाते हैं। तवायफ का नाम बहीरा है। बड़े बाबू उसे पांच सौ रुपया माहवार देते हैं।

इसके साथ बड़े बाबू आजकल कट्टर वैष्णव हो गए हैं। मंदिरों में जाना और नित्य धर्म-कर्म करना। बड़े-बड़े अन्नकूट कराना तथा महन्तों का प्रचार प्रसार करना।

आज भी उनके बंगले में राजस्थान के कोई महन्त आनेवाले थे। बड़े बाबू ने सारे बंगले को साफ कराया और खुद दो-तीन दिन के लिए व्यापार से फुर्सत लेनी चाही।

संतोष को उन्होंने बुलाया।

संतोष आकर उनके पास चुपचाप बैठ गया।

"मैंने तुम्हें इसलिए बुलाया है कि तुम तीन दिन तक जरूरी कागजात देखकर मुझे बताते रहना।"

कागजात बताते रहने से सीधा तात्पर्य यह था कि बड़े बाबू ने अभी तक यही सोच रखा था कि वे अपने बेटे से बड़ी कूटनीति से काम लेंगे। ताकि धन जैसी अत्यन्त आकर्षक वस्तु उनके बच्चे को उन जैसा स्वार्थी न बना दे। एक बात और भी थी। बड़े बाबू को किसीपर पूरा विश्वास नहीं होता था। अतः वह यही चाहते थे कि सारा काम वे स्वयं देखें तथा सारी जायदाद उन्हीं के नाम पर रहे किन्तु इधर कुछ ऐसी दिक्कतें तथा परेशानियाँ उत्पन्न हो रही थीं कि वे अपने बच्चे को विवश होकर कुछ कम्पनियों का मालिक व हिस्सेदार बनाने जा रहे थे अथवा उन्होंने ऐसा सोच लिया था। इन्कमटैक्स विभाग इसका सबसे मूल कारण था। उन्होंने सोच लिया था कि उनका बेटा उनका भागीदार और उनकी कम्पनियों का मालिक होते हुए भी कुछ भी नहीं जान पाएगा। वे उससे इस तरह का काम लेंगे कि उसे धन जैसी भयानक वस्तु अधिक प्रभावित ही नहीं कर पाएगी।

संतोष ने कहा, "यह आज एकाएक मुझपर क्यों बोझ डाल रहे हैं ?"

"क्यों क्या ?" बड़े बाबू का स्वर कठोर हो गया, "आखिर अब तुम बच्चे नहीं हो। जवान बेटे को अपने बाप की सलाह देने के साथ-साथ व्यापार में भी जुट जाना चाहिए।"

"लेकिन"... ?

"समझा।" बड़े बाबू का स्वर एकदम बदल गया, "इन निकम्मी डिग्रियों के कारण तुममें भी निकम्मापन आ रहा है। एम० ए० बी० ए० पास करने से तुम्हें क्या लाभ होगा ? मैं सिर्फ तुम्हारा हित न हुआ इस वास्ते मजबूर हुआ

निर्माण करके सारा रुपया हड़प लिया। बाद में उन्होंने दया करके एक लाख रुपये बंसतलाल को दिए। इसका एक कारण और भी था कि बसंतलाल ने अपनी बहिन को बड़े बाबू के घर के आगे अनशन पर बिठाने की धमकी दे दी थी। लेकिन धीरे-धीरे लोग उनकी चालबाजियों को समझ गए और उन्हें अत्यन्त बेईमान भी कहा।

बड़े बाबू उस कांड में साफ बच गए। उनके मैनेजर को हथकड़ियां पड़ गईं। मध्यम वर्ग के लोग बैंक के आगे खूब रोए-चीखे पर परिणाम कुछ भी नहीं निकला। कहते हैं—गरीबों की आहों से तख्त के तख्त पलट गए हैं पर बड़े बाबू उन आहों से और फलीभूत हुए। उनका व्यापार दिन दूना और रात चौगुना बढ़ता गया।

बड़े बाबू वापस काम में व्यस्त हो गए।

यांत्रिक मानव की तरह हर घड़ी काम-काज।

मनुष्य की धन भूख कभी भी तृप्त नहीं होती। पर बड़े बाबू इन वर्षों में यह भी भूल गए कि औरत क्यों होती है? जब पद्म की मृत्यु हुई तब वे चीख चीखकर नहीं रोए और न ही वे पागलों की तरह गुमसुम बैठे रहे, केवल उन्होंने इतना ही कहा "कर्म की बात निराली होती है। हर व्यक्ति यहां अपना लेना-पावना चुकाकर चला जाता है। पश्चात्ताप व करुणा विलाप करने से मृतक की आत्मा कलपा करती है।

और उसी रात उन्होंने फोन पर एक सौदे की पांच मिनट तक बातें कीं और उसमें भी उन्होंने दांव नहीं हारा।

किन्तु गत तीन वर्षों से वे कभी-कभी अपने जीवन से जब एकदम ऊब जाते हैं और उन्हें एक विचित्र शून्यता सताती है तब वे रात के समय बहू बाजार की एक तवायफ के यहां थोड़ी देर के लिए चले जाते हैं। तवायफ का नाम नहीरा है। बड़े बाबू उसे पांच सौ रुपया महावार देते हैं।

इसके साथ बड़े बाबू आजकल कट्टर वैष्णव हो गए हैं। मंदिरों में जाना और नित्य धर्म-कर्म करना। बड़े-बड़े अन्नकूट कराना तथा मठों का प्रचार प्रसार करना।

आज भी उनके बंगले में राजस्थान के कोई महत्त्व आनेवाले थे। बड़े बाबू ने सारे बंगले को साफ कराया और खुद दो-तीन दिन के लिए व्यापार से फुर्सत लेनी चाही।

संतोष को उन्होंने बुलाया।

संतोष आकर उनके पास चुपचाप बैठ गया।

"मैंने तुम्हें इसलिए बुलाया है कि तुम तीन दिन तक दफ्तरी कामकाज देखकर मुझे बताते रहना।"

कामकाज बताते रहने से सीधा तात्पर्य यह था कि बड़े बाबू ने अभी तक यही सोच रखा था कि वे अपने बेटे से बड़ी कूटनीति से काम लेंगे। ताकि मन जैसी अदृश्य आकर्षक वस्तु उनके बच्चे को उन जैसा स्वार्थी न बना दे। एक बात और भी थी। बड़े बाबू को किसीपर पूरा विश्वास नहीं होता था। अतः वह यही चाहते थे कि सारा काम वे स्वयं देखें तथा सारी जायदाद उन्हीं के नाम पर रहे किन्तु इधर कुछ ऐसी दिक्कतें तथा परेशानियां उत्पन्न हो रही थीं कि वे अपने बच्चे को विवश होकर कुछ कम्पनियों का मालिक व हिस्सेदार बनाने जा रहे थे अथवा उन्होंने ऐसा सोच लिया था। इन्कमटैक्स विभाग इसका सबसे मूल कारण था। उन्होंने सोच लिया था कि उनका बेटा उनका भागीदार और उनकी कम्पनियों का मालिक होते हुए भी कुछ भी नहीं जान पाएगा। वे उससे इस तरह का काम लेंगे कि उसे मन जैसी भयानक वस्तु अधिक प्रभावित ही नहीं कर पाएगी।

संतोष ने कहा "यह आज एकाएक मुझपर क्यों बोझ डाल रहे हैं?"

"क्यों क्या?" बड़े बाबू का स्वर कठोर हो गया "आखिर अब तुम बच्चे नहीं हो। जवान बेटे को अपने बाप को सलाह देने के साथ-साथ व्यापार में भी जुट जाना चाहिए।"

"लेकिन... ?"

"समझा।" बड़े बाबू का स्वर एकदम बदल गया "इन निकम्मी डिग्रियों के कारण तुममें भी निकम्मापन आ रहा है। एम० ए० बी० ए० पास करने से तुम्हें क्या लाभ होगा? मैं सिर्फ तुम्हारा दिल न टूटे इस वास्ते अबतक कुछ

शौक नहीं रहा था। वर्ना चार-पांच क्लास की शिक्षा ही तुम्हारे लिए बहुत होती। पढ़ना जितना महत्त्व नहीं रखता उतना गुनना महत्त्व रखता है। कोई भी काम-काज सीखने से आता है। मैं चाहता हूं कि अब तुम लक्ष्मी मिल्स तथा वैष्णव मिल्स दोनों का काम संभाल लो। आखिर जीवन में तुम्हें किसीकी नौकरी न करके व्यापार ही करना है। फिर आज जैसे जमाने में दूसरों को व्यापार की गुप्त बातें नहीं बताई जा सकतीं और न ही उनपर अत्यन्त विश्वास किया जा सकता। ऐसी स्थिति में तुम्हें मेरा साथ देना ही पड़ेगा।'

'पिताजी ठीक ही कह रहे हैं।' ऐसा संतोष ने मन-ही-मन सोचा। 'आखिर मुझे एक दिन इस विपुल सम्पत्ति का स्वामी होना ही है।'

ये शिक्षाएं मनुष्य में झूठे अहम् की सर्जना करती हैं। एक व्यापारी को इन सबसे एकदम दूर रहना चाहिए। क्योंकि व्यापार का पहला उसूल है—*विनम्रता और बड़े से बड़े अपमान को मधुर मुस्कान के साथ पी जाना।* अपने व्यापार के छोटे से छोटे और बड़े से बड़े काम को समय पर अपने हाथों से पूरा करना।"

"मैं कल से दफ्तर चला जाऊंगा पर मैं उन कामों के लिए सर्वथा नया और अयोग्य हूं।"

"मेरे बेटे!" वे उपदेशक की तरह गंभीर होकर बोले, "जब मैं घर से यहां आया था तब मेरे लिए खाने के लाले पड़े हुए थे। सुबह-शाम की चिंता रहती थी। कोई हाथ पकड़कर सहारा देनेवाला नहीं था। इतना भी जानता नहीं था कि व्यापार का क-ख-ग क्या होता है पर एक लगन थी एक धुन थी। रात-दिन बस एक ही वाक्य मेरे मस्तिष्क में गूंजता था कि मैं खूब पैसा कमाऊंगा। इतना पैसा कि आज जो लोग मुझे गिरी हुई नजर से देखते हैं वे ही मुझे आदर की नजर से देखें। धुन और परिश्रम की बदौलत आज मेरे पास क्या नहीं है। मेरे वे साथी जो बचपन में मेरा अपमान किया करते थे आज मेरे सहारे जी रहे हैं। मुझे हाथ जोड़ते हैं। मेरा कुछ अपनी हवेली में बैठने को तत्पर रहते हैं। कभी-कभी मैं उनसे बदला लेता हूं। उनका जान-बूझकर अपमान करता हूं और वे अपमान को इस तरह हंसकर पी जाते हैं जैसे मैंने जाम

जानकर उनका अपमान नहीं किया है। सचमुच तब मुझे आनंद आता है। एक ऐसा खुमार मुझपर छा जाता है जैसा किसी विजेता के मन पर छाता है। क्योंकि जीवन में लगातार विष के घूंट पीनेवाले को कभी-कभी दूसरों को भी विष पिलाने में आनंद ही आता है। अरे, मैं बहक गया हूं। मैं तुम्हें कह रहा था कि ये डिग्रियां आदमी को निकम्मा बनाती हैं। आदमी इनके बोझ से अपने व्यक्तित्व के रंग-रूप अवश्य बदल लेता है पर थोड़े ही दिनों में वह उनके बोझ से दब भी जाता है। मेरे कहने का मतलब यह है कि एम० ए० पास को आजकल नौकरी भी नहीं मिलती है। तुम मेरे इकलौते बेटे हो अतः मैं जानबूझ कर गर्त में इस रास्ता के आगे एक कदम भी नहीं रखने दूंगा।"

"मैं कल से काम संभालने की चेष्टा करूंगा।" उसने दबे स्वर में कहा।

"यह बात हुई न!" बड़े बाबू प्रसन्नता में चिल्ला पड़े "मैं अब महन्तजी की सेवा में व्यस्त रहूंगा। वैसे तो व्यापार के अनेक झंझटों में घड़ी-भर भी ईश्वर की आराधना नहीं होती है पर जब महाराजजी आ ही गए हैं तो पुण्य-लाभ कर ही लेना चाहिए।" कहकर बड़े बाबू कपड़े पहनने लगे। नौकर ने उन्हें दूध लाकर दिया। वे दूध पीकर बोले "संतोष! कल से तुम बंगले में ही रहना। यहां रहना तुम्हें शोभा नहीं देता। क्योंकि बिड़ला-डालमिया के परिवार आजकल शाही ठाठ से रहते हैं। मेरी इच्छा यह है कि हम भी उसी दबदबे से रहना चाहिए। हम किसीसे कम थोड़े ही हैं।"

संतोष खुद भी यह चाहता था। यहां हर घड़ी बड़े बाबू का अंकुश रहता था और वह उनके होते हुए घर में आना पसंद भी नहीं करता था। सच यह उनके व्यक्तित्व का आतंक भी एक सीमा तक उसपर छाया हुआ था। इसलिए संतोष ने उनकी यह बात शीघ्र ही स्वीकार कर ली। और बड़े बाबू उसे यहां से इसलिए बंगले भेजना चाहते थे कि संतोष उनके उन गुप्त कार्यों से परिचित न हो।

उसके स्वीकार करते ही बड़े बाबू सम्पत के पास गए। सम्पत अफीम के नशे में मग्न था। बूढ़ी नौकरानी उससे हंसकर बोल रही थी।

सम्पत उसे कह रहा था "मैंने बीड़ी का बिसरा दिया है। पर यह सब

है......।"

बड़े बाबू दरवाजे के बाहर ही रुक गए।

सम्पत बोलता ही गया 'यह सच ही नहीं, सप्रमाण भी है कि तुमने बड़े बाबू के संकेत पर मुझे लूटा है। तुमने उनसे रुपये लेकर मुझे अपने पास में फंसाया और अफीम खिलाना प्रारंभ कर दिया। ओह! तुम एक कुलटा नटी हो। पर मैं यह जानना चाहता हूं कि बड़े बाबू ने तुम्हें कितना रुपया दिया है, ऐसा नीच और घृणित काम करने का।"

"तुम्हें भ्रम है सम्पत! मैं तुम्हें हृदय से चाहती हूं। क्या कोई स्त्री उम्र भर किसी पुरुष के संग पालतू पशु की तरह बंधकर रहना चाहेगी जबकि उसे केवल मेहनताना एक बार का ही मिले। तुम बिलकुल बुद्धू हो। तुम कैसे दलाली करते थे?

"देखो सीता तुम हर बात में झूठ बोलती हो। क्या तुम्हें मुझे बर्बाद करने के लिए बड़े बाबू ने नहीं कहा था? अगर ऐसा नहीं है तो तुम्हें बड़े बाबू ने अब तक क्यों रख छोड़ा है जबकि वे हर बूढ़े नौकर को छुट्टी दे चुके हैं? पता नहीं तुमने मुझे बाहर क्यों नहीं किया?

वह हंसकर सम्पत के सिर पर हाथ फेरने लगी "तुम सचमुच बुद्धू हो। दलाली जैसा चतुराई का धंधा तुम किस तरह सफलतापूर्वक कर सके थे यह मेरे लिए एक आश्चर्य का विषय है। तुम्हें तो किसी दुकान का तकाजागीर होना चाहिए। क्योंकि एक तकाजागीर ही ऐसा सीधा आदमी होता है जो मालिक के कहने से तकाजा ले आता है और उसमें उसकी जरा बुद्धि खर्च नहीं होती।" और सीता हाथ जोड़कर, आंखें बन्दकर ईश्वर से प्रार्थना करने लगी। वह आंखें खोलकर बोली "हे राम! तुमने मुझे अपना भी दिया तो कितना बेवाला! मुझपर विश्वास ही नहीं करता। सुनो सम्पत! अगर, भविष्य में तुमने इस तरह की कठोर व नीच बातों से मेरा दिल तोड़ा तो मैं तुम्हारे नजदीक नहीं फटकूंगी।

"तुम मुझे ऐसी धमकी देकर डरा कर देती हो। सीता! एक बात पूछूं? सौगन्ध खाओ कि सच-सच कहोगी?"

"हां।"

"मुझसे तुमने खूब रुपया ऐंठा है। वे रुपये तुमने कहां जमा कर रखे हैं? मेरी इच्छा है कि उन रुपयों को निकालो। मैं तुम्हें लेकर कहीं और चला जाऊंगा ताकि हम सुख-शांति के साथ निर्भयतापूर्वक रहें।"

"बावले। मेरे पास कुछ भी नहीं है।"

"झूठ।"

बड़े बाबू ने खखारा। वे दोनों चौंक गए।

सीता तेज स्वर में बोली, "इन अफीमचियों को व्यर्थ की बातें करने में बड़ा आनन्द आता है। बोलना शुरू करने के बाद चुप होने का नाम ही नहीं लेते। बस बोलते ही जाते हैं।"

"तुम आजकल अर्थहीन भोला बनती जा रही हो!" बड़े बाबू ने कठोर स्वर में कहा।

"नहीं-नहीं बड़े बाबू, यह बोलता ही रहता है।

बड़े बाबू ने सम्पत पर दृष्टि डाली। वह मुंह ढककर सो गया था। बूढ़ी सीता थरथर कांप रही थी।

बड़े बाबू उसपर तेज नजर फेंकते हुए बोले, "तुम सठिया रही हो। अब तुम्हें मैं जल्दी ही छुट्टी दूंगा।"

बड़े बाबू के वार्ड से बाहर निकलते ही सीता आगबबूला हो उठी। भड़कती हुई वह बोली, "मुआ, तुम्हारे कारण मेरी नौकरी भी जाएगी। लाख बार कह दिया कि सोच-समझकर बोला करो, पर तुम जब बोलने लगते हो तो बोलते ही जाते हो।"

सम्पत ने फिर गर्दन उचकाई और बोला, "तुम बहुत चतुर हो। मुझे अफीम खिला-खिलाकर निकम्मा कर दिया और प्रेम का स्वांग रच रचकर तुमने मुझे लूट लिया और अब इस उम्र में तुम मेरा साथ देने को तैयार नहीं हो!" वह दर्द भरी आह छोड़कर बोला, "तुममें एक चतुर गणिका के सारे गुण हैं। एक तरफ तुमने मुझे भी लूटा और दूसरी तरफ बड़े बाबू से भी मेहनताना लिया। क्या तुम्हें परलोक का भय नहीं है? हे ईश्वर, इन सब

इन्सानों को क्या हो गया है ? क्या इन्हें मृत्यु के बाद तुम्हारे दण्ड का भय नहीं ? लगता है कि तुम्हारे भयानक दण्ड का भय अब इन प्राणियों के मन से दिन प्रतिदिन दूर होता जा रहा है।" कहकर उसने अपनी मुद्रा एक प्रार्थना में निमग्न भक्त की तरह बना ली।

सीता ने उसे देखकर नाक भौंह सिकोड़ा और चल पड़ी।

उस रात बड़े बाबू नहीं सो सके। उन्हें आज फिर नई योजना सता रही थी। जैसी कि उनकी बरसों की आदत थी वे किसी भी कार्य को कार्यान्वित करने के पूर्व उसके बारे में अत्यन्त धैर्य से सोचते-विचारते थे। प्रारम्भ से लेकर परिणाम तक विश्लेषण वे बखूबी करते थे जिससे उन्हें कभी-कभी रात-रात भर नींद नहीं आती थी पर इससे उनकी सेहत पर जरा भी बुरा असर नहीं हुआ। बल्कि उनकी तन्दुरुस्ती दिन-प्रतिदिन ठीक होती गई। प्रकृति भी विचित्र है। बड़े बाबू अपनी सेहत के प्रति जितने लापरवाह रहते थे वे उतने ही निखर रहे थे। इस निखार के कारण ही सम्पत यह कहता रहता था कि बड़े बाबू के पास सुविधायें आती रहती हैं। और उसका कर्मवादियों की तरह यकीन हो गया था कि यदि आदमी को आराम रूपी मिलती रहे तो वह बूढ़ा नहीं हो सकता। वस्तुतः इस वाक्य का प्रयोग अमूमन शिक्षित व अशिक्षित लोग साधारण वार्तालाप में प्रसंगवश करते हैं। बूढ़े लोग इस तरह के वाक्य कहते समय अपनी गहन विज्ञता का परिचय देते हुए लगते हैं।

आज भी बड़े बाबू नहीं सो पाए। महाराजजी का भव्य स्वागत निरन्तर होना चाहिए, इससे लेकर उनसे कैसे रुपये ऐंठे जाएं, तक की योजना को उन्होंने एक कुशल योजना-मन्त्री की तरह सोच लिया। उन्हें यह भी मालूम था कि महाराजजी बम्बई में क्या करते हैं। गत वर्ष उनकी भेंट महाराजजी के एक हाजरिये से हो गई थी। हाजरिया गोस्वामी जाति का था। उसका कहना था कि वह भी उतना ही पवित्र और पूजनीय है जितने महाराजजी क्योंकि

उन दोनों का रक्त-गौरव और जातीय गौरव एक ही है पर भाग्य के कारण वह उनका हाजरिया है। वह हाजरिया जिसकी बेटी का विवाह होनेवाला था बड़े बाबू से एक हजार एक रुपया ले गया और उसके बदले उन्हें महाराजजी की व्यक्तिगत कुछ बातें बता गया। उसकी बातें सुनकर बड़े बाबू का हौसला बढ़ा और उन्होंने महाराजजी को एक बार पधारने का अनुरोध किया। करीब दस बार अनुरोध करने के बाद महाराजजी आने को तैयार हुए और पधार भी गए।

बड़े बाबू इसी तिकड़म में थे कि कुछ ऐसा आयोजन किया जाए जिससे महाराजजी पर निकटतम निजत्व का प्रभाव पड़े ताकि वे उन्हें उनकी व्यक्तिगत दुर्बलताएं जानने का संकेत दे सकें।

हालांकि बड़े बाबू अच्छी तरह जानते थे कि महाराजजी जब बम्बई में रहते हैं तब एक बोतल शराब तथा एक स्त्री का रात्रि के भोजन व पानी की तरह सेवन करते हैं। उनकी मोटरें सड़कों पर चीखती-चिल्लाती हवा से बातें करती रहती हैं और अर्थाभाव के कारण महाराजजी यदा-कदा मंदिर की पूंजी को गुप्त रूप से बेचते रहते हैं। क्या ही अच्छा हो कि उसमें से कुछ हीरे जवाहरात ही उनके हाथ लग जाएं? कल रात उन्हें इस बात का सख्त अफसोस रहा कि वे निरन्तर प्रयास के बावजूद बातचीत में ऐसा कोई भी संकेत नहीं दे पाए जिससे उनका आंतरिक मंतव्य प्रकट होता हो। लेकिन फिर भी वे इस बात का आभास उन्हें जरूर कराएंगे ऐसी वे दृढ़ प्रतिज्ञा कर चुके हैं।

सचमुच तीन दिन के भीतर भीतर बड़े बाबू ने उस 'गोपी वल्लभ' को यह भान करा ही दिया कि वे उनके बारे में सब कुछ जानते हैं। बड़े बाबू ने शहर की प्रतिष्ठित घराने की युवतियों को 'अम्मपुर' में बुलाया। सुन्दर युवतियों पर महाराजजी के चरण फिसलते गए और अन्त में उन्हें यह भी मालूम पड़ गया कि महाराजजी कुछ ऐसी गोलियों का सेवन करते हैं जिससे उन्हें नशा-सा छाया रहता है।

चौथे दिन की विदाई के समय महाराजजी ने बड़े बाबू को अपने यहां आने का निमन्त्रण दे दिया। निमन्त्रण पाकर बड़े बाबू के चेहरे पर सफल

षड्यंत्रकारी जैसी प्रसन्नता छा गई ।

'मुझे वह दस करोड़ की कम्पनी खरीदनी है ।' उन्होंने मन ही मन सोचा और उनकी आँखों में कभी न बुझनेवाली ज्वाला जाग उठी ।

रात को उन्होंने संतोष के साथ खाना खाया । बाप-बेटे बड़ी देर तक मौन रहे । दोनों अपने-अपने विचारों में तन्मय । अन्त में बड़े बाबू ने ही संतोष से कहा "मैं कल सप्ताह-भर के लिए बाहर जा रहा हूँ । मिस्टर मिल्टन साहब अपनी कम्पनी बेचना चाहते हैं । वे तीन करोड़ नकद और सात करोड़ की जमानत चाहते हैं ।"

"मुझे आप हुक्म दीजिए ।" संतोष ने विनम्रता से कहा ।

"आह ! तुम कैसे मेरे बेटे हो ? तुमने वास्तव में इन डिग्रियों के चक्कर में अपना सारा समय बर्बाद कर दिया ! अगर तुम प्रारम्भ से ही मेरा कारोबार संभालते तो तुम आज इतने काबिल हो जाते कि दो-चार करोड़ का प्रबन्ध यों चुटकी बजाते हुए कर देते ? फिर भी मैं हिम्मत हारनेवाला नहीं हूँ । मुझे सब मालूम है कि रुपया पाने के क्या तरीके हो सकते हैं !" बड़े बाबू परेशान हो उठे । उन्होंने खाना छोड़ दिया और जल्दी से हाथ धोकर कमरे में चहलकदमी करने लगे । उनके माथे पर बार-बार पड़ रही शिकन ने संतोष को सोचने के लिए विवश किया और वह भी तृप्ति से भोजन किए बिना ही उठ गया "आप इतने व्यग्र क्यों हैं ? अब हमारे पास काफी अच्छी और बढ़िया कम्पनियाँ हैं । खूब इन्कम है । फिर आप नई परेशानी में क्यों पड़ते हैं ?"

बड़े बाबू नथुने सिकोड़कर एकदम पलटे । उनकी आवाज इतनी दबी हुई थी जैसे कोई धरती के बहुत नीचे से बोल रहा हो "तुम ऐसी निरर्थक बात कहकर मुझे अवश्य बदनाम करोगे ! क्या एक करोड़पति दूसरे करोड़पति के समक्ष अपनी हार मान लेगा वह भी बिना लड़े-भिड़े ? यदि वह ऐसा करता है तो समझ लो वह करोड़पति बनने के काबिल ही नहीं है । पैसे की ज्वाला ही पूंजीपति को पूंजीपति कायम रखती है । फिर कभी इस तरह की बात इन आदमियों के सामने मत कहना । वे मेरे खून पर हंसेंगे ।"

संतोष ने अपने स्वर को प्रार्थना की तरह विनम्र करके कहा "आप मेरे

कहने का मर्म नहीं समझे ? मैं आपसे यह कहना चाहता था कि मनुष्य को उतना ही व्यापार बढ़ाना चाहिए जिसे वह अच्छी तरह संभाल सके।" वह क्षणभर रुककर बोला "फिर आज विश्वासपात्र आदमी कहाँ मिलते हैं ? जिस पर जरा भी विश्वास करो वही लाभ को दौड़ता है।"

"मैं अकेला अभी दस मिलों का काम देख सकता हूं। बड़े बाबू ने मुझसा हट-मिश्रित गर्व से कहा "आदमी में साहस होना चाहिए। साहस और कर्म के प्रति शाश्वत चेष्टा। संतोष ! अब मुझे पूरा यकीन हो गया है कि तुम्हें ये किताबें निकम्मा बनाकर ही छोड़ेंगी। कल से तुम्हारा कालेज जाना बन्द।"

'पिताजी !

'बनिये का धर्म है—पैसा कमाना। अगर कोई शिक्षा उसे इस धर्म से विमुख करती है तो उसे उस शिक्षा का तुरन्त त्याग कर देना चाहिए !" उन्होंने अपनी उंगलियों को जल्दी-जल्दी हिलाकर कहा "मैंने जीवन में बड़ी गलती की। मुझे तुम्हें पहले से ही अपने पास रख लेना चाहिए था।"

"पर अब दो ही वर्ष का काम है।"

"अब मैं तुम्हारा कहना नहीं मान सकता।" बड़े बाबू ने बड़ी दृढ़ता से कहा "आज मुझे अचानक यह महसूस हो रहा है कि मेरा बेटा ठीक रास्ते पर नहीं चल रहा है। मेरी इच्छा है कि कल से तुम कमर कसकर इस मैदान में आ डटो।" और वे मन ही मन बोले "मैंने इसपर अविश्वास करके अच्छा नहीं किया। इस दौड़ में मैं हार गया।"

संतोष कुछ बोलने को आतुर हुआ तभी बड़े बाबू आँखों की पुतलियाँ नचा कर बोले 'मुझे विश्वास है कि तुम एक निहायत आज्ञाकारी और अच्छे लड़के हो बाप की आज्ञा को अब एक सपूत बेटे की तरह मानकर चलोगे।"

संतोष को लगा कि वह कुछ कह नहीं पा रहा है। उसका गला रुंध गया है और उसकी तमाम विचार-शक्तियाँ शिथिल पड़ गई हैं। वह उठ गया और बाप को प्रणाम करके बंगले में आ गया। बंगले में उसका मन नहीं लगा तब वह मेरे पास आया और उसने यह दुःखभरी बात सुनाई। मैं सन्न रह गया। मैं कुछ रुकता-रुकता-सा बोला "क्या यह सच है।"

"बिलकुल। कल से मेरा कालेज जाना बन्द और ।"

"और क्या ?"

"यही कि दिनभर व्यापार जैसे नीरस काम में मशीन की तरह खपते रहो। वस्तुतः मैं अभी एम ए करना चाहता हूं पर मेरा यह सपना पूरा नहीं होगा। फिर पिताजी रात-दिन तिकड़म सोचते रहते हैं जैसे वे सारे देश का व्यापार अपनी मुट्ठी में कर लेना चाहते हों।"

"तुम्हारे पिताजी अत्यन्त भाग्यशाली और बुद्धिमान व्यक्ति हैं। बड़े-बड़े उद्योगपति उनकी सूझ-बूझ की सराहना करते हैं। मेरी राय है कि तुम्हें अपने पिताजी की आज्ञा को प्रभु-आज्ञा समझकर कार्य प्रारंभ कर देना चाहिए। आखिर तुम्हें ये डिग्रियां क्या काम देंगी ?"

"करना ही पड़ेगा। तुम जब पिताजी अत्यन्त गंभीर होते हैं तब मुझे बड़ा भय लगता है। उनकी आंखों में रोगग्रस्त प्राणी-सा उन्माद और वही ही वाचालता-जनित छाया छा जाती है। मैं डरने लगता हूं।"

मैंने उसपर व्यंग्य किया "अभी उस वातावरण में नहीं रहे हो। कुछ दिन उसी गद्दी पर आसीन रहकर मुझसे मिलना। वैसा ही उन्माद और वैसी ही वाचालता की छाया तुम्हारी आंखों में दिखलाई पड़ेगी। तुम्हारा हर मातहत तुमसे भय खाएगा। तुम्हारी वक्र भृकुटि का आतंक नौकर-चाकरों की नींद हराम कर देगा।"

"मैं इतना निष्ठुर बन जाऊंगा ?" उसने अत्यन्त भोलेपन से यह प्रश्न किया। उसकी भंगिमा ऐसी लग रही थी जैसे वह अपने-आपसे भी यह प्रश्न कर रहा हो।

"तुम समझते हो कि तुम्हारे पिताजी आरम्भ से ऐसे ही निष्ठुर थे ? नहीं। और हां मेरी नौकरी लग गई है। मैं यहां से दूर, बहुत दूर जा रहा हूं। जासूस पिताजी और माताजी ने बनने नहीं दिया पर संवाददाता मैं बन ही गया।"

'तुम मुझसे प्रेम नहीं करते ?' संतोष ने एकदम बात को बदला।

"क्यों ?"

'अगर मुझसे प्रेम करते तो तुम मुझे छोड़कर नहीं जाते ? खैर, मैं तुम्हें कहीं भी एडजस्ट कर सकता हूं।"

"नहीं मित्र।" मैं भावुकता से बोला "मेरा रास्ता और तुम्हारा रास्ता सर्वथा विपरीत है। कौन जानता है कि अब हम फिर कब मिलेंगे ? मित्रता चिरंजीव रहे मेरी यही कामना है।

मैं सचमुच उसे छोड़कर चला आया और संतोष व्यापार में इतना तन्मय हुआ कि धीरे-धीरे हम दोनों के बीच का पत्र-व्यवहार भी समाप्तप्राय हो गया। मैंने अपनी ओर से कभी भी पत्र का आदान प्रदान बन्द नहीं किया। पर उसने ही हाथ खींच लिया जिसका मुझे उन दिनों बड़ा दुख रहा। इससे भी अधिक मुझे इस बात का दुःख रहा कि उसने मेरे अखबार को एक पृष्ठ का विज्ञापन नहीं दिया। जबकि मुझे उन मित्रों ने आह्लादमग्न किया जो मुझे यदा-कदा मिलते थे और समय गुजारने के लिए मेरा साथ कर लिया करते थे। उस क्षणिक सहवास के समय में उनकी बातें बहुत वजनदार होती थीं। उनमें मित्रता की गहराई की व्याख्या होती थी और एक-दूसरे को कृतार्थ होने के आश्वासन भी दिए जाते थे। पर तत्काल मैं उन आश्वासनों एवं बातचीत को मैखाने में दो शराबियों की हुई बातचीत से अधिक महत्त्व नहीं देता था। बाद में उन मित्रों की वे बातें और आश्वासन कार्य में परिणत होते गए और संतोष मुझसे दूर से दूरतर होता गया। लेकिन एक बात और स्पष्ट कर दूं कि हमारी मित्रता की दूरी का कारण बड़े बाबू भी नहीं था। हां अगर संतोष मुझे चार-पांच पृष्ठ विज्ञापन दे देता तो मेरा रोब मेरे प्रकाशक पर खूब जम जाता। आज पत्रकारिता का धंधा भी एक उद्योग की तरह है और उद्योग में जो व्यक्ति अपने स्वामी को जितना अधिक लाभ पहुंचाता है वह उतना ही काबिल और उपयुक्त समझा जाता है। जो सम्पादक सम्पादन के साथ विज्ञापन संग्रह भी कर सकता, उसे कोई भी मालिक पदच्युत नहीं करता जबकि पत्र का मालिक मध्यम श्रेणी का हो। सच कहता हूं—मुझे संतोष ने विज्ञापन न देकर बुरा ही किया। मेरे हृदय में उसके प्रति आक्रोश भी उत्पन्न हुआ जिसे अब मैं उचित नहीं समझ पा रहा हूं। वस्तुतः वह उन दिनों अत्यन्त व्यस्त था। नया काम

और बड़े बाबू को रुपयों का अभाव। क्या करें? वे रात-दिन कलकत्ता बम्बई और राजस्थान का दौरा करते रहते थे और संतोष अन्य सारी जिम्मेवारियां सँभाल रहा था।

कुछ दिन बड़े बाबू की दशा आम चुनाव में खड़े होनेवाले उम्मीदवार की तरह रही।

अचानक एक दिन उनकी परेशानी प्रसन्नता में बदली हुई मिली।

मिस्टर साहब ने उन्हें आश्वासन दिया "हम अपनी कम्पनी सेठ तुमको ही देगा। अभी छः माह की और देर है। कुछ फाइनल नहीं किया है।"

बड़े बाबू को प्रसन्न देखते ही संतोष के चेहरे पर भी उज्ज्वल रेखाएं दौड़ीं।

"आज आप परेशान नहीं दिखते?"

भोजन करते समय संतोष ने अधरों पर स्मित बिखेरते हुए कहा।

'समझ लो मन में कोई परेशानी नहीं है। वैसे व्यापारी वही अच्छा लगता है जो किसी न किसी काम के लिए परेशान हो।

संतोष का मुंह उतर गया। उसने सोचा था कि पिताजी इस बात का उत्तर बड़ी शांति एवं प्रसन्नता से देंगे। पर पिताजी ने उसके हृदय पर आघात पहुंचा दिया।

"तुम उदास हो गए?" पिताजी हंस पड़े 'तुम मेरी बात के मर्म को नहीं समझे।" उन्होंने चुटकी के साथ जम्हाई ली "मेरे कहने का मतलब यह था कि आदमी को जितना अधिक हो सके अपने कार्य की सफलता के लिए व्यग्र व्यस्त रहना चाहिए। तभी वह बाजार का बादशाह बन सकता है। संतोष और शांति योगियों के लिए ही उपयुक्त रहती है।"

संतोष इस उत्तर से आश्वस्त नहीं हुआ।

"संतोष मैं सेठ पन्नालाल के पास जा रहा हूं। क्यों? वे तुम्हें अपना समधि बनाना चाहते हैं। उनकी लड़की है। मैं तुम्हारा विवाह उससे तय करना चाहता हूं। मुझे वैसे तुम्हारी सम्मति की आवश्यकता नहीं है, पर जवान बेटा दोस्त के बराबर होता है।"

संतोष ने दबे स्वर में कहा "मैं उस लड़की को ''

मंतिम कौर मुंह में डालते हुए बड़े बाबू ने कहा "तुम लड़की को देखना चाहते हो ? यह भी उन निकम्मी डिग्रियों का प्रभाव है। क्या कालेजों में हर पुरानी बात का विरोध करना ही क्रांति समझा जाता है। यह सही है तो मुझे कहना पड़ेगा—ये कालेज छात्रों को बुरा बनाते हैं। लड़की को देखने का मतलब है कि अपने जन्मदाता बाप पर अविश्वास करना। क्या यह सच है कि एक बाप अपने इकलौते बेटे के जीवन को विनाश करेगा ? या तुम उस लड़के की तरह हो जो नितान्त उच्छृंखल होता है और अपनी तर्क शक्ति के द्वारा यह साबित करना चाहता है कि लड़की उसके योग्य नहीं है। वह प्रेम की अलौकिक चर्चा करके अपने बाप के लिए रिश्ते को तोड़ता है वह क्षणिक भावना के वशीभूत होकर जो वस्तुतः वासना के प्रतिरूप ही होती है, गरीब लड़की के प्रति प्रेम का नारा बुलन्द करके अपनी महानता का प्रदर्शन करता है जो सही माने में बकवास होती है। क्योंकि इसमें जवानी का जोश अधिक और भविष्य की विषम परिस्थितियों का ध्यान नहीं के बराबर होता है। मेरी माँ ने अपनी मर्जी की लड़की से मेरा विवाह किया था मैं समझता हूं कि उससे सुन्दर स्त्री ढूंढे नहीं मिलेगी। काश ! तुम्हारे स्मृति-पटल पर उस देवी-तुल्य जननी का धुंधला चित्र भी होता। सच वह एक महान और विदुषी नारी थी। लक्ष्मी का अवतार थी। उसने जिस दिन अपने चरणों के स्पर्श से मेरे घर को पवित्र किया उसी दिन से मेरे पास ऋद्धि-सिद्धि दोनों दौड़ी चली आ रही हैं।

बड़े बाबू की आंखें सजल हो उठीं। वे हाथ धोकर जल्दी से चले गए। एक स्मृति चित्र बड़े बाबू के मस्तिष्क में घूम गया।

उस समय वे अपने कमरे में खोए-से बैठे थे।

सुहाग रात थी।

शय्या पर सफेद चादर बिछी थी। इत्र की सुगन्ध आ रही थी। शय्या पर फूल नहीं थे। फूलों का रिवाज राजस्थान में बहुत ही कम है। वधू घूंघट में सिमटी खिड़की की राह चांद को निहार रही थी। छोटी खिड़की थी। उसमें से मलकता चां" कमरे में अपनी ज्योत्स्ना की आभा बिखेर रहा था।

वह सोचने लगी—अपनी सखियों की भावुक और पुलक-भरी प्रथम रात्रि की बातें। चुहलबाजियां। समर्पण।

वह उन बातों को याद कर-करके सिहर उठी।

अन्त में फत्तह ने कमरे में प्रवेश किया।

अस्फुट रूप और किशोर यौवन जो उस समाज में 'विवाह तेरह' के सूत्र के द्वारा पूर्ण यौवन कहलाता था घूंघट में सिमटा बैठा था।

फत्तह कमरे में गया और उसने घूंघट में लिपटी दुलहन को ग्यारह रुपये दिए। उसे मुंह दिखाने को कहा। और इसके बाद इधर-उधर की बातें होती रहीं। उन बातों का मुख्य विषय था—रुपया किस तरह कमाया जाए? पद्म को उस मधुर सुखद रात्रि में केवल कमाई की बात अच्छी नहीं लगी। उसकी भावना भरी आंखों में एक विचित्र-सी प्यास दहकती रही।

वर्षों के बाद आज बड़े बाबू उस प्यास के मर्म को जान पाए हैं। उस प्यास में छिपी उस किशोर बालिका के मन की आकांक्षाओं का यथार्थ वे अब समझने लगे हैं कि वह भी अन्य लड़कियों की तरह सुहागरात के दिन चुहलबाजियां और प्रणय रससिक्त बातें कहना चाहती थी चाहे उनका आधार केवल कल्पना ही क्यों न हो? इसके बाद भी बड़े बाबू उस यौवना को विस्मृत-से करते गए। जीवन के संघर्ष और पैसे की तीव्र लालसा के कारण उन्हें यह भी पता नहीं चलता था कि उनके एक सुषमामयी जवान पत्नी भी है। और जब उन्होंने भगत को मोह! बड़े बाबू उन बातों को नहीं दुहरा सके। वे मर्मान्तिक वेदना से सिहर उठे।

संतोष उन्हें अबोध बालक की तरह देखता रहा।

"क्या बात है बड़े बाबू?" उसने विमूढ़ बैठे बड़े बाबू के ध्यान को भंग किया 'आप परेशान क्यों हैं? सिर्फ मैं एक बार ...।"

"मैं उस लड़की को देख चुका हूं। वह एक अच्छे खानदान की है फिर सेठ पन्नालाल करोड़पति हैं। हमें उनसे लाभ ही लाभ होगा। मैं समझता हूं कि एक चतुर प्राणी को विवाह के मामले में प्रेम सौंदर्य और पसंद को जरा भी महत्त्व नहीं देना चाहिए। विवाह जीवन-भर का एक सौदा होता है और

सौदा ऐसा होना चाहिए जिसमें हानि न हो ।

"लेकिन विवाह एक पवित्र अनुष्ठान होता है ।"

"पवित्र अनुष्ठान और अलौकिक सम्मिलन जैसी अनुपम शब्दावली उपन्यासों के लिए ही उपयुक्त होती है । यह व्यवहार में उतनी पीड़ादायक होती है जितनी धूप में ईमानदारी । इसलिए मेरी आज्ञा को तुम्हें मानना ही होगा । तुमने मेरी आज्ञा को ”

बड़े बाबू का चेहरा क्रोध से विकृत कठोर और उन्मादग्रस्त हो गया । संतोष भय से कांप उठा । और वह जल्दी से कमरे से बाहर चला गया । जैसे बड़े बाबू की जलती आँखों का ताप वह नहीं सह पाएगा ।

बड़े बाबू कमरे में अंधेरा करके चहलकदमी करने लगे ।

घोर सन्नाटा ।"

उन्हें सेठ घनश्यामजी ने मिल्टन कम्पनी को लेकर चुनौती दी है ।, वे उस कम्पनी को जरूर खरीदेंगे चाहे उन्हें उसके लिए कुछ भी क्यों न करना पड़े । 'कुछ भी क्यों न करना पड़े' इसकी पुनरावृत्ति ने उनकी आँखों में हिंसक भावना का जन्म दे दिया ।

मेरे पास उन दिनों संतोष का एक पत्र आया था । वह पत्र बड़ा मार्मिक था । उसमें उसका अन्तर्द्वन्द्व मुखर हो उठा था । उसने अत्यन्त दयनीय भाषा में लिखा था कि उसे आज मुझ जैसे मित्र की बड़ी आवश्यकता है । वह अकेला है और अकेला चना भाड़ भी नहीं फोड़ सकता । उसने भिन्न-भिन्न शब्दों का प्रयोग किया था वे शब्द अत्यन्त चमत्कार थे पर उनमें वक्त के तकाजे के कारण प्रयोग किए जाने की ध्वनि भी स्पष्ट झलक रही थी । पत्र को पढ़कर मुझे लगा कि उसने मित्रता शब्द को लेकर जिन महान मूर्तियों का उल्लेख किया है वह विवशता के कारण ही किया है । उस पत्र में उसके स्वार्थ की बू स्पष्ट आ रही थी ।

पत्र का कुछ अंश इस तरह था ।

प्रिय कुम !

बहुत दिनों के बाद पत्र लिख रहा हूं । शायद तुम्हें बुरा भी लगेगा । क्या करूं ? काम की व्यस्तता ने मुझे मशीन बना दिया है । मुझसे व्यापार की व्यस्तता ने दूसरों पर सोचने का हक ही छीन लिया है । रात-दिन मैं काम काज के चक्कर में उलझा रहता हूं । तुम नहीं जानते मैं कितना दुखी हूं । 'आदमी के जीवन का धन ही सर्वोपरि सत्य है' इस सिद्धान्त के जोरदार समर्थक मेरे पिताजी मुझे भी इसी सिद्धांत का समर्थक बनाना चाहते हैं । और जैसा तुमने एक बार कहा था कि मैं भी वैसा ही हो जाऊंगा जैसे मेरे पिताजी हैं तुम्हारी भविष्यवाणी सत्य में बदल रही है । मुझे लग रहा है कि मैं सभी बातों को भूलकर केवल पैसों पर ही केन्द्रीभूत हो रहा हूं । अगर ऐसा न होता तो मैं तुम्हें पत्र अवश्य लिखता तुम्हें विश्वास अवश्य देता तुम्हारी उन्नति के लिए ईश्वर से कामना अवश्य करता और तुमने अपने काम में जिस सचाई और कर्तव्यनिष्ठता का परिचय दिया है, उसके लिए तुम्हें समय-समय पर प्रशंसा-पत्र अवश्य लिखता । लेकिन मैं कुछ भी नहीं कर सका । मैं अत्यन्त स्वार्थी मित्र हूं । मुझे मित्रता का दम ही नहीं भरना चाहिए । मैं मित्रता के नाम पर कलंक हूं । तो भी तुम्हें अपना ही समझकर यह पत्र लिख रहा हूं और आशा करता हूं कि तुम शीघ्र ही यहां चले आओगे ।

बात यह है कि पिताजी मेरा विवाह पन्नालालजी की बेटी से करना चाहते हैं । पन्नालालजी करोड़पति हैं और यह भी ठीक है कि वे लाखों का दहेज देंगे तथा व्यापार में उनकी पिताजी से जो प्रतिस्पर्धा है वह भी इससे कम ही होगी । हो सकता है कि वे हमारे प्रतिपोषक बन जाएं । किन्तु उनकी लड़की बड़ी बदसूरत और अनपढ़ है । माना मैंने जीवन में कभी किसीसे प्यार नहीं किया । मैं किसी भी लड़की को अपनी ओर आकर्षित नहीं कर सका और न मैंने कभी इस ओर प्रयास ही किया है । क्योंकि औरतों की पवित्रता का मैं अत्यन्त चाहक हूं और फैशनपरस्त लड़कियां मुझे अच्छी नहीं लगतीं ।

वस्तुतः मैं इस ओर सदा उदासीन ही रहा पर इसका मतलब यह नहीं है कि मेरी अपनी कोई पसंद ही नहीं है। कम से कम मैं एक अच्छी सुन्दर, शिक्षित गृहिणी अवश्य चाहता हूं। तुम मेरे बड़े भाई हो। मैं तुम्हें हाथ जोड़कर प्रार्थना करता हूं कि मुझे आकर बचा लो। मैं अकेला कुछ भी नहीं कर सकता। तुम ठहरे पत्रकार। तुम समाज से मुकाबला कर सकते हो। मुझे नया रास्ता दिखा सकते हो।

एक बात और लिख रहा हूं। इसी उथल-पुथल में मैं कल अपने एक कर्मचारी रूपोदास के घर खाना खाने गया। उसकी वर्षगांठ थी। उसने मुझे चलने के लिए विवश ही नहीं किया बल्कि वह मेरे घर आकर बैठ गया कि जबतक आप नहीं चलेंगे मैं यहां से नहीं जाऊंगा। खैर। मैं वेमन वहां गया। 'मेरा वहां भव्य स्वागत हो' इसलिए उसने खूब तैयारियां की। और वैसे ही थाली लेकर उसकी बहिन आई वैसे ही मेरे मन में उल्लास का संचार हो गया। केसर की कांति लिए हुए उसका गोर वर्ण। पद्मिनी के वर्णन जैसा उसका रूप। मैं उसे निहारता रहा। न मालूम कितने क्षण! मैंने ऐसा रूप नहीं देखा। मुस्कराता हुआ रूपोदास आया। वह मेरी आंखों की भाषा को जान गया। मुझे हाथ जोड़कर वह मृदु स्वर में बोला 'यह आठवीं कक्षा तक पढ़ी हुई भी है! नाम इसका मीता है। मैंने इसका नाम आधुनिक जरूर रखा है पर है यह पूरी धार्मिक विचारों की। यह खाना भी इसीका बनाया हुआ है।"

मानो मैं उसे देखने आया हूं। उसका भाई मुझे उसके विशेष गुणों का परिचय इस तरह दे रहा था। मैंने धीरे से पूछा "क्या इसका विवाह हो गया?"

'नहीं छोटे बाबू! अभी तक हमने इसकी सगाई भी नहीं की है।"

"क्यों?"

"अच्छा वर नहीं मिल रहा है। दूसरा हम खाने-कमानेवाले आदमी ठहरे। दहेज ज्यादा दे नहीं सकते और दहेज के बिना अच्छा वर आजकल कहां मिलता है?"

वह लड़की मुझे बार-बार खाना परोसने आती थी। मेरी इच्छा होती थी

क मैं इस लड़की को देखता रहूं। वह मेरे सामने प्रतिमा की तरह खड़ी रहे। र उसकी लाज भरी अंखियों ने मुझे देखा भी यह मैं नहीं कह सकता।

मैं घर आ गया।

मैं क्षण-भर के लिए भी उस लड़की को नहीं भूल सका। मैं उस लड़की ो लेकर विभिन्न कल्पनाएं करता रहा। ये कल्पनाएं मैंने अपनी डायरी में वेस्तृत रूप से लिख रखी हैं। मैं चाहता हूं कि मेरा विवाह उससे हो गए पर यह तभी संभव है जब तुम यहां आकर पिताजी को समझा दो। तुम्हें मेरी कसम है मेरी मित्रता की कसम है। तुम इस पत्र को तार समझकर चले आ ओ।

तुम्हारा
—संतोष

इस पत्र को पढ़कर मुझे एक वाक्य याद आ गया 'बनिया मतलब का यार। काम पड़े तो कर ले प्यार'। क्योंकि जब उसने मुझे एक विज्ञापन देकर भी अनुगृहीत नहीं किया तब मैं उसकी पंचायत क्यों करूं? फिर मुझे उसके पूरे पत्र में खुदगर्ज़ी की बू आ रही थी। मुझे लग रहा था कि अगर ऐसी विषम परिस्थिति नहीं आती तो संतोष मुझे कभी भी पत्र नहीं लिखता। मेरा मन वमन से भर उठा और मैंने निर्णय कर लिया कि मैं वहां नहीं जाऊंगा। इस दृढ़ निश्चय से मुझे आत्मसंतोष का अनुभव हुआ जैसे संतोष मेरी भावुकता को फुसलाने में असमर्थ रहा हो।

फिर भी मैंने उसे और उसके पिता को पत्र लिखा। उसमें मैंने अपनी कई झूठी-सच्ची विवशताओं का उल्लेख करके आने की असमर्थता प्रकट करने के साथ-साथ क्षमा-याचना भी की। संतोष के पत्र में मैंने कोई विशेष बात नहीं लिखी पर बड़े बाबू को पत्र मैंने इस तरह लिखा

बड़े बाबू!

प्रणाम।

आपको पत्र लिख रहा हूं—विशेष कारणवश। मेरे पास संतोष का पत्र

आया है। उस पत्र में उसने स्पष्ट शब्दों में पन्नालालजी की बेटी से विवाह न करने का मंतव्य प्रकट किया है। कुछ बातें ऐसी होती हैं जिन्हें बच्चे अपने मित्रों को ही स्पष्ट रूप से बता सकते हैं। संतोष का मैं जिगरी दोस्त हूं और आप यह भी खूब जानते हैं कि हमारी मित्रता में स्वार्थ नाम की किसी भी वस्तु का कोई अस्तित्व नहीं है। मैं नहीं चाहता हूं कि इस छोटी-सी बात को लेकर आप और आपके बेटे के बीच कोई गहरी खाई हो। छोटी-सी बात इसलिए, कि आपके पास अतुल धन है और आपको अब रुपयों के पीछे नहीं बेटे की इच्छा के पीछे चलना चाहिए।

मैं भी इधर उधर की बातें लिखकर आपके हृदय की भावुकता को स्पर्श कर सकता हूं। आपके गुणों की प्रशंसा करके आपके अहम् को छू सकता हूं और आपके लिए महान दयालु, ज्ञानी दूरदर्शी और नीतिज्ञ जैसे मर्मस्पर्शी शब्दों से युक्त वाक्यों का प्रयोग करके अपने दृढ़ निश्चय से विचलित करने के लिए आपको कोमल बना सकता हूं। पर मैं ऐसी निरर्थक बातें लिखकर आप जैसे व्यस्त आदमी के समय को खराब करना नहीं चाहता। मैं स्पष्ट शब्दों में आपसे इतना ही कहना चाहूंगा कि आप अपने बेटे का विवाह उसकी मनपसंद लड़की से ही करें। और वह लड़की है—आपके नौकर रूपोदास की बहिन नीता।

मैं कार्यव्यस्तता से आपके पास अभी आने में विवश हूं पर आपके बेटे का यह विवाह-सम्बन्ध ही आपके हित में रहेगा क्योंकि आज के लड़कों को आप जानते ही हैं।

पत्र की आशा में

आपका ही

—हृ.स.

मुझे बड़ी हैरत हुई कि बड़े बाबू ने मेरी बात स्वीकार कर ली। उन्होंने मुझे धन्यवाद का पत्र देते हुए लिखा कि तुमने मुझे पत्र लिखकर एहसान कर दिया वर्ना संतोष के मन की साध को मैं पूरा करने में सर्वथा असमर्थ रहता। मैं तुम्हें

किन शब्दों में धन्यवाद दूं यह मैं लिख नहीं सकता। मैं निहाल हो गया हूं। और मैंने इस पत्र की एक प्रति संतोष को भेज दी।

कुछ दिनों के बाद ही संतोष का विवाह हो गया।

दोनों पति-पत्नी आनंद से रहने लगे। संतोष बड़े बाबू से थोड़ा भिन्न स्वभाव का निकला। वह समय से काम-काज करता था और रात को वह अपनी पत्नी को लेकर घूमने-फिरने जाया करता था।

वस्तुतः बड़े बाबू ने इस रिश्ते में अपनी कुशल बुद्धि का परिचय दिया था। बेटा विद्रोही न हो इसलिए उन्होंने यह रिश्ता मंजूर कर लिया किन्तु मन में उन्होंने एक गांठ बांध ली कि वे अपनी पराजय का प्रतिशोध कभी जरूर लेंगे। ऐसा प्रतिशोध लेंगे जिसको यह बेटा सदा याद रखेगा।

किन्तु सेठ पन्नालाल बड़े नाराज हुए। उन्होंने इसे अपनी मान-हानि समझा तथा उन्होंने बड़े बाबू को खूब खरी-खरी सुनाई।

सेठ पन्नालाल बोले 'आदमी की जबान की कीमत बहुत होती है। पहले लोग अपनी जबान के पीछे अपने घर तक को फूंक देते थे पर जबान को झूठा नहीं होने देते थे।

"बेटे के हठ के सामने मुझे झुकना पड़ा। आखिर विवाह उसे करना था मुझे नहीं।'

"तभी कहता हूं कि बच्चों को म्लेच्छों की भाषा न पढ़ाओ। वे जैसे ही अंग्रेजी की दो-चार पंक्तियां सीखते हैं, आसमान सिर पर उठा लेते हैं।"

"पर इस भाषा के बिना काम भी नहीं चलता। एक व्यापारी के बेटे को संसार की हर भाषा को सीख लेना चाहिए। चाहे वे भाषाएं म्लेच्छों की हों या दुश्मनों की। अच्छा और सफल व्यापार हम तभी कर सकते हैं जब हम हर जगह की भाषा से परिचित हों। भाषा से बच्चे नहीं बिगड़ते बच्चे बिगड़ते हैं समय से। जमाने की हवा ही बदल गई है। पहले आदमी खानदान को

बते थे कि लड़की और लड़का किस खानदान का है—और अब वे दिखा
र रंगरूप को देखते हैं।

पन्नालाल जी बिगड़ पड़े, "इसीलिए मैंने अपनी बेटी को आपको पहले ही
खा दिया था। मैं जानता था कि बाद में कोई ऐसा-वैसा प्रश्न न उठे।
पने मेरी प्रतिष्ठा को धूल में मिला दिया। बात होकर बीच में खत्म हो जाने
लड़की का विवाह और कठिनता से होता है। क्योंकि इसके पीछे एक वाक्य
र जुड़ जाता है कि इसकी पहले सगाई होकर बाद में छूट गई थी अथवा
इसकी बात फलां आदमी के बेटे से होकर एकाएक खत्म हो गई थी। आज के
माने में लड़की के रंगरूप से अधिक ऐसी बातें अधिक हानिप्रद होती हैं।"

बड़े बाबू चुप रहे। उनकी आंखों में वेदना तैर उठी। संकोच से उनकी
र्दन झुक गई।

सेठ पन्नालाल दर्द से तड़पकर बोले "मैं आपको सौगंध दिलाकर पूछता
कि लेन देन के मामले की बात तो नहीं है? क्योंकि ऐसा भी देखा गया है
क जब दहेज कम होता है तब लड़कों के बाप तरह-तरह का बहाना बनाते हैं
र वे लड़कों को माध्यम बनाकर ऐसी विवशता का अभिनय करते हैं जो
स्तुतः उनकी चालें होती हैं। और जिनके सूत्रधार उनके अपने लड़के नहीं
ुद ही होते हैं।" वे क्षण भर रुककर बोले "यदि ऐसी कोई बात है तो
प मुझे स्पष्ट कहिए। मैं दहेज की रकम और बढ़ा सकता हूं।"

नहीं, नहीं। ऐसी कोई बात नहीं है सेठजी। आपकी दया से मेरे पास
या नहीं है? अगर मेरे एक लड़का और होता तो मैं इसकी बात जरा भी नहीं
ानता और इस बाप की अवज्ञा करनेवाले को घर से बाहर निकाल देता—
ाला मुंह और नीचे पांव करके। मैं आप जैसे खानदान से रिश्ता करके
ौरव अनुभव कर रहा था। सेठ साईंदास-माईदास का खानदान भाग्यशालियों
ो ही मिलता है।"

वे वेदना में डूबकर बोले "आह! इस खानदान की बात का ही दुःख है।
ने सोचा—बराबर का सगा कहां मिलता है? मेरी लड़की आपकी बहू बन
र अपने-आपको भाग्यशालिनी समझेगी।"

"मुझे आपके दुख की अनुभूति है। एक बेटी का बाप ऐसे मार्मिक आघातों को नहीं सह सकता। मैं एक बार फिर प्रयास करूंगा।"

बड़े बाबू आए और उन्होंने किसी तरह का प्रयास नहीं किया। आज के इकलौते लड़के अपने मां-बाप को किस तरह उचित और अनुचित ढंग से दबा सकते हैं वे भली भांति जानते थे। घर से बाहर निकल जाने से लेकर आत्महत्या करने तक की धमकी देते हैं और आज के ताकतवर के जोश में ऐसा कर भी देते हैं। फिर व्यापार को संभालने के लिए उन्हें उसकी बहुत जरूरत थी।

लेकिन उन्होंने पंडित को यह सलाह दी कि तुम अप्रत्यक्ष रूप से मेरे पुत्र का प्रस्ताव सेठजी की कानी-कलूटी बेटी के लिए कर दो। बात इस तरह तुम उनके सामने रखना जैसे तुम खुद यह प्रस्ताव मेरी ओर से नहीं खुद अपनी ओर से रख रहे हो। मेरी इच्छा का भी आभास उन्हें नहीं होना चाहिए।

पंडित आंखें फाड़कर उन्हें देखता रहा।

"तुम्हें अचरज हो रहा है। क्यों? क्या इस उम्र में लोग विवाह नहीं करते हैं? बहुत-से करते हैं। और मैं विवाह पहले भी कर सकता था लेकिन मैंने ऐसा नहीं किया। मुझे विवाह में कोई दिलचस्पी नहीं है। सिर्फ बेटे द्वारा इनकार किए जाने पर मैं यह कर रहा हूं ताकि सेठजी की इज्जत बची रहे।"

"पर यह कैसे संभव है कि एक लड़की जो बेटे के लिए मांगी जा रही थी बाप के लिए मांगी जा सकती है?

"सब संभव है। इस युग में क्या नहीं हो सकता? सिर्फ दलाल अच्छा होना चाहिए। आज के आदान प्रदान का मूलभूत आधार ही मेरी समझ में दलाल है। अगर यह दलाल नामक जीव नहीं होता तो आज प्रत्येक के सामने गंभीर, कठिन और दुरूह समस्याएं खड़ी हो जातीं। मैं तुम्हारी परीक्षा ले रहा हूं कि तुम एक चतुर दलाल हो कि नहीं? बात इस ढंग से होनी चाहिए कि सेठ पन्नालालजी मुझे किसी तरह के दो कटु शब्द भी न कहें। उन्हें इस बात का विश्वास हो जाए कि मेरे मुवक्किल को तुम कह रहे हो अपनी ओर

से ही कह रहे हो इसमें मेरा किंचित् भी हाथ नहीं है।

"लेकिन यह संभव नहीं।" पंडित ने सहमते हुए कहा।

बड़े बाबू ने उसे तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से देखा। कुछ झिड़कते हुए वे बोले, "तुम नाम के पंडित हो। तुम्हें तो किसी सेठ-साहूकार का हाजरिया होना चाहिए। शादी-विवाह की बात करानेवाला पंडित अपने हुनर में इतना निपुण और दूरदर्शी होता है कि वह असंभव को संभव और संभव को असंभव बना देता है।"

"मैं कोशिश करूंगा।"

बड़े बाबू ने उसे एक बार और हिदायत दी कि वह इस चतुराई से बात करे ताकि पन्नालालजी को यह भान न हो कि यह तोता उन्हींका रटा रटाया है।

पंडित सेठ पन्नालाल के पास गया। हाथ जोड़कर पंडित ने पश्चात्ताप भरे स्वर में कहा, "ऐसा नालायक बेटा मैंने जीवन में नहीं देखा। बाप बेचारा झोली फैलाकर अपनी इज्जत की भीख मांग रहा था और साहबजादे साहब अकड़ में ऐंठे ही जा रहे थे। बार-बार 'सिद्धान्त' शब्द की दुहाई लगा रहे थे मानो वे सिद्धान्त के लिए जीवन की हर खुशी बलिदान करने को आतुर हैं। आपको क्या बताऊं सेठजी, आखिर बड़े बाबू की आंखों में आंसू आ गए। उनका लड़का उसी समय बिना कुछ बोले चला गया। सच कहता हूं—मैंने अपने जीवन में इतने बड़े आदमी को इतना दीन और विवश नहीं देखा। मैंने अपनी आंखें बन्द कर लीं और प्रभु को लाख बार धन्यवाद दिया कि कम से कम उसने मुझे ऐसी नालायक औलाद नहीं दी।" पंडित चुप हो गया। सेठ पन्नालालजी समझ गए कि लड़के ने साफ इन्कार कर दिया है। अतः वे तनिक मुस्कीले स्वर में बोले, "बड़े बाबू के लड़के के इन्कार कर देने से मेरी बेटी कुंवारी नहीं रहेगी। पंडित जी आप देखना कि मैं कितना अच्छा दूल्हा अपनी बेटी के लिए लाऊंगा। यहां वर वहां लाखों वर! आखिर बापों की शक्ति का भी पता लगाना है।"

पंडित थोड़ी देर के लिए गंभीर मौन धारण किए बैठा रहा। एकाएक वह संभलकर बोला, "आप बुरा न मानें तो मैं एक सलाह दूं?"

कल बड़े बाबू ने संतोष को बुलाया था। तत्काल संतोष गीता के साथ सिनेमा देखने को जा रहा था। बड़े बाबू का संदेश पाकर वह सीधा वहीं आया।

जब वह बड़े बाबू के घर पहुँचा तब बड़े बाबू सम्पत को डाँट रहे थे। सम्पत बूढ़ी नौकरानी को जबरदस्त गालियाँ इस बात को लेकर निकाल रहा था कि आज उसने उसे खाना ठंडा और बासी दिया था। जब उसकी गालियाँ बड़ी देर तक बन्द नहीं हुईं तब बड़े बाबू को उस घटना में बीच दखल देना पड़ा।

सम्पत ने आँसू भरकर कहा "बड़े बाबू, यह आजकल बहुत लोभिन हो गई है। यह मुझे ठंडा और बासी खाना देना चाहती है। मैं समझता हूँ कि यह हमारे भोजन के बजट में से काफी रुपयों की बचत करती है। अब इसके संग्रह करने की भावना बढ़ती जा रही है।"

बड़े बाबू ने क्रोध भरी आँखों से देखकर कहा "रोटियों के बीच तुम बड़े बाबू को क्यों घसीटते हो? तुमने ऐसा क्यों कहा कि यह सब बड़े बाबू के संकेत पर हो रहा है?"

"मैंने ऐसा नहीं किया।"

नौकरानी चिल्लाकर बोली "ये एकदम झूठ बोलते हैं। अभी थोड़ी देर पहले इन्होंने आपको बेईमान और कपटी कहा था।"

सम्पत आकाश की ओर देखकर बोला "आह! यह मिथ्या झूठ बोलती है! सीता परमात्मा से डरो। अपने मालिक को प्रसन्न करने के लिए सबके मालिक ईश्वर को अप्रसन्न न करो।"

सीता अपनी आँखें मिचमिचाकर बोली "यह सचमुच एक अधर्मी है बड़े बाबू। क्या कोई भला और समझदार आदमी इस तरह बेहयाई और निर्लज्जता से बोल सकता है? मैं कहती हूँ कि ये एकदम नशेबाज के लड़के हैं ऐसा असमर्थन किन्तु प्रभावशाली प्रलाप ऐसे ही लोग कर सकते हैं।" वह आँखों में भय नचाकर बोली, "मुझे यह भय है कि यह कभी अधिक नशे में हमारी घर की इज्जत पर कीचड़ न उछाल दे।"

"मैं सब समझता हूं। मुझे अगर इसपर दया नहीं आती तो मैं इसे घर बाहर निकाल देता। और यह अफीम के अभाव में पागलों की तरह सड़कों प घूमता फिरता अफीम की एक-एक रत्ती के लिए यह भीख मांगता चोरि करता और लोगों से पिटता। पर मैं एक दयालु स्वभाव का व्यक्ति हूं। इस मेरी खूब सेवा की है इसलिए मैं इसपर दयालु ही बने रहना चाहता हूं। नहीं चाहता कि मेरा कृपापात्र या स्वामीभक्त नौकर सड़कों पर भूखा औ प्यासा मारा-मारा फिरे। पर आजकल यह बहुत ही उल्टी बातें करने लगा है मुझे यह डर है कि कहीं इसे पागलखाने म भर्ती न करना पड़े।"

पागलखाने का नाम सुनकर सम्पत कांप उठा। वह उठकर आया औ उसने बड़े बाबू के पांव पकड़ लिए, "यह छिनाल झूठ बोलती है। इसने मु बर्बाद कर दिया। यह एक वेश्या है, अत्यन्त नीच और कमीनी वेश्या व आदमी को जोंक की तरह चूस लेती है। काश! इसने मेरे साथ जिस तरह व अभिनय किया उसी तरह का आपके साथ करती। तब आपको मेरे अन्तस् व पीड़ा का पता लगता। इसने मुझे अफीम खिला-खिलाकर निकम्मा और आ पागल बना दिया है। और आप बड़े बाबू, इसकी बातों में आते हैं? आखि मैं आपका इससे भी पुराना नौकर हूं। क्या यह औरत है इसीलिए इसकी बात सत्य का अंश अधिक है? मैं आपको कहता हूं कि यह औरत सत्य उतना ह बोलती है जितना नादान-निर्भीक बच्चा अपराध करने पर झूठ बोलता है।"

"अगर यह झूठ बोलती है तो तुम्हें इसकी बातों में नहीं आना चाहिए तुम इसकी बातों में आकर कुछ भी कहते हो वह मेरे लिए पीड़ादायक बा जाता है।

उसने अपना अपराध स्वीकार कर लिया हो ऐसी उसकी उदास मुद्रा ह गई। वह अपराधी की तरह नज़रें नीची करके बोला "मैं मूर्ख हूं। पता नहीं नशे के वशीभूत होकर क्या-क्या बक जाता हूं। मुझे आप क्षमा कर दें और इ कह दें कि यह मेरे पास न आया करे। मुझे यह भय है कि कहीं यह मेरे औ आपके बीच ईर्ष्या और शत्रुता की दीवार खड़ी न कर दे।"

दूसरे नौकर ने बड़े बाबू को संतोष के आने की सूचना दी।

बड़े बाबू ने उस नौकर को कहा "सम्पत को दूध लाकर दे देना। और सीता तुम आज से यहां मत आना।" जब उन्होंने ऐसी आज्ञा दी तब उनके अधरों पर एक भेद भरी मुस्कान बिखर गई और उन्होंने मन ही मन सोचा, 'सम्पत तुम सीता के बिना नहीं रह सकते !

संतोष उनकी बैठक में प्रतीक्षा कर रहा था। हरी बत्ती हरे रंग में मिलकर और सुन्दर हो गई थी। उसमें अपने-आपमें डूबा संतोष बुत की तरह जम रहा था। बड़े बाबू के पांवों की आहट सुनकर वह चौंका। उठकर उसने हाथ जोड़े।

बड़े बाबू ने गम्भीर स्वर में कहा "मैं कल राजस्थान जा रहा हूं। मुझे महाराजजी ने बुलाया है। वे मेरे द्वारा कुछ हीरे-जवाहरात बेचना चाहते हैं और कुछ सोना भी। मैं समझता हूं कि इससे हमें काफी लाभ होगा।"

"लेकिन जो वस्तुएं मन्दिर की हैं, उन्हें बेचना कहां तक न्यायसंगत है? यह गैरकानूनी भी है।"

"तुम अभी तक बच्चे हो।" कुछ चिढ़कर बड़े बाबू उत्तेजित स्वर में बोले "व्यापार का अपना एक तरीका होता है। उस तरीके से वह बड़े से बड़े अपराध से बच सकता है और कानून की तेज आंखें भी उसे नहीं देख सकतीं।"

संतोष बड़े धैर्य से बोला "फेयर बिजनेस ही मनुष्य का धार्मिक और नैतिक उत्थान करता है।"

"फेयर बिजनेस कभी होता होगा मुझे पता नहीं था। परन्तु कलियुग में सारे व्यापार की नींव ही छल-कपट और झूठ पर रखी हुई है। संतोष ! मुझे भय है कि मेरे सौ वर्ष पहुंचने पर तुम व्यापार को चौपट करके रख दोगे। क्योंकि इस जमाने में 'फेयर बिजनेस' की बात ही पतन की सूचक होती है। मैं तुमसे प्रार्थना करूंगा हालांकि मेरा धर्म तुम्हें हुक्म देना है परन्तु मैं तुमसे धर्म के विरुद्ध प्रार्थना ही करूंगा कि भविष्य में तुम सत्य और धर्म की दुहाई न देकर व्यापार की श्री-वृद्धि की तरकीबें सोचना। सत्य और धर्म जैसे शब्द इस पूंजीवादी जमाने में नशे की गोलियां बन गए हैं जो गरीबों को समय-समय पर मुफ्त बांट दी जाती हैं। "

"फिर पाप क्या है ?" संतोष के अन्तस् ने बरबस ही पूछा।

"पाप कुछ नहीं है। वस्तुतः इस शब्द की प्राचीन युग में आवश्यकता के अनुसार उपयोगिता भी थी और तब यह वेश भी ऋषि-मुनियों का वेश कहलाता था। किन्तु अब यह वेश एक भिखारी वेश बन रहा है। अब त्याग-तपस्या पाप-पुण्य और नैतिकता जैसे प्राचीन और घड़ियत शब्दों का प्रयोग आदमी का दकियानूसीपन प्रकट करते हैं। क्योंकि इन सब शब्दों को हटाकर हमने एक अत्यन्त शक्तिशाली शब्द की रचना कर डाली है, वह शब्द है—व्यापार। यह शब्द इतना व्यापक और विशाल उदर का है कि इसमें ये सारे वजनदार शब्द रुई के फाहों की तरह तैरते हुए लगते हैं अथवा विशाल सागर में गिरती हुई नदियों की भाँति इनका अस्तित्व लगता है। संतोष ! व्यापार का अपना एक निजी उसूल होता है और वह उसूल है—कल्पित व संस्कारजनित आतंकों, प्रकोपों और हमलों से मुक्त होकर कार्यरत रहना। तुमने मुझे कह दिया कि मन्दिर का धन बेचना गैरकानूनी है ? लेकिन जो मन्दिर का स्वामी बनकर देवदूतों की तरह सार्वजनिक जीवन में भ्रष्टाचार फैलाता है और पवित्रात्मा बनकर छिपे रूप में वेश्या, शराब और मांस का सेवन करता है और मन्दिर के धन को कागज के कनकौवा की तरह उड़ाता है वह इस 'पाप' शब्द के बारे में क्यों नहीं सोचता ? तुम कदाचित् नहीं जानते कि आज सेठ लोगों में धर्म की सेवा का जो ढोंग है वह महज एक दिखावा है। क्योंकि हर धनवान तिलक-छापों के ढोंग द्वारा महन्तों के समीप आकर मन्दिरों की सम्पत्ति को हड़प जाना चाहता है। मन्दिरों के महन्तों के कृपा-पात्र बनकर उनकी दुर्बलताओं से मित्र होकर उनसे अनुचित काम कराने के लिए विवश करना चाहता है। चूँकि व्यापार शब्द एक भयानक अपरम्पार है वह सहजता से 'सभी भावुक प्राणियों की दृष्टि में अनैतिक कार्यों' को इसके भोजन की तरह पचा लेता है। और वह अपने साधनों को चाहे वे कितने ही नीच, अनैतिक और धर्मविहीन क्यों न हों, उन्हें युक्तिसंगत ही मानता है। अतः मैं तुमसे अनुरोध करना चाहूँगा कि तुम ऐसी बचपनी बातें फिर कभी नहीं करोगे और 'व्यापार' शब्द के सभी पद प्रशंसा को जान लोगे।"

संतोष का मुँह उतर गया। उसे लगा कि वास्तव में उसने बड़ी भूल की

है। वह एक व्यापारी का बेटा है। एक दिन करोड़पति होगा। उसे वही कार्य करना चाहिए जिससे उसके धन की वृद्धि हो और पिता और इस जग की दृष्टि में उसकी योग्यता का लोहा माना जाए।

वह अत्यन्त कोमल स्वर में बोला "आप ठीक कहते हैं। मैं सदा आपके चरण-चिह्नों पर चलने का प्रयास करूंगा।

"फिर सुनो तुम कल अहमदाबाद चले जाओ और मैं राजस्थान जाऊंगा। कोई पांच डायरेक्टरों की मीटिंग है। तुम इस बात पर जोर देना कि मजदूरों को बोनस कम से कम बांटा जाए तथा उन्हें अंकुश का विश्वास दिलाकर यह कहा जाए कि वे हिंसक और द्वेष की योजनाओं को असफल करनेवाले इन ट्रेड यूनियनों के नेताओं के चक्कर में न पड़ें।"

संतोष ने उठते हुए पूछा "आप कब तक वापस आ जाएंगे?"

"पांच-सात दिन में।"

"मैं जाऊं?"

"हां। बैठक में गहरा मौन छा गया।

बड़े बाबू से पहले ही संतोष अहमदाबाद से लौट आया। पहली बार उसे यह महसूस हुआ कि एक व्यापारी के दृष्टिकोण कार्यकलाप तथा तरीके आम आदमियों से बिलकुल भिन्न होते हैं। उसकी कामयाबी सराहनीय होती है और इतनी परेशानियों व समस्याओं के बीच उसमें जो एक दृढ़ धैर्य व शांति रहती है उसे सर्वथा उल्लेखनीय रहना चाहिए। उसकी कठोर साधना पुराण में वर्णित तपस्या से कम नहीं है। वह रात-दिन अपने धर्म के अनुसार व्यापार के दायरे को फैलाने में संलग्न रहता है। सेठ रामजी भाई का तरुण बेटा कितना चतुर है। इस मीटिंग में उसके सुझावों को प्रथम मान्यता प्राप्त हुई। क्या वह उतना ही तेज और पते की बात कहनेवाला नहीं बन सकता? उसने निश्चय किया कि एक बार वह सभीको अपनी योग्यता से चकित कर देगा। जीवन में लोक-

प्रियता प्राप्त करने के लिए साधन के प्रति तन्मयता और कठोर श्रम की अत्यंत आवश्यकता है।

वह बंगले आया।

उसकी पत्नी गीता नागराज की अंग-प्रदर्शक साड़ी में एक तरुण से गंभीरता पूर्वक बात कर रही थी। वह तरुण उसे देखकर जल्दी से बंगले से बाहर हो गया। उसकी चुप्पी ने संतोष के मन में सन्देह के अंकुर उत्पन्न कर दिए। उसे वैसे ही इस तरह की बातें पसन्द नहीं थीं। उसका मुख उत्तेजित हो गया। वह कार से जैसे ही उतरा वैसे ही उसने अपनी पत्नी गीता को देखा—वह भी सदा की तरह उसका स्वागत नहीं कर सकी। उसकी हंसी में सूखापन था।

"आप जल्दी आ गए, अच्छा ही हुआ।

"क्यों ?

"मेरा मन नहीं लगता है आपके बिना। इस बंगले में भय भी लगता है।"

अपने कमरे में कपड़ों को खोलते हुए संतोष के मन में आया कि वह उसे कह दे कि इस अनुपस्थिति में तुम अपने परिचितों से स्वतंत्रतापूर्वक मिल भी सकती हो। पर बिना किसी खोज-बीन के इस तरह का आरोप लगाना उसने उचित नहीं समझा। यहां उसकी व्यापारियोंवाली धीरजता काम दे गई। उसने भृकुटी चढ़ाकर पूछा "वह लड़का कौन था ?"

"वह हमारा पड़ोसी है।"

"यहां क्यों आया था ?"

"नौकरी के लिए।

"और मुझसे बिना मिले हुए ही चला गया ? उसने अपने शब्दों पर जोर देकर कहा।

"मैंने उसे कहा भी था परन्तु जाने क्यों वह नहीं रुका कदाचित् वह अपनी दयनीय दशा के कारण नहीं रुका हो। आपने उसके मैले-कुचैले कपड़े देखे ही होंगे। आदमी में सीमा से अधिक हीनता आ गई है।" वह एकदम बात को बदल कर बोली 'आपकी यात्रा कैसी रही ? आपकी तबीयत ठीक रही न यात्रा में ?"

"तुम्हें कैसी लगती है ?" उसने चिढ़कर कहा।

"आप गुस्से में क्यों बोलते हैं ?" उसने भी जरा तेज स्वर में उसके समीप आकर कहा "क्या वहां किसीसे लड़कर आए हैं ?"

"जी ।" उसने अपनी नज़रें दूसरी ओर घुमा लीं ।

"क्या बात हुई ?" उसने एकदम विनीत स्वर में कहा ।

"मुझे अभी परेशान न करो । मेरा मन ठीक नहीं है ।" उसके स्वर में झुंझलाहट थी ।

सीता चुप हो गई । उसने मन ही मन जान लिया कि यह सब अनुराग के आगमन की प्रतिक्रिया है । उन्हें मेरा बोलना-हंसना पसन्द नहीं है दूसरों से । वह भी खामोश और अपने काम में व्यस्त हो गई । उसे अपने पति का यह व्यवहार अच्छा नहीं लगा । अब ऐसी ही इच्छा थी तब कोई गंवार लड़की से ब्याह ।

उस रात मियां-बीवी रससिक्त बातें नहीं कर सके । केवल कुछ क्षण संतोष ने उत्तेजना के वशीभूत इधर उधर की प्रणय-भरी बातें कीं । उसके मन से यह संदेह नहीं गया कि वह व्यक्ति कौन था ? पर प्रश्न एक जलता प्रश्न बने हुए हर घड़ी कचोटता रहा पीड़ा देता रहा उद्विग्न करता रहा ।

सुबह ही बाड़ी से फोन आया था कि सेठ शिवकुमारजी आए हुए हैं । शिवकुमारजी उनकी मिल के नये सोल एजेंट थे । उनका व्यापार मध्य प्रदेश में था । संतोष सुबह ही वहां चला गया । शिवकुमारजी से बातचीत करके उसने वहीं पर खाना खाया । आज घर पर जाने की उसकी इच्छा नहीं हो रही थी । कदाचित् उस युवक की बात वह अब भी नहीं भूला था ।

शिवकुमारजी चले गए । संतोष वहीं पर कार्य में तन्मय हो गया । तभी उसे नारी की हंसी सुनाई पड़ी । उसने जोर से पुकारा "कोई है ?"

महाराज आया । महाराज से तात्पर्य रसोइया से है ।

"देखो कौन हंस रहा है ?"

"हंसता कौन होगा ? वही सम्पत होगा ।"

सम्पत का नाम सुनते ही संतोष का मन ममता से भर आया । जब वह छोटा था तब सम्पत उसे बहुत स्नेह किया करता था । उसे कन्धों पर बिठलाता

था और उसके लिए वह बढ़िया-बढ़िया खिलौने लाया करता था। उसके मन में करुणा का उद्रेक फूट पड़ा। और आज एक घटना लोचनों के समक्ष सजीव-सी नाच उठी।

संतोष को बचपन में कागज के हवाई जहाज उड़ाने का बड़ा शौक था। वह बार-बार सम्पत को तंग करता था। सम्पत उसे बिना कुछ कहे कागज के हवाई जहाज बना-बनाकर दे दिया करता था। वह उड़ाता जाता था और सम्पत उससे बात करता हुआ बनाकर देता जाता था। कभी-कभी बड़े बाबू उसे डांट देते थे पर सम्पत कोमल स्वर में कहता था "क्यों गुस्सा करते हैं बिना माँ का बेटा है जितना इसे सिर चढ़ाओगे उतना थोड़ा।"

संतोष उन स्मृतियों से गद्गद हो गया।

उसे सम्पत से मिले लगभग सात माह हो गए थे। उसे दुःख के साथ अपने आप खीझ भी हुई। सचमुच आदमी बड़ा स्वार्थी और अहसान फरामोश होता है। वह इस वाक्य को मन ही मन कहता हुआ सम्पत के कमरे की ओर चला।

सम्पत सीता का हाथ पकड़े बैठा था।

"तुम मुझसे क्यों नाराज हो? मैं तुम्हें एक बार नहीं हजार बार कह सकता हूँ कि मैं बुरा हूँ, बुरा। बुरा ही नहीं अत्यन्त दुष्ट और निर्दयी हूँ। मैं तुम्हारे हृदय पर बार-बार आघात पहुँचाता हूँ। समझ लो मैंने तुम्हारे हृदय को छलनी कर दिया है टुकड़े टुकड़े कर दिया है। लेकिन तुम बड़ी दयालु हो न तुम जवानी में मुझसे कभी भी नाराज नहीं होती थी।" उसकी आँखों में वेदना चिनगारियों-सी दहक उठी "मुझे याद है कि तुम पहले कभी भी नाराज नहीं होती थी चाहे मैं तुम्हारा कितना अपमान क्यों न करूँ। पर अब तुम बदल गई हो। तुम क्या मुझसे मेरा भाग्य बदल गया है। बड़े बाबू ने मुझे कहीं का नहीं रखा। मेरा सारा रुपया हड़प लिया और मुझे बर्बाद करने के लिए तुम्हें भेज दिया। मैं भी खूब मूर्ख हूँ। क्यों बार-बार उन बातों को दुहराता हूँ जिनके दुहराने से तुम नाराज होती हो।"

संतोष का मन घुटने लगा।

सीता क्रोध में स्थिर बनी खड़ी रही।

सम्पत उसके हाथ को चूमता हुआ बोला "मैं बहुत दुःखी हूँ सीता। मुझे बड़े बाबू ने बर्बाद कर दिया पर तुम्हें मुझसे नाराज नहीं होना चाहिए। आखिर तुम मुझसे पूरे एक युग से प्यार करती हो। एक युग से प्यार करने वाली स्त्री क्या अपने प्रेमी को छोड़ सकती है?"

"मैं तुम्हारी बकवास से परेशान हो गई हूँ। हमेशा-हमेशा तुम एक ही बात को क्यों दुहराते हो? आखिर मैं भी आदमी हूँ। मुझसे ।" वह झल्लाकर बोली

"ओह! तुम सिर्फ आदमी हो और आज का आदमी सब कुछ सह सकता है। वह सहिष्णुता की सीमा को भी पार कर गया है। पर मैं एक पागल हूँ और जो वस्तुतः पागल है वह यह सब कैसे सह सकता है। मुझे जब-जब अपने जीवन के स्वर्णिम दिन याद आते हैं तब-तब मैं दुःख से चीख पड़ता हूँ। काश! मैं शादी कर लेता और स्त्री नामक कमजोरी से बच जाता।"

"फिर स्त्री के लिए मिन्नतें क्यों करते हो?"

"स्त्री मेरे लिए अब दूसरा अफीम है। जिस तरह अफीम के बिना मुझे चैन नहीं पड़ता उसी तरह मुझे स्त्री के माने तुम्हारे बिना नींद नहीं आती। फिर अब तुम मुझे छोड़ नहीं सकती। आखिर तुमने मुझे कृत्रिम प्यार भी क्यों किया है। जो काम क्यों किया जाता है वह आदमी की आदत बन जाता है। तुम अब मुझे छोड़कर नहीं जा सकती।" उसने अप्रसन्न होकर कहा "जा सकती हो?"

"हाँ।"

"फिर जाओ।" कहते हुए उसके चेहरे पर बाल-हठ जैसी भावना चमक उठी जिसमें भय और आवेश दोनों होते हैं।

सीता चलने लगी। भूखे बब्बर की तरह उछलकर सम्पत ने सीता का हाथ पकड़ लिया। उसे बहलाकर बोला "अच्छा मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि अब मैं कभी भी तुम्हारे दिल पर आघात नहीं पहुँचाऊँगा। पर मैं बड़े बाबू को कोसे बिना नहीं रह सकता। -- जरा बैठो।" यह कहकर उसने सीता का हाथ पकड़कर बैठने का आग्रह किया। वह डरी-डरी बोली "क्या बात है?"

"ज़रा बैठो न ?" इस बार सम्पत के चेहरे पर अपार करुणा थी। सीता बैठ गई।

"सीता ! मैं बड़े बाबू को इतनी बददुआ देता हूं कि एक दिन उनका अनिष्ट अवश्य होगा। सच कहना उन्होंने मेरा सत्यानाश नहीं किया ?" उसने अपनी दृष्टि उसपर जमा दी।

"गड़े हुए मुर्दे उखाड़ने से क्या लाभ ?" भावाभिभूत-सी वह बोली "बड़े बाबू का बस चले तो वे अपने बेटे को भी दांव पर लगा सकते हैं। वे एक विचित्र किस्म के आदमी हैं। ऐसे आदमी जिन्हें संसार की सम्पत्ति अपनी कर लेने की हविस है। मुझे भय है कि कहीं वे पागल न हो जाएं।

"वे ज़रूर पागल होंगे।"

'अब मैं जाती हूं। छोटे बाबू बैठे हुए हैं। उन्हें पूछूं कि आपको किसी चीज़ की ज़रूरत तो नहीं है ?"

'हां-हां।"

संतोष झट से सीढ़ियों के पीछे हो गया। जब वह वहां से चली गई तब वह सम्पत के पास आया। सम्पत के अफीम लेने का समय हो गया था। उसने अपने छोटे-से बटुए से अफीम की डली निकाली और उसे सुपारी की तरह चबाने लगा।

"काका कैसे हो ?

वह चौंक पड़ा 'अरे तुम ? कब आए बेटे ?"

'अभी आया हूं काका।

"कैसे हो ?"

"मैं ठीक हूं। काका ! तुम इस अफीम को इस तरह मुंह में कैसे रख लेते हो ? तुम्हें यह खारी नहीं लगती ?"

"नहीं बेटे ! सदा के सेवन से यह चीज़ ही खारी हो गई है। अब इसे मीठी चीज़ भी खारी ही लगती है।"

'काका ! क्या तुम अब भी पूर्ववत् अपना काम कर सकते हो ?"

"क्यों नहीं ? मैं पागल थोड़े ही हूं ? मैं निकम्मा बना दिया गया हूं। मैं

पुरानी मशीन की तरह पुनः गतिशील हो सकता हूं। पर तुम्हारे पिता मुझे डर लगता है कि कहीं तुम अपने बाप की निंदा सुनकर मुझे बर्खास्त न कर दो। मैं दुखी हूं। मैं अब शांति से मरना चाहता हूं और मेरे लिए शांति मेरा यह छोटा-सा कमरा और मौजूदा व्यवस्था ही है।

"मैं आपको कुछ भी नहीं कहूंगा। निंदा ईश्वर की भी लोग करते हैं।" उसने कुछ सत्य बातें सुनने के लिए मधुर स्वर में नीति की बात कहकर उसे प्रोत्साहित किया। उसकी इच्छा हो रही थी कि सम्पत बड़े बाबू की कुछ कमजोरियों से उसे परिचित कराए। यह मनुष्य का स्वभाव होता है कि वह दूसरे की दुर्बलता से परिचित हो।

सम्पत ने समीप पड़ी गिलास को उठाकर पानी का घूंट पिया। क्षण-भर चुप रहकर वह बोला, "आदमी मैंने हजारों देखे हैं पर बड़े बाबू जैसा आदमी मैंने कहीं भी नहीं देखा। उनमें एक पूंजीपति जैसी विचित्र सहिष्णुता और हृदयहीनता है।"

"मैं तुम्हारा मतलब नहीं समझा।"

"मेरा कहना है कि बड़े बाबू में सब गुण हैं।" वह मन ही मन तुरन्त बोला 'अवगुण' हैं। वह फिर प्रकट रूप में रुक-रुककर बोला "वे गुण उनमें कमाने में वृद्धि जरूर कर सकते हैं पर प्यार की सीमा अवश्य घटाते रहते हैं। तुम नहीं जानते एक बार मिल में हड़ताल हुई थी तब बड़े बाबू ने हड़ताल को असफल कराकर ही छोड़ा। पुलिस की गोली से लगभग तीन मजदूर मरे और बड़े बाबू को लगभग एक लाख का लाभ हुआ। उसके ठीक तीसरे दिन बड़े बाबू ने मजदूर के नेता रामभाउरे को गुंडों द्वारा कत्ल करा दिया। रामभाउरे खुद मिल में मजदूर था। आह! जब उसकी पत्नी ने इसी बाड़ी के समक्ष आर्तनाद किया तब मेरे रोंगटे खड़े हो गए। धरती की छाती करुणा उसके रोदन में फूट पड़ी। वह दहाड़ मार-मारकर रो रही थी। बड़े बाबू बड़ी देर के बाद बाहर निकले और दुष्ट खलनायक की तरह चेहरे पर उदासी ला कर विगलित स्वर में बोले 'बहिन! मुझे क्षमा करना कि मुझे आने में देर हो गई। क्या करूं मैं पूजा में बैठा हुआ था।

"मैं लुट गई मैं बरबाद हो गई। वह जमीन पर लोट रही थी।

"मुझे भी ऐसा ही लग रहा है कि तुम्हारा सर्वनाश हो गया। रामप्रासरे एक अत्यन्त ईमानदार और कर्त्तव्यनिष्ठ मजदूर था। मजदूरों के लिए वह निरन्तर संघर्ष करता आया था और यह उसका धर्म भी था कि वह अपने साथियों के लिए संघर्ष करे, उनके हित में सोचे और उन्हें संगठित करके अपने अधिकार दिलाएं। मैं उससे इसीलिए प्रसन्न भी था। मुझे जिन्दगी से जूझनेवाला व्यक्ति बहुत अच्छा लगता है। तुम आंसू न बहाओ। मैं तुम्हें तुम्हारे अधिकारों से वंचित नहीं करूंगा और कानून को मैं खुद मजबूर करूंगा कि वह अपराधी का पता लगाए।

"बड़े बाबू के इस आश्वासन को सुनकर वह चली गई। लेकिन हर मजदूर तुम्हारे बाप से घृणा करता है। उनके नाम पर थूकता है।

"और तो और, उन्होंने तुम्हारी मां को मृत्यु-दान दिया। वह बेचारी इनके प्यार के लिए तरसती रहती थी और ये बुभुक्षित इन्सान की तरह पैसों के पीछे भागते रहते थे और अन्त में उसे टी० बी० हो गई और वह मर गई। उसकी जीवन भर एक ही तमन्ना रही कि उसे उसका पति हृदय से प्यार करे। पर बड़े बाबू उसे प्यार नहीं कर सके और वे" बुरा न मानना मैं एक अत्यन्त पीड़ा-दायक बात कहने जा रहा हूं शायद तुम्हें अपमानजनक भी लगे पर मैं कहूंगा ही मुझे बड़े बाबू की प्रशंसा (वस्तुतः उसने इस शब्द को निन्दा के लिए ही प्रयोग किया था) करने में बड़ा आनन्द आता है। आखिर वे मेरे स्वामी हैं। मैंने उनका नमक खाया है। मुझे उनकी प्रशंसा करनी ही चाहिए।" तो मैं कह रहा था कि उन्होंने तुम्हारी मां की हत्या की। यह बात बिलकुल सत्य है पति की उपेक्षा भी पत्नी के लिए धीरे धीरे प्रभाव करनेवाला जहर ही होती है। और बाद में ढलती उम्र में वे चरित्रहीन हो गए। वे छुप-छुपकर कई छोकरियों को बुलाते हैं। "सम्पत के चरणों में घृणा-सी तैर उठी। शरीर में कम्पन आ गया वह तेज स्वर में बोला "सीता भी उनकी अपनी ही प्रेयसी थी जो बाद में उनके संकेत पर मेरी हो गई। यह एक विधवा है जो अपने धर्म को छोड़कर एक मायावृत शरीफ रईस का पेशा करती है और अपने स्वामी की

आशा पर दूसरों को लूटती है। पर मैंने इसे अपने बन्धन में बांध लिया है। अब इसकी आदत हो गई है कि यह मुझसे दिन में एक-दो बार झड़प करे। अब यह झड़प भी हमारे आनन्द में शामिल हो गई है।"

"अच्छा मैं चलता हूं।" संतोष ने इस तरह कहा जैसे सम्पत की बातों का उसपर कोई प्रभाव नहीं हुआ है, जैसे वह उसका अनगल प्रलाप ही है। सम्पत को झटका-सा लगा। 'क्या उसकी लम्बी बातों का छोटे बाबू पर कुछ भी असर नहीं हुआ? उसने घृणा से मुंह बिचकाकर जाते हुए संतोष की पीठ को देखा "जैसे नागनाथ वैसे सांपनाथ।"

संतोष के ओझल होते ही सीता घबराई हुई-सी आई। वह व्यग्र स्वर में बोली "तुमने जरूर कोई अनुचित बात छोटे बाबू से कही होगी वर्ना वे ... का नाश्ता किए बिना नहीं जाते।"

"मैंने जो कुछ कहा वह उनके पूछने पर कहा।"

"क्या कहा?"

"मैंने कहा कि बड़े बाबू इन्सान के रूप में शैतान हैं।"

"हाय-हाय क्या तुम चैन से जीवन भी गुजारना नहीं चाहते हो? मुझे पक्का विश्वास है कि इस बार तुम्हें वे अपने घर से धक्के मारकर बाहर निकाल देंगे।"

"निकाल दें तो निकाल दें।" उसने गुस्से में कहा।

"जाओगे कहां? सड़कों पर मारे-मारे फिरोगे?"

"फिरता रहूंगा।"

"एक मधीमची बुद्धि में ऐसी ही हेकड़ी दिखाता है। मुझे अब पूरा-पूरा विश्वास हो गया है कि तुम पागल हो गए हो या तुम्हें पागलपन के दौरे पड़ते हैं। शायद तुम्हें पता नहीं कि एक बार पहले भी तुम इसी तरह बड़े बाबू से झगड़कर अपनी बेटी के घर गए थे। उस बेटी के घर जिसे तुमने पचास हजार रुपये नकद दहेज में दिए थे और उसके बदले में उसने तुम्हें एक बूढ़ा कुत्ता समझा था। तुम वहां सूखी रोटियां खाते-खाते भूखों मरने लगे और शीघ्र ही वहां से वापस भाग आए। क्योंकि तुम धनवानों के स्त्री-पुरुषों का धर्म भी विचित्र है। जब तक पति पिता भाई मामा इत्यादि के पास रुपया रहता है तब तक

तुम्हारी स्त्रियां तुम्हें उस नाम के अनुसार इज्जत देती हैं बाद में वे तुम्हें कुछ भी नहीं समझतीं। इसलिए मेरा कहना मानो और किसान के बूढ़े बैल की तरह मालिक की ओर टुकुर-टुकुर देखते रहो।"

सम्पत का आवेश ठंडा हो गया। वह कुछ देर तक मौन बैठा रहा। बाद में बोला "बड़े बाबू मुझे घर से नहीं निकाल सकते। मेरा उनके पास लगभग सवा लाख रुपये हैं। आज किसी और के पास होता तो उतना ही ब्याज और हो जाता। ईमानदारी से यही कहा जा सकता है कि अब उनके पास मेरी दूनी रकम हो गई है।"

"बस-बस चुप रहो और मैं तुम्हें वही नाश्ता कराती हूं जो मैंने छोटे बाबू के लिए बनाया है।" सीता के अधरों पर एक स्निग्ध मुस्कान बिखरी और वह चली गई।

सम्पत सोचने लगा "मैं शीघ्र ही आवेश में आ जाता हूं। मुझे आवेश में नहीं आना चाहिए। सीता ठीक कहती है कि मुझे सदा मौन धारण करके टांग टूटे घोड़े की तरह पड़े रहना चाहिए—इस घुड़साल जैसे कमरे में। और उसने सदा की तरह प्रतिज्ञा की कि भविष्य में वह कभी भी इस तरह की बातें नहीं कहेगा।

सीता नाश्ता ले आई। उसने नाश्ता करते हुए कहा "फिर भी स्त्रियां स्वभावतः पुरुषों की अपेक्षा अधिक दयालु होती हैं। तुम्हें देखकर मुझे कुछ ऐसा ही लगता है।"

सीता ने कहा "यह सब तुम मेरे कारण कहते हो क्योंकि मुझे लग रहा है कि तुम फिर जवान की तरह उत्तेजित होओगे वर्ना स्त्रियों के बारे में तुम्हारी राय बहुत गंदी होती है। तुम उन्हें सदा धोखेबाज कहते हो।"

"पर तुम्हें नहीं।" उसने ढीठता से कहा।

"मुझे भी।" वह कड़ककर बोली और चली गई।

थे, अब बाहर के नाम से उत्साहित हो जाते हैं। उनमें एक स्फूर्ति आ जाती है।

धीरे-धीरे यह खबर बड़े बाबू के कानों में भी पहुँची।

बड़े बाबू सृष्टि-मंच के कुशल अभिनेता थे। वे एकांत में बैठकर गंभीरता से हर बात पर आदि से अंत तक विचार करते थे।

और एक दिन दोपहर को जब सन्तोष कानपुर जाने को तैयार हो रहा था तब बड़े बाबू ने वकील की तरह निःसंकोच होकर कठोर स्वर में पूछा, "बहू से कुछ अनबन हो गई है ?"

"नहीं तो।

"झूठ क्यों बोलते हो ? मेरी तेज आँखें आदमी के अन्तस् का मर्म जानने की अभ्यस्त हो चुकी हैं।"

"पर आपको केवल वहम है।"

"मुझे वहम अवश्य है किन्तु मेरे वहम का सदा कोई न कोई आधार होता है। बात क्या है ? उन्होंने कड़ककर पूछा।

"कुछ भी नहीं। आप ?"

"बेटा आत्मवंचना पाप है। सन्देह को व्यापक बनाकर अपने जीवन को विषाक्त बनाना सर्वथा बुद्धिहीनता है। किसी बात का शीघ्र स्पष्टीकरण ही लाभप्रद होता है।

"मैं आपको कुछ ?"

"मुझे दुःख है कि मेरा एक बेटा अपना दुःख मुझे नहीं कह रहा है। इससे अधिक मुझ जैसे बाप का दुर्भाग्य क्या हो सकता है ? मैं नहीं चाहता तुम मेरी लक्ष्मी जैसी बहू को अपमानित-लांछित करो। मुझे यह भी विदित हुआ है कि तुम्हें उसके चरित्र पर सन्देह है। अगर ऐसी बात है तो मुझे दुःख है कि तुम मेरी बहू को नहीं समझ पाए हो। वह एक नितान्त साध्वी और कोमल स्वभाव की स्त्री है। वह मैले पानी की नाली कभी नहीं हो सकती और न ही उसे तुम वह स्थल कह सकते हो जिसपर हर कोई इस्नान करता जाए।"

"नहीं नहीं ऐसी बात नहीं।" उसने डरते-सहमते हुए कहा। उसका स्वर

कांप रहा था और उसके चेहरे पर सफ़ेदी झलकने लगी थी।

"तुम्हारा कांपता हुआ स्वर और चेहरे की परेशानी मुझे बता रही है कि तुम उसे कुलटा समझने लगे हो। अगर यह सही है तो मुझे कहना पड़ेगा कि तुममें कुछ अक्ल नहीं है और तुम हिन्दुस्तानी फ़िल्म के नायकों की तरह सोचते हो। मैं तुम्हें विश्वास दिला रहा हूं कि वह साध्वी और सती है। तुम्हें वापस अपना हंसता-गाता संसार बसा लेना चाहिए।"

संतोष की सांस रुक रही थी। उसने बड़ी मुश्किल से इतना ही कहा "मेरा चुनाव गलत हो गया है।

"यह तुम्हारी अक्ल का दिवालियापन है। तुम नहीं जानते कि मैं तुम्हारी मां की कितनी इज़्ज़त करता था? मैंने इस घर की इज़्ज़त बनाने के लिए कौन सा गुर नहीं छोड़ा? मैं नहीं चाहता कि तुम उस सब पर पानी फेर दो।"

संतोष को सम्पत की बातें याद हो उठीं। वह घृणा से भर उठा। उसने मन ही मन कहा 'आपने मेरी मां को मारा आप हत्यारे हैं। सम्पत को आपने पीछे की मार दिया। पर मैं उनकी तरह मन में कुंठाएं लेकर मरना नहीं चाहता। क्या आप समझते हैं कि कोई पत्नी अपने पति से यह कहेगी कि उसका किसीके साथ अनुचित सम्बन्ध है?

"क्या सोच रहे हो?"

"कुछ भी नहीं।"

"बहू को कुछ भी न कहना। वह देवी है। औरत अनादर की वस्तु नहीं है। वह सर्वथा पूजनीय और विश्वसनीय होती है।"

लेकिन बड़े बाबू को इस घटना की सारी पृष्ठभूमि मालूम थी कि वह लड़का उसके पास आया था और संतोष की अनुपस्थिति में वह बहू से मिला था और अचानक संतोष के आ जाने से वह घबराकर चला गया। पुरुष के लिए इतनी घटना ही काफ़ी होती है—स्त्री को तंग करने के लिए।

रसोई बनानेवाली ब्राह्मणी ने इस रहस्य का पता नौकर से लगा लिया और उसने बड़े बाबू को यह घटना ज्यों की त्यों बता दी। उस समय बड़े बाबू के चेहरे पर कुटिल रहस्य-भरी मुस्कान थी।

बड़े बाबू सीता से भी मिले और उसको यह आश्वासन दिया कि वह कोई भी चिन्ता न करें। यह संतोष का बचपना है। फलस्वरूप सीता की हिम्मत बढ़ गई और वह संतोष से यह कहने लगी कि अगर उसने उससे बातचीत कर भी ली तो कौन-सा गुनाह कर दिया ? आकर्षित होना कोई पाप नहीं है इत्यादि।

उसकी इस स्पष्टवादिता भरे उत्तरों ने संतोष के संदेह को और बल पहुंचा दिया। उसे लगा कि जो पत्नी इतनी धृष्टता से ऐसी निम्न बातें कह सकती है, वह ? उसका संकीर्ण मन इस तरह की बातों को निम्न ही समझता था।

धीरे धीरे उनका तनाव बढ़ता ही गया।

अब मैं पुनः छूटे हुए प्रसंग पर आता हूं।

अपनी बहू से झगड़कर वह सीधा बड़े बाबू के पास पहुंचा। बड़े बाबू उस समय बड़े उत्तेजित और उद्विग्न थे। वे अपनी बैठक में चहलकदमी से टहल रहे थे। संतोष ने जैसे ही कमरे में प्रवेश किया वैसे ही बड़े बाबू ने उसे मर्म-भेदी तीखी दृष्टि से देखा। वह तीखी दृष्टि एक सम्मानित प्राणी की ही हो सकती है जिसमें गुस्सा आतंक और निष्ठुरता से मिश्रित विचित्र जलन की दीप्ति रहती है। बड़े बाबू की उस दृष्टि को कोई सहन नहीं कर सकता है। संतोष उस आकृति को देखकर अपने मन की सब बातें सपने की तरह भूल गया।

बड़े बाबू बार-बार हाथों को मल रहे थे। बार-बार वे नाक से फूं-फूं की अजीब आवाज कर रहे थे।

संतोष भयभीत बालक की तरह उनके सामने खड़ा था। वह कुछ भी नहीं बोल पा रहा था। उसके बोलने की हिम्मत भी नहीं हुई।

"मैं आज हार गया। मुझे मेरे प्रतिद्वन्द्वी ने वह पराजय दी है जिसकी मुझे इस जन्म में क्या सात जन्मों में भी आशा नहीं थी। यह सब तुम्हारे कारण हुआ। इसके जिम्मेवार तुम हो।"

"मैं कुछ भी नहीं समझा। उसने बड़े बाबू की ओर देखते हुए कहा।

"तुम कैसे समझोगे ? तुमने का[illegible] प्रश्न खड़ा करके मुझे संकट

कर दिया। आह! कितनी बढ़िया कम्पनी मेरे हाथ से चली गई। काश! तुम सेठ पन्नालालजी की लड़की से विवाह कर लेते?" बड़े बाबू ने चंचलता से एक दो बार विचित्र तरह से हाथ हिलाया। उनके हाथों की उंगलियों में इतना कठोरपन आ गया था जितना हिस्टीरिया के रोगी की उंगलियों में आता है। संतोष को वहम हो गया कि शायद पिताजी को दौरा आनेवाला है। इस विचार से उसका चेहरा पीला पड़ गया और आंखों में भय नाच उठा। वह थोड़ा-सा उनके समीप बढ़ा। किन्तु बड़े बाबू ने अपनी बड़ी-बड़ी मूछों पर हाथ फेरकर कहा "इस पराजय के जिम्मेवार तुम हो। मुझे पन्नालाल ने ऐन मौके पर धोखा दे दिया। आदमी की बात की कीमत कुछ भी नहीं है। इस घटना के बाद मुझे यकीन हो गया है कि मैं किसीका विश्वास नहीं करूंगा। पन्नालाल ने मुझसे बदला भी कितना भयंकर लिया है! मुझे करोड़पतियों में नीचा दिखा दिया है!"

"मैं आपका मतलब नहीं समझा।"

बड़े बाबू धम्म से बैठ गए। आरामकुर्सी पर उनके पांव हिल रहे थे। संतोष उनके सामने बैठ गया।

"मेरी सारी कोशिशों पर इस पन्नालाल के बच्चे ने पानी फेर दिया। इस कम्पनी के लिए मैंने क्या नहीं किया! महाराजजी से अपना सम्बन्ध बिगाड़ा। क्योंकि मैं उनके कुछ हीरों को इलाहिट समझ की गोलियों की तरह पचा गया। और तो और उनके जेवरात बेचकर सारे रुपये लेकर मैं सीधा कलकत्ता चला आया। अगर मुझे ऐसा मालूम होता कि यह कम्पनी मुझे नहीं मिलेगी तो मैं अपनी उस मुर्गी को धीरे धीरे हलाल करता अर्थात् यह एक करोड़ की सम्पत्ति लेकर सीधा यहां नहीं चला आता। मैंने पन्नालालजी को पत्र में यह भी कहा कि अगर उसमें अपनी पार्टनरशिप डाल लें पर उन्होंने मुझे थप्पड़ जैसा उत्तर दिया, 'मैं तुम्हारे साथ एक पैसे का भी धंधा नहीं कर सकता। तुमने मेरी पगड़ी उछाली और मैंने तुम्हारा कुछ का वापस नहीं रहने दिया।' वह मुझे सीधा आपका दुम-दुम कहने लगा।" और मुझे इस तरह जिन कर लिया जैसे मैं कोई संस्था का चरागोर हूं। मैं उनकी यह उपेक्षा और बर्ताव नहीं सह

सकता। मैं उससे बदला लूंगा। उसे अपनी करनी का फल चखाऊंगा।"

बड़े बाबू की बड़ी-बड़ी मूंछें कत्थक नृत्य करने लगीं।

संतोष सदा की तरह मौन रहा।

बड़े बाबू ने कहा "फिर भी कुछ रुपयों का बंदोबस्त हो जाए तो मैं अपनी बात रख सकता हूं।"

"जब प्रतिष्ठा का ही सवाल आ गया है तब आप किसी महाराज को अपनी मिल गिरवी रखकर इतनी रकम प्राप्त कर सकते हैं। बेकारी में महाराजा लोग आपका यह सौदा मंजूर कर लेंगे अथवा बैंकों से भी रुपया लिया जा सकता है।"

"मैंने यह प्रण कर रखा है कि दूसरों के रुपयों से यह खेल खेलूंगा। खैर, इतनी गहरी और गंभीर बातें तुम नहीं समझ सकते ? तुम अहमदाबाद जाओ और 'मीनू भाई चुन्नी भाई' के मालिक विमल भाई से मिलो। उन्हें यह कागजात दिखाना और कहना कि अगर आप यह कम्पनी खरीद सकते हैं तो आपको बहुत लाभ होगा। यह एक अच्छी 'गुडविल' की कम्पनी है और इसके अन्तर्गत जितने भी कन्सर्नस हैं, वे अच्छी आमदनी के हैं।"

"जैसी आपकी आज्ञा।

"हवाई जहाज से जाना।"

उसको भेजकर बड़े बाबू निश्चिन्त हो गए। पर जैसाकि उनका स्वभाव है कि बात के प्रति वे व्यग्र से व्यग्रतर हो जाते हैं, आज भी ऐसा ही हुआ। वे पन्नालाल द्वारा किए गए तिरस्कार और अपमान को बड़ी देर तक नहीं भूल सके।

वे दिन भर सदा की तरह अपना कार्य करते रहे। व्यापारियोंवाली स्थिरता उनमें मौजूद रही। किन्तु उनके मस्तिष्क की व्यापारियोंवाली सजगता भी नहीं सोई थी। उन्हें बार-बार पन्नालाल की याद हो उठती थी। तब उनका मन क्षण-भर के लिए मौजूदा वातावरण से हटकर कहीं और भटक जाता था। राग द्वेष और हिंसा से भर जाता था। आंखों में आग बरसने लगती थी और हाथ-पांव ऐंठने लगते थे।

रात का खाना खाते समय उन्होंने एक सम्पूर्ण योजना बनाई।

वे सोचते रहे—पन्नालाल ने मेरा अपमान किया।
पन्नालाल ने मेरा तिरस्कार किया।
पन्नालाल ने मुझे एक चंदाखोर की तरह निकाला।
पर क्यों ?

बड़े बाबू गंभीर होकर विश्लेषण करने लगे। उन्होंने खाना बीच में ही बन्द कर दिया। महाराज उन्हें बड़ी देर तक साभिप्राय दृष्टि से देखता रहा। उसकी हिम्मत नहीं हुई कि वह बड़े बाबू को यह कहे कि रोटी ठंडी हो रही है।

बड़े बाबू ने फिर विचारा—
क्योंकि मैंने उसकी पहले पगड़ी उछाली।
मैंने उसका मर्मान्तक अपमान किया।
मैंने अपने वचनों का पालन नहीं किया।
मैंने उसकी लड़की को लांछित किया।
क्यों किया ?

बड़े बाबू चौंककर इधर-उधर देखने लगे। महाराज उनके सामने बुत-सा खड़ा था।

"क्या बात है ? उन्होंने क्रोध से महाराज की ओर देखा।

"आपको क्या चाहिए ?" उसने कांपते हुए पूछा।

बड़े बाबू ने इधर-उधर देखा "मिठाई।" क्या रसगुल्ला है ?"

"जी।"

"दो दे दो।"

बड़े बाबू ने दो-चार कौर और लए। एक रसगुल्ला भी खाया और बाद मे वे पुनः समाविष्ट हो गए।

मैंने अपने बेटे की इच्छा के लिए यह सब किया ? मेरे बेटे न लड़की के गुण को नहीं रूप को देखा और अब परेशान हुआ घूमता है। लेकिन पन्नालालजी क एक और बेटी है न ? हां है ? अद्भुत परिवर्तन था मया बड़े बाबू के चेहरे पर। कोमलता की रेखाएं उनके हों ं पर नाचती हुई भेद भरी मुस्कान में मिल गई। वे बड़ी जल्दी खाना खाने लगे। जैसे उन्होंने अपन मन

में पूरी योजना पर सफलतापूर्वक सोच लिया हो।

"बाबू सा' एक रसगुल्ला ?"

"बस।" बड़े बाबू ने बड़े उत्साह से हाथ धोया।

'आप बड़े खुश नजर आ रहे हैं। पहले मैं आपकी आकृति देखकर डर गया था।" महाराज ने चाटुकारिता से कहा।

'महाराज! अन्धे को आँखें मिल जाने से जो खुशी होती है वही खुशी मुझे अभी हो रही है। मैं प्रभु को धन्यवाद देता हूं कि उसने मेरी विचार-शक्ति को बहुत तेज बनाया है।"

"आपको खुश देखकर मुझे भी खुशी होती है।"

यह एक वफादार नौकर के लक्षण हैं।"

बड़े बाबू बाहर चले गए।

उसके कुछ दिनों बाद ही इस तनाव की खबर संतोष और नीता के सभी परिचितों में फैल गई। उनसे किसीने कोई प्रश्न नहीं किया पर घर की नौकरानियां चोरी-छुपे उन्हें लेकर अवश्य चर्चा करती थीं। उनकी आंखों में एक निरादर की भावना चमका करती थी जिससे नीता नौकरानियों पर बार बार झल्ला पड़ती थी। संतोष की मन:स्थिति बड़ी विचित्र थी। वह अन्तर्वेदना में जल उठा और उसे लगता था कि उसकी बीवी जितनी रूपवती है उसका हृदय उतना ही कुरूप है। और वह एक चरित्रहीन स्त्री के कार्य-कलापों को मन ही मन दुहराकर व्यग्र हो जाता था। उसके समक्ष किस्सा तोता-मैना की कुछ बेवफा नायिकाएं घूम जाती थीं और वह मर्मान्तिक वेदना से कराह उठता था।

कल ही की बात है।

उसकी मिल का एकाउन्टेंट उसे कह रहा था "एक चरित्र बदनाम छोकरे को मैंने आपके बंगले से निकलते देखा। आजकल ऐसे लड़के चोरियों में सिद्ध

दुस्त होते हैं आपको होशियार रहना चाहिए।"

संतोष के कमजे पर ऐसी बात से तीर बस जाता। वह एकदम उद्विग्न हो जाता और उसके फड़कते हुए होठों के बीच से एक विचित्र किन्तु धीमी ध्वनि होती—हुम् हुम् हुम्। चाहे वह लड़का कोई भी हो किन्तु उसके मस्तिष्क में एक ही लड़के की तस्वीर छा गई थी।

एक दिन बड़े बाबू ने उसकी व्यग्रता को और बढ़ाया। वे उसे डाँटने लगे। कहने लगे "तुम निरे मूर्ख हो। तुममें मेरा गुन ही नहीं। यह अधीरता और व्यग्रता नादान बच्चों में होती है। केवल मन ही मन बड़बड़ाते रहते हो। आखिर बात क्या है? जो मन में है उसे साफ-साफ क्यों नहीं कहते?"

वह दर्द भरे स्वर में इतना ही कह पाया "मुझे आपकी बहू ने परेशान कर दिया है। वह मुझसे बहुत जबान लड़ाती है।

"मर्द की तरह शासन क्यों नहीं करते? मैंने पहले ही कहा था कि इस की जगह खानदान को देखो पर मेरी किसने सुनी? आदमी जरा-सी अंग्रेजी क्या पढ़ लेता है गोया अपनी ही बुद्धि को श्रेष्ठ समझता है? पर मुझे तुम्हारी एक बात अच्छी नहीं लगती कि तुम अपनी बहू को सन्देह की दृष्टि से देखो। वह आखिर लक्ष्मी होती है। उसका निरादर दरिद्रता को लाना है। खानदान को बदनाम करना है। और बड़े बाबू की इस बात से वह और उद्विग्न हो जाता और घर आकर वह नीता से झगड़ पड़ता कि तुम पिताजी को सिखला-सिखला कर मेरे पास भेजती हो।

नीता उसका विरोध करती थी। उसे विश्वास था कि बड़े बाबू उसके पक्ष में हैं और इसी आधारहीन विचार से वह संतोष के अपमान का जवाब मुड़कर से दिया करती थी। धीरे धीरे उन दोनों के बीच वातावरण विषाक्त हो गया और वाक्-युद्ध इस सीमा तक पहुंच गया।

"वह लड़का क्यों आता है?

"वह लड़का हजार बार आएगा।

"तू कुलटा है।

"मैं नहीं कुलटा हूं! बस!"

और फिर परस्पर विपाक्त बातें। संतोष का मन विचलित हो गया। उसे लगा कि नीता उसके जीवन में ज़हर घोल देगी। वह उससे डरने भी लगा। क्योंकि उसको किसीने कह दिया था कि चरित्रहीन स्त्रियाँ अन्त में पति को भी मार देती हैं या तांत्रिकों से मरवा देती हैं।

एक दिन ज़रा-सी बात को लेकर संतोष ने नीता को पीट दिया। बड़े बाबू ने उसे भला-बुरा कहा और नीता को भी डाँटा। नितान्त संतोष मरने की धमकी-भरा यह पत्र लिखकर चौथे दिन चुपके-से गायब हो गया। उसके गायब होते ही बड़े बाबू ने नीता को आड़े हाथों लिया जो मुझे रसोई बनानेवाली ब्राह्मणी ने बताया।

बड़े बाबू दूसरे ही दिन आए और बिलखती हुई नीता को डाँटकर बोले, "मैं तुम्हें ऐसी नहीं समझता था। आखिर तुमने मुझसे मेरे बेटे को अलग करा ही दिया। अगर उसे कुछ हो गया तो मैं तुम्हें ज़िन्दा नहीं छोड़ूँगा।
मैं जानता हूँ कि तुम सती हो पर गत दिनों का व्यवहार देखकर मुझे लगा कि तुम्हारे मन में ज़रूर कहीं न कहीं खोट है। पति के साथ ऐसा दुर्व्यवहार मैंने कहीं नहीं देखा। झगड़े-फसाद मत-मुटाव लड़ाई आदि होती रहती है किन्तु पत्नी ऐसी स्थिति उत्पन्न नहीं करती कि उसका पति उसीके सुहाग को ख़त्म करने को विवश हो। यह तुम्हारे लिए लज्जा की बात है, अत्यन्त लज्जा की। मैं कहता हूँ कि मुझे मेरा बेटा जल्दी से जल्दी वापस दे दो अन्यथा मैं किसी अनर्थ का ज़िम्मेदार नहीं रहूँगा। और हाँ, इस बात का ख्याल रहे कि यह भेद भेद ही बना रहे।"

नीता का साहस रात के सपने की तरह खंड-खंड हो गया। उसने भी यह निश्चय कर लिया कि अगर संतोष एक माह के भीतर नहीं आया तो वह भी अपने प्राण दे देगी।

स्थिति बड़ी गंभीर थी।

जो मैंने कहानी का पर्दा बंद किया था वह यहाँ ख़त्म हो गया है। अब स्थिति यह है कि अगर एक माह में संतोष का पता नहीं लगा तो नीता मर जाएगी।

इस गंभीर और विकट वातावरण में बड़े बाबू की तटस्थता और स्थिरता ने मुझे संदेह में डाल दिया और मुझे लगा कि हो न हो संतोष की खबर बड़े बाबू को अवश्य है। चाहे कुछ भी हो एक बाप अपने इकलौते बेटे के लिए, जो बिना कुछ कहे मृत्यु की धमकी देकर चला गया है ऐसी शांति से नहीं रह सकता।

मैं सम्पत के पास गया।

मैंने उसके समक्ष अपने मन की इस जिज्ञासा को रखा। उसने मुझे तुरन्त बताया "यह संभव है। बड़े बाबू के पेट की पाचन-क्रिया इतनी तेज है कि उसमें हर वस्तु बिना किसी गड़बड़ी के रह सकती है।"

मैंने गीता से भी यह प्रश्न किया "मुझे ऐसा लग रहा है कि इस दुर्घटना को घटित कराने में बड़े बाबू का हाथ है। बड़े बाबू यह जानते हैं कि संतोष कहां है। क्या एक बाप ऐसी स्थिति में इस शांति से बैठ सकता है?"

गीता ने स्पष्ट शब्दों में विरोध किया "यह संभव नहीं। बड़े बाबू उन्हें बहुत प्यार करते हैं। वे इतने नीच और कमीने नहीं हो सकते।"

लेकिन मैंने एक धृष्टता की। मैंने एक अन्य सम्वाददाता को कह दिया कि संतोष के गुम हो जाने की यह खबर तुम छाप दो। उसने मेरे संकेत पर यह खबर प्रकाशित भी कर दी। फिर क्या था? लोगों की भीड़ बड़े बाबू के यहां लग गई। टेलीफोन पर टेलीफोन आने लगे। बड़े बाबू अब क्या करते उन्हें विवश होकर यह मानना पड़ा कि लड़का गायब है। उनके मुख से ऐसा निकलना था कि चर्चा ने और गंभीर रूप धारण कर लिया। बड़े बाबू की परेशानी आने जानेवालों ने और बढ़ा दी पर कारण अस्पष्ट ही रहा।

इससे गीता की व्यग्रता और बढ़ गई।

चौथे दिन दुखी महाराज ने मुझे एक राज और बताया।

उस राज ने मुझे बड़े बाबू के प्रति घृणा से भर दिया। संतोष के गायब हो जाने की खबर को सुनकर रसोई बनानेवाला महाराज बहुत दुखी हो गया। 'इकलौता बेटा और वह भी बिना कारण चला जाए, यह ठीक नहीं है।' उसे रह रहकर यही लगता था कि जरूर बड़े बाबू ने उसे डांटा होगा जिससे वह

"तुम्हारा मतलब है कि वह नादान लड़का मुझसे झगड़ा करेगा ?"

"अब यह कैसे संभव है ? मैं अभी कुछ भी प्रामाणिक रूप से नहीं कह सकता हूं कि संतोष जिंदा है या मर गया है। पर मुझे अभी-अभी एक दूसरा पत्रकार बता रहा था कि वह आपके कब्जे में है और आप उसको तब तक छुपाए रखना चाहते हैं जब तक मीता मर न जाए। मुझे वह पत्रकार यह भी कह रहा था कि उन दोनों के बीच वैमनस्य की आग भड़कानेवाले भी आप ही हैं, क्योंकि आप लालचवश पन्नालालजी की बेटी को अपनी बहू बनाकर उन्हें पुनः प्रसन्न करना चाहते हैं। मैं बड़ी दृढ़ता से साहस को बटोर-बटोरकर बोल रहा था।

बड़े बाबू का चेहरा एकदम लाल हो उठा और वे पागलों की तरह चीख पड़े "चुप हो जाओ। निकल जाओ यहां से। जाओ। तुम्हें जो कुछ भी करना है, वह कर लो।

मैं उनकी भयानक आकृति देखकर डर गया। उन्होंने आवेश में प्याली को उठाकर जोर से दीवार पर फेंक दिया। मैं अप्रतिभ हो गया। मेरा खून जमने लगा। मैंने किसी आदमी के चेहरे पर ऐसी नृशंस और विकराल भावनाएं पहले कभी नहीं देखी थीं। बड़े बाबू अनिमेष दृष्टि से मुझे देख रहे थे और कांप रहे थे। उनकी आंखों में हिंसा भी छिपा।

"मैं आपकी तरह गुस्से में कोई अनुचित कदम नहीं उठाऊंगा। मेरा कोई कदम आपकी प्रतिष्ठा के लिए जबर्दस्त कलंक बन सकता है। तब आपके अपने सेठिया-समाज में आपका ओहदा एक हत्यारे से अधिक नहीं रहेगा और आपको उससे अत्यन्त दुस्सह पीड़ा मिलेगी। मैं यही चाहूंगा कि आप इस तरह की नीच मनोवृत्ति का परित्याग कर दें और अपने बेटे को बुला लें। मुझे पूरा विश्वास है कि बच्चा आपके अपने अधीन है।"

मेरी कम्पनहीन वाणी के कारण बड़े बाबू सहम गए। कुछ हकलाते हुए वे बोले "मैं अपने इकलौते बेटे के लिए कितना दुखी हूं यह मैं ही जानता हूं। तुम मुझे सांत्वना देने के बजाय और सताना चाहते हो सताओ। मुझे इससे बड़ा संताप पहुंचेगा। सचमुच मुझे अब मालूम हुआ कि तुम इतने निर्दय और दुष्ट हो।"

'यह कितना अभिनय प्रवीण है।' मैंने मन ही मन सोचा 'क्या पैसा आदमी को इस सीमा में ला देगा ? उसे इतना क्रूर, निर्दयी और स्वार्थी बना देगा ?'

'मैं खुद चाहता हूं और ईश्वर से प्रार्थना भी करता हूं कि मेरा बेटा सकुशल घर वापस आ जाए। और तुम तो एक चतुर जासूस हो। तुम्हें इसके लिए गलत नहीं सही प्रयास करने चाहिएं। मुझे भय है कि कहीं उसे डाकू उठाकर नहीं ले गए हों।" वे क्षण-भर चुप रहकर पुनः बोले "जब से तुमने उसके गुम हो जाने की खबर अखबार में छपवा दी है तब से पुलिसवालों दूसरे परिचितों एवं अपरिचितों ने मेरे नाकों में दम कर दिया है। हर समय मतलब-बेमतलब तंग करते रहते हैं और बिना पूछने पर भी पुलिसवाले कहते हैं, 'चोर जोर शोर से जारी है। मैं तुम्हें पूछता हूं कि तुम्हें ऐसा करने से क्या मिला ?"

वे इस उम्र में भी दुःख का अभिनय कितना अच्छा कर रहे हैं ?' मैंने एक बार फिर अपने मन में कहा। 'लगता है कि यह वह आदमी नहीं है जो मुझे पहले पहल मिला था। जो बहुत कम बोलता था और जिसके चेहरे पर कोमलता नाम की हल्की कांति भी नहीं थी।

मैं उठा और अपनी बात का अन्त करता हुआ बोला "आपको मालूम रहना चाहिए कि अखबारवाले बाल की खाल खींचते हैं। अच्छा यही होगा कि आप अपने बेटे को बुला लीजिए और उसे साफ-साफ कह दीजिए कि तुम्हारी बहू पवित्र है। यह सब मेरे द्वारा फैलाया गया जहर था।"

मैं उनका उत्तर सुने बिना ही बाहर चला आया।

"तुम तुम तुम ! वे जोर से चीखे।

पर मैंने उनकी ओर पलटकर नहीं देखा। वस्तुतः मेरे मन ने उनको देखना स्वीकार भी नहीं किया। क्योंकि ऐसी बात सुनकर उनके चेहरे पर कितनी भयंकर प्रतिक्रिया हो सकती है इसे मैं खूब जानता था।

मैं जल्दी-जल्दी सीढ़ियां उतर गया।

बड़े बाबू का चेहरा संताप से पीला पड़ गया और उन्होंने निःशक्त प्राणी की तरह अपनी गर्दन को धीरे-धीरे उठाया।

उन्होंने ज्यों ही दर्पण में अपना चेहरा देखा त्यों ही उन्हें पहली बार ऐसा महसूस हुआ कि वे बूढ़े हो गए हैं। उनका सारा खून कहीं गायब हो गया है। उनके चेहरे पर अनेक झुर्रियां हैं।

वे निराशा से मन ही मन तड़प उठे 'यह मानवता के हामी अपनी मानवता से दूसरों को क्यों परेशान करते हैं? मैं एक व्यापारी आदमी हूं और मुझे येन केन प्रकारेण अपने धन को दिन दूना और रात चौगुना करना चाहिए पर यह चूम मेरी कठिनाई से की गई सारी योजना को असफल कर रहा है। मैं बर्बाद हो जाऊंगा। मैं लुट जाऊंगा।'

वे अर्थ-पिपासु की तरह चहलकदमी करने लगे।

'यह जरूर सारी घटना को अखबार में छापेगा। यह भी सही है कि यह उसमें यह भी लिखेगा कि इसमें मेरा हाथ है। और लोग यह सब जानते ही मुझे अपमानित करने और मुझे राक्षस तक कहेंगे। इस एक घटना के पीछे लोग भूली हुई बातों को दुहराएंगे जैसे भगत की मिल का हड़प जाना अपनी बीवी को भगत को और उसकी बीवी से जुड़ । कुन्दनलाल की रकम। बैंक का फेल करना और अम्बर को अफीमची बनाकर निकम्मा करना।

वे इन सब बातों को याद करते-करते तड़प उठे और अन्त में टूटकर पड़ गए। उन्हें महसूस हुआ कि वे निर्जीव हो रहे हैं।

तभी फोन की घंटी बजी।

बड़े बाबू ने थकन से रिसीवर उठाया "हलो!"

"मैं पुलिस इन्सपेक्टर घोष बोल रहा हूं। क्या आपको छोटे बाबू की कोई सूचना मिली? हम अपनी ओर से अत्यन्त प्रयत्न कर रहे हैं।"

"हां-हां वे आ रहे हैं। आप तंग न करें।" वे अनायास कह उठे। अपना

था कि वे अत्यन्त आतंकित हो गए हैं।

उन्होंने रिसीवर रख दिया और अपने चेहरे पर आए पसीने को पोंछने लगे। वे प्रसन्न थे और उनकी आकृति पर गर्व की भावना नाच रही थी।

और सचमुच तीसरे दिन संतोष आ गया और उसने इतना ही कहा "मैं कुछ दिन आराम करना चाहता था इसलिए चुपचाप यहाँ से खिसक गया।"

बड़े बाबू उन दिनों कलकत्ता नहीं थे। वे बाहर चले गए थे। वे जानते थे कि सैकड़ों लोग उन्हें बधाई देने आएँगे और वे उनकी झूठी बधाइयों और अपने कृत्रिम सहानुभूतिपूर्ण उत्तरों से परेशान हो जाएँगे।

मैं और सीता उसे स्टेशन पर लेने गए थे।

वह मुझसे कुछ अधिक नहीं बोला। वह बहुत उदास था और उसके चेहरे पर सूनापन था।

मैं उसी रात संतोष के बंगले गया।

वह अपने दफ्तरों की फाइलों में व्यस्त था। उसके कमरे के बाहर कई व्यक्ति बैठे थे जो उससे मिलने को इच्छुक थे। यह अभिनय वह सिर्फ इसलिए कर रहा था कि लोग उसके बाहर जाने के पीछे किसी विशेष रहस्य को न समझें। इस तरह की कार्य-व्यस्तता उसके बड़प्पन की पुष्टि में सहायक ही सिद्ध हो रही थी।

मेरे आने की सूचना पाकर वह उठकर बाहर आया।

सभी उम्मीदवारों को उसने अभी जाने को कह दिया।

हम दोनों ने साथ-साथ भोजन किया। भोजन करते-करते मैंने पूछा "तुम भाभी से मिले?"

"नहीं।"

"तुम्हें उससे तुरन्त मिलना चाहिए।" मैंने सरल भाव से कहा "वह बहुत दुखी होगी। उसे अपने व्यवहार के लिए दुख है। और तुमने भी व्यर्थ ही

उसपर सन्देह किया। तुम्हारे चले जाने से उस बेचारी को हार्दिक कष्ट पहुंचा। मेरी समझ में नहीं आता कि तुमने अपने मस्तिष्क में इस प्रकार की भ्रांत निराधार धारणाएं बना कैसे लीं ?"

वह मूक रहा।

"अगर तुम नहीं आते तो सचमुच में नीता आत्महत्या कर लेती और तुम्हें एक अत्यन्त भोली अनपढ़ और जाहिल लड़की को अपनी पत्नी स्वीकार करना पड़ता जो तुम्हारे जीवन में जहर के सिवाय कुछ भी नहीं घोल सकती थी।"

वह इस बार भी चुप रहा।

'मुझे तुम्हें पाने के लिए रात-दिन एक करने पड़े। यह मेरा सौभाग्य ही समझो कि यहां के नौकर-चाकर मुझे बल देते रहे वर्ना मुझे यह पता कदापि नहीं लगता कि तुम्हें गायब करने में बड़े बाबू का हाथ था और वे यह भी जानते थे कि तुम कहां हो।

"मैं अपनी मर्जी से गायब हुआ था।"

"गलत !" मैंने तुरन्त कहा "नीता का उस लड़के से किसी तरह का अनुचित सम्बन्ध नहीं था और न है। मैंने इसकी पूरी जांच की है और तुम्हें बताए देता हूं कि तुमने उस लड़के और नीता के बारे में जो भी बातें सुनी हैं, वे निराधार हैं और बड़े बाबू के इशारों पर की गई थीं। नीता ने भी [illegible] संकेत पाकर तुम्हारा कठोर शब्दों में विरोध किया था। मैं खुद हैरान हूं कि आदमी इतना नीच कैसे हो सकता है। क्षमा करना मैंने तुम्हारे बाप के लिए अपमानसूचक शब्द का प्रयोग किया है। धन का लालच इस युग में मैंने कई आदमियों में देखा है और वे उसके लिए तरह-तरह की निम्न से निम्नतर तिकड़में भी करते हैं पर इस तरह की जलील तिकड़में सचमुच ही अत्यन्त निकृष्ट कोटि का आदमी ही कर सकता है। और मैंने उसे सारी बातें विस्तृत रूप से बताईं।

उसने भोजन करना छोड़ दिया। वह उठकर चला गया। ब्राह्मणी को यह अच्छा नहीं लगा और उसने मुझे घूरकर देखा जैसे उसकी भूखी-भूखी आंखें मुझे घृणा से देख रही हैं।

मुझे हैरानी हुई कि संतोष ने तुरन्त वापस आकर मुझसे कहा "अब तुम जा सकते हो अच्छा हो कि तुम मुझसे कुछ दिन मिलते रहो। अभी कुछ दिन मुझे तुम्हारी ज़रूरत है। मैं बहुत परेशान हूं परेशान।

मैं चला आया।

इसके बाद मैंने उससे कई बार पूछा कि तुम्हें यहां आने के लिए किसने मजबूर किया इसका उत्तर उसने मुझे नहीं दिया। कदाचित् उसे भय था कि इस सत्य को प्रमाणित रूप से बताकर वह अपने को मेरे कब्ज़े में कर देगा। पूंजीवादी युग का अविश्वास का रोग उसके प्रत्येक सदस्य में फैला हुआ है।

चौथे दिन बड़े बाबू आ गए।

दोनों बाप-बेटे आपस में बोले नहीं। बड़े बाबू को इससे बड़ा सदमा पहुंचा और इसके बाद वे बार-बार उन्मादग्रस्त प्राणी की तरह अपने कमरे में बैठे हुए बड़बड़ा उठते थे। आजकल उनका मन व्यापार में नहीं लगता था और उनकी यह इच्छा रहती थी कि वे संसार का सारा धन इकट्ठा करके अपने सामने रख लें और उसे देखते रहें। इस विचारमात्र से उनकी आंखों में लोमड़ी जैसी विचित्र धूर्तता और बन्दर जैसी चंचलता आ जाती थी और वे कुछ नोटों को हाथ में लेकर इस तरह देखने लगते थे जैसे कोई भक्ति-विह्वल होकर भगवान की मूर्ति को देखता है। वे घंटों अपने कमरे में बैठे रहते थे और समय-समय पर अपने व्यापारिक मामलों को सुलझाने के लिए जाया करते थे। उन्होंने कई बार यह प्रयास भी किया कि वे संतोष से मिलें। उसे व्यापारिक मामलों के ऐसे गुर बताएं जिसके द्वारा वह किसीसे भी मात न खाए पर संतोष ने उनसे एकान्त में बातचीत करने से साफ इन्कार कर दिया। जब कभी वे बुलाते थे तो वह उनकी ओर आदर-भरी नज़र से देखता भी नहीं था। वह सीधी गर्दन किए उनकी बातें इस तरह सुनता था जैसे कोई प्रभारी का प्रलाप सुन रहा हो। और एक दिन संतोष ने एक प्लास्टिक का कारखाना बेच दिया। जब यह खबर बड़े बाबू को मिली तब वे पागलों की तरह चिल्ला पड़े, "सचमुच यह मेरी औलाद नहीं है। उसमें मेरा खून हो ही नहीं सकता। मैं उसे बर्बाद कर दूंगा। उसे सारी सम्पत्ति से वंचित कर दूंगा।" लेकिन वे कुछ भी नहीं कर

सके। वे यह जानते थे कि उन्होंने ही इन्कमटैक्स से बचने के लिए कई कंपनियों का मालिक उसे बना दिया है और उनमें से अब वह एक भी कम्पनी को छोड़ने को तैयार नहीं है। यहां तक कि वह उनके बारे में उनकी बहुमूल्य सलाह की भी जरूरत नहीं समझता था। तब वे कराह उठते और बर्फों से उपेक्षित व्यक्ति की तरह टूट जाते।

बड़े बाबू कुछ दिन से बीमार थे।

उन्हें निमोनिया हो गया था। कुछ दिन उनकी हालत चिंताजनक रही। तेज बुखार में वे बार-बार चिल्ला पड़ते थे "मेरी योजना पूरी हो जाती तो मैं एक कम्पनी और खरीद लेता मैं सारा पैसा इकट्ठा कर लेता। द्वारकानाथ! मुझे मरने के पहले सबसे बड़ा धनवान बना दे।"

उनकी चिंताजनक हालत पर संतोष कई बार आया। मुझे लगा कि धीरे धीरे वह भी अपने बाप की तरह निष्ठुर और पैसों पर केन्द्रित हो रहा है और उसकी आंखों में भी वही स्थिरता दिखलाई पड़ने लगी है जो कुछ और मंजे हुए व्यापारियों की आंखों में चमकती रहती है। वह आजकल उतना ही व्यस्त रहता है जितना कुछ दिन पूर्व उसका बाप रहता था। जीवन के अन्य पक्षों के प्रति वह इतना ही उदासीन है जितना उसका बाप।

वह बाप की रुग्णावस्था में बार-बार नये-नये दस्तावेज बनाता और उन्हें उनपर दस्तखत करने के लिए विवश करता। बूढ़ा तब भयानक चीख के साथ चिल्लाता और कहता "मैं जानता हूं कि तुम मेरी सारी सम्पत्ति हड़प जाना चाहते हो। मुझे दिवालिया करना चाहते हो पर मैं इसपर दस्तखत नहीं करूंगा। निकल जाओ यहां से!"

मैं आपको एक बात और बताना भूल गया हूं कि बड़े बाबू को उस रोग में दो नये रोग और लिए थे। पहला वे बहरे हो गए थे और दूसरा उनकी एक टांग में इतना भयानक दर्द रहता था कि वे चल-फिर नहीं सकते थे।

संतोष उनके पास बार-बार आता था तब वे पागलों की तरह चीखते थे और उसे लुटेरा तक कह देते थे पर संतोष उनके कथन का जरा भी बुरा नहीं मानता था। उसके होंठों पर वैसी ही निष्ठुर मुस्कान नाचती रहती थी। वह

संकेत में कुछ कहता और बड़े बाबू अन्त में मजबूर कैदी की तरह दस्तावेजों पर दस्तखत कर देते थे।

मुझे यहाँ रहते लगभग अब एक वर्ष होने आ रहा था। संतोष चाहता था कि मैं उसके यहाँ ही रहूं और मैंने एक बार यह निश्चय भी किया कि मैं यहीं पर रहूंगा। मैंने एक मासिक पत्र की योजना भी बनाई जिसके लिए संतोष से धन की स्वीकृति भी मिल गई।

मैं बीच-बीच में नीता से भी मिला करता था। उच्च वर्ग के दम्पतियों की तरह उसका जीवन था अर्थात् स्त्रियों को कुछ भी काम नहीं है और पुरुषों के पास फालतू समय नहीं है। कभी-कभी राजा की अनेक रानियों की तरह उनके प्रणय की रात्रि आती है तब वे प्रफुल्लता से बिमार हो जाती हैं।

एक दिन मैं बड़े बाबू के पास गया।

बाड़ी में घुसते ही मुझे सम्पत की याद आ गई।

मैं उसके पास गया। वह मुझे देखते ही पुलक उठा। उल्लास से चीखता हुआ बोला "कृष्ण बाबू! ओह! मुझे इधर आपकी याद बहुत सता रही थी। मैं अपनी बात कहने के लिए उतना आतुर था जितना स्वाती-बूंद के लिए पपीहा। बैठिए।"

मैं चुपचाप बैठ गया।

वह इधर-उधर देखता हुआ बोला "मैंने एक दिन कहा था न बड़े बाबू का बड़ा भयानक अन्त होगा। मेरी वाणी प्रभु की वाणी की तरह सत्य हो रही है। आज वे एक कमरे में बन्द कैदी की तरह चीखते रहते हैं। मैं आपको कहता हूं कि इनकी मृत्यु भी सुगम नहीं होगी।"

मैं शांत रहा।

"मैं कभी-कभी उनके पास जाता हूं। ऐसी दशा में भी वे ईश्वर का नाम नहीं लेते बल्कि रुपयों की बात करते हैं। वाकई ऐसा लालची भी मैंने नहीं देखा। फिर भी मैं खुश हूं। क्योंकि मेरे दुश्मन को प्रभु ने खूब दंड दिया है। आह! जब इनकी अर्थी निकलेगी तब मैं उसके पीछे इस थैली के सारे रुपयों को उछाल दूंगा ताकि बड़े बाबू की आत्मा शांति पाए।"

मेरा दम घुटने लगा।

मैंने बड़े बाबू के कमरे में प्रवेश किया। कमरे में नीरवता छाई हुई थी। नीरवता के साथ धुंधलका।

शय्या पर सफ़ेद चादर बिछी थी और सफ़ेद चादर ओढ़ हुए पड़े थे बड़े बाबू जैसे कोई निर्जीव मुर्दा दफ़नाने के लिए रखा हुआ हो। मैं सिहर गया। स्तब्ध सा खड़ा रहा।

महाराज ने कमरे में प्रवेश किया।

मैंने उससे पूछा "छोटे बाबू और बहूजी यहां दिन में कितनी बार आते हैं?"

महाराज ने स्पष्ट शब्दों में कहा "यहां वे पांच-सात रोज़ में एक बार आते हैं। बाबू सा! पैसवालों का संसार सबसे अलग होता है। सारा धन अब छोटे बाबू के नाम हो गया है न अब इस बूढ़े की किसे दरकार है?" उसका गला अवरुद्ध हो गया।

तभी बड़े बाबू ने आंखें खोलीं।

महाराज ने उनके पास जाकर अत्यन्त ज़ोर से कहा "मुन्न बाबू आए हैं!"

बड़े बाबू ने धीमे से करवट बदली। उनका मुख देखकर मुझे आघात पहुंचा। वह प्रचंड मुख और प्रभावशाली व्यक्तित्व जिसे देखकर आदमी नख से शिर तक दहल जाता था वह अब मुरझा गया है और उस कांतिहीन मुख पर करुणा का सागर लहरा रहा है।

उन्होंने धुंधली-धुंधली आंखों से देखा और वे हठात उठ बैठे। उनके चेहरे की सफ़ेदी बढ़ने लगी और आंखों की करुणा कठोरता में परिवर्तित होने लगी। मैंने समझा कि उनको पहले की तरह ही क्रोध के दौरे पड़ते होंगे सो मैं उन्हें पकड़ने के लिए आगे बढ़ा। मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि कहीं वे पलंग पर से लुढ़क न जाएं किन्तु उन्होंने मुझे बुरी तरह से धक्का दिया। मैं दीवार से जा टकराया। मुझे आश्चर्य हो रहा था कि उनमें अभी इतनी शक्ति कहां से आ गई है? कदाचित् युद्ध के सिपाही इसी हिंसक क्रोध के बल पर इतने दुस्साहस से लड़ते हैं।

मैं हतप्रभ-सा खड़ा रहा।

वे अपने अपने दांतों से निचले होंठों को भींचते हुए कांपते स्वर में बोले "तुम यहां क्यों आए हो? मैं तुम्हें इस घर में खड़ा हुआ नहीं देख सकता। तुम मेरे असली दुश्मन हो। तुमने ही मुझे ऐसी हालत में पहुंचाया है। मुझसे मेरा सारा धन छीना है। याद रखना—मैं परलोक म भी तुमसे इसका बदला लूंगा। मैं तुम्हें माफ नहीं कर सकता। नहीं कर सकता। उनकी जबान लड़खड़ाने लगी पर अन्तस् का क्रोध उमड़ रहा था "तुम्हारे कारण मेरा बेटा मुझसे सब छीनकर ले गया। वह मेरा दुश्मन बन गया। वह मुझसे घृणा करता है पर मैं भी उसे प्यार नहीं करता। क्या तुम समझते हो कि वह मेरा धन बचा लेगा? नहीं-नहीं-नहीं! मैं उसे परलोक में नहीं छोड़ूंगा। उसे मेरा पावना देना ही पड़ेगा। अन्यथा मैं अपने रोने से देवता के स्वर्ग को हिला दूंगा। क्योंकि आज मेरा बेटा जिस प्रतिष्ठा पर आसीन है उसके पास जितना भी पैसा है, वह सब मेरी बदौलत है। मेरी मेहनत का फल है। वह तो एक राजा के दुष्ट और कमीन बेटे की तरह असमय ही सिंहासन का स्वामी बन गया है और मेरी संचित पूंजी को सिगरेट के धुएं की तरह उड़ा रहा है।"

बड़े बाबू को खांसी आ गई। मैं कुछ देर तक स्तंभित-सा खड़ा रहा। बाद में मुझे ऐसा लगा कि शायद बड़े बाबू का मानसिक संतुलन बिगड़ गया है।

खांसी रुकते ही वे पुनः हकलाते हुए बोले, "तुम यहां से चले जाओ वर्ना मेरी सांस सदा-सदा के लिए टूट जाएगी। मुझे तुम यमदूत की तरह भयंकर लगते हो क्योंकि तुम्हारे ही कारण मैं बेवक्त ही मरने जा रहा हूं। जाओ, निकल जाओ!" क्षण-भर रुककर वे बोले, "अगर मुझे यह मालूम होता कि तुम इतने खतरनाक हो तो मैं तुम्हें गोली से उड़वा देता और बाद में संसार का सारा रुपया इकट्ठा कर लेता।"

बूढ़े की आंखों में सांप की आंखों जैसी चमक थी।

मैं चला आया और सीधा संतोष से मिला। मैंने उससे कहा "कुछ भी हो तुम्हें ऐसी दशा में अपने पिता के पास रहना चाहिए। ऐसी गंभीर स्थिति में तुम लोगों का अलगाव न्यायसंगत नहीं है।"

"तुम्हारी भावुकता अभी तक नहीं गई है। वे हमें लेकर काफी शोरगुल मचाते हैं। और डाक्टर ने हमें हिदायत दी है कि उन्हें जितनी शांति दी जाएगी, वे उतनी ही देर से मरेंगे।

जब संतोष ये बातें कह रहा था तब उसके चेहरे पर तनिक कोमलता और करुणा भी थी। यह बाप के मरने की बात गुब्बारे की तरह मुझे सुना रहा था। मैं यह नहीं सह सका। मुझे लगा कि संतोष बदल गया है और कल वह अपने बाप की तरह जीवन के अन्य आयामों से विरक्त और निरपेक्ष होकर केवल पैसे को सर्वोपरि मानने लग जाएगा। उसका कोई अपना विशिष्ट महत्व नहीं होगा। पैसा ही उसका प्रभु और धर्म बन जाएगा।

और एक दिन मैं उससे बिना कुछ कहे ही भाभी से मिलकर चला आया। भाभी ने कारण पूछा मैंने कहा मैं ऐसी तीव्र गति से संचालित भौतिक दुनिया में नहीं रह सकता। यहाँ की आदमियों की दौड़ का मैं कायल नहीं हूँ। मैं उसी दौड़ में खुब तेज दौड़ सकता हूँ जिसमें मानवीयता की रक्षा का ध्येय हो। यहाँ की भीड़ में बहुत पीछे रह जाऊँगा।" भाभी ने संतोष को मेरे जाने के बारे में कहा। संतोष का उलाहना भरा एक पत्र आया था। उसके बाद कोई भी पत्र नहीं आया। आज मुझे पुनः अपने संवाददाता के पद पर काम करते एक वर्ष हो रहा है। सुना है संतोष को एम० पी० का टिकट भी मिल गया है।

० ० ०